



# किताब-ए- मीरदाद

**RadhaSoamiSakhi.org**

साइंस ऑफ़ द सोल रिसर्च सेंटर

मिखाइल नईमी का जन्म सन् 1889 ईस्वी में मध्य-पूर्व के देश लेबनान में समुद्र-तट के निकट, ऊँचे पहाड़ की ढलान पर बसे एक गाँव के एक निर्धन यूनानी ईसाई परिवार में हुआ जो मुख्य रूप से कृषि पर निर्भर था। स्कूल की सबसे ऊँची कक्षा का सर्वश्रेष्ठ छात्र होने के फलस्वरूप छात्रवृत्ति पाकर उन्होंने सन् 1906 से 1911 तक पाँच वर्ष रूस में शिक्षा प्राप्त की, और फिर कुछ मास लेबनान में बिताने के बाद संयोगवश उनको आगे पढ़ने के लिये अमेरिका जाने का अवसर मिला। वहाँ उनका अपने ही देश के एक प्रमुख लेखक खलील जिब्रान से परिचय हुआ, जिनके साथ मिलकर उन्होंने अपनी मातृभाषा अरबी के साहित्य को नव-जीवन प्रदान करने के लिये एक गतिशील आन्दोलन का सूत्रपात तथा संचालन किया। सन् 1932 में नईमी स्वदेश लौट आये और अपना शेष जीवन उन्होंने वहीं बिताया। सन् 1988 में उनका देहान्त हो गया।

‘द बुक ऑफ़ मीरदाद’ नईमी ने 1946-47 में लिखी और फिर स्वयं ही अरबी में उसका अनुवाद किया। मूल अंग्रेज़ी पुस्तक पहली बार 1948 में लेबनान की राजधानी बेरूत में प्रकाशित हुई और इसके अरबी अनुवाद का भी 1952 में वहीं प्रकाशन हुआ।

पश्चिम के पाठकों में मिखाइल नईमी की दो दर्जन से अधिक पुस्तकों में से इसे सबसे अधिक स्नेहपूर्ण स्थान प्राप्त है, और नईमी स्वयं भी इसको अपनी सर्वोत्तम रचना मानते थे।



# किताब-ए-मीरदाद

किसी समय 'नौका' के नाम से पुकारे जानेवाले  
मठ की अद्भुत कथा

मिखाइल नईमी  
की अंग्रेज़ी पुस्तक  
'द बुक ऑफ़ मीरदाद'

का  
हिन्दी अनुवाद:  
डा. प्रेम मोहिन्द्रा  
आर. सी. बहल

साइंस ऑफ़ द सोल रिसर्च सेंटर

प्रकाशक:

जी. पी. एस. भल्ला, सेक्रेटरी  
साइंस ऑफ़ द सोल रिसर्च सेंटर  
राधास्वामी सत्संग ब्यास  
5 गुरु रविदास मार्ग, पूसा रोड  
नई दिल्ली 110 005, भारत

© 2008 साइंस ऑफ़ द सोल रिसर्च सेंटर  
सर्वाधिकार सुरक्षित

पाँचवां संस्करण 2008

मुद्रक: रैप्लिका प्रैस प्राइवेट लिमिटेड

Published by:

G. P. S. Bhalla, Secretary  
Science of the Soul Research Centre  
c/o Radha Soami Satsang Beas  
5 Guru Ravi Dass Marg, Pusa Road  
New Delhi 110 005, India

© 2008 Science of the Soul Research Centre  
All rights reserved

Fifth edition 2008

15 14 13 12 11 10 09 08      8 7 6 5 4 3 2 1

ISBN 978-81-901731-7-9

Printed in India by: Replika Press Pvt. Ltd.

## विषय-सूची

बन्दी महन्त	9
चकमकी ढलान	15
किताब का रखवाला	29
1. मीरदाद अपना पर्दा हटाता है	47
2. सिरजनहार शब्द	51
3. पावन त्रिपुटी	56
4. मनुष्य—पोतड़ों में लिपटा परमात्मा	58
5. कुठालियाँ और चलनियाँ	60
6. स्वामी और सेवक	65
7. मिकेयन और नरौंदा	68
8. सात साथी मीरदाद से मिलते हैं	74
9. पीड़ा-मुक्त जीवन का मार्ग	79
10. निर्णय तथा निर्णय-दिवस	81
11. प्रेम प्रभु का विधान है	86
12. सिरजनहार मौन	95
13. प्रार्थना	99
14. मनुष्य के काल-मुक्त जन्म पर	106
15. मीरदाद को नौका से निकालने का प्रयत्न	111
16. लेनदार और देनदार	116
17. शमदाम रिश्वत का सहारा लेता है	121
18. हिम्बल के पिता की मृत्यु	123



19. तर्क और विश्वास	130
20. मरने के बाद हम कहाँ जाते हैं ?	134
21. पवित्र प्रभु-इच्छा	137
22. मीरदाद ज़मोरा को भार से मुक्त करता है	143
23. मीरदाद सिम-सिम को स्वस्थ करता है	151
24. खाने के लिये मारना क्या उचित है ?	157
25. अंगूर-बेल का दिवस	162
26. यात्रियों को मीरदाद उपदेश देता है	166
27. सत्य का उपदेश क्या सबको दिया जाना चाहिये	177
28. बेसार का सुलतान शमदाम के साथ आता है	183
29. साथियों को साथ मिलाने का शमदाम का प्रयत्न	193
30. मुर्शिद मिकेयन का स्वप्न सुनाते हैं	202
31. निज-घर के लिये महाविरह	207
32. पाप और आवरण	213
33. रात्रि—अनुपम गायिका	223
34. माँ-अण्डाणु	233
35. परमात्मा की राह पर प्रकाश-कण	240
36. नौका-दिवस	247
37. मुर्शिद लोगों को चेतावनी देते हैं	252

अन्य प्रकाशन

263

# किताब की कहानी





## बन्दी महन्त

दूधिया पर्वत-माला के ऊँचे शिखर पर, जो पूजा-शिखर के नाम से जाना जाता है, एक मठ के विशाल और उदास खण्डहर हैं। यह मठ किसी समय 'नूह की नौका' के नाम से प्रसिद्ध था। परम्परा के अनुसार इसकी प्राचीनता पौराणिक जल-प्रलय के साथ जुड़ी हुई है।

पूजा-शिखर की छाँह में मुझे एक गर्मी का मौसम बिताने का अवसर मिला। मैंने पाया कि इस नौका के साथ अनेक लोक-कथाओं के ताने तन गये हैं। परन्तु जो कथा स्थानीय पर्वत-निवासियों की ज़बान पर सबसे ज्यादा चढ़ी हुई थी, वह इस प्रकार है:

महान जल-प्रलय के कई वर्ष बाद हज़रत नूह अपने परिवार और उसमें हुई वृद्धि के साथ घूमते-घूमते दूधिया पर्वत-माला में पहुँचे। यहाँ उन्हें उपजाऊ घाटियाँ, जल से भरपूर सोते तथा सुखद जलवायु मिला। उन्होंने यहीं बस जाने का निर्णय किया।

जब हज़रत नूह को लगा कि उनके जीवन के दिन थोड़े ही रह गये हैं तो उन्होंने अपने पुत्र सैम को बुलाया। सैम उन्हीं की तरह अनोखे स्वप्न देखने वाला दिव्यदर्शी पुरुष था। उन्होंने उससे कहा:

“देखो पुत्र, तुम्हारे पिता की आयु की फ़सल भरपूर रही है। अब उसकी अन्तिम पूली दराँती के लिये तैयार है। तुम और तुम्हारे भाई, तथा तुम्हारे बच्चे और तुम्हारे बच्चों के बच्चे शोकग्रस्त वीरान धरती को फिर से आबाद करेंगे, और परमात्मा द्वारा मुझे दिए गये वचन के अनुसार तुम्हारी सन्तान समुद्र-तट पर फैले रेत के कणों की तरह अनगिनत होगी।

“फिर भी मेरे टिमटिमाते जीवन के अन्तिम दिनों पर एक भय छाया हुआ है कि समय के साथ लोग उस जल-प्रलय को और उन वासनाओं

और दुराचारों को भूल जायेंगे जिनके कारण वह प्रलय आया था। वे भूल जायेंगे नौका को और उस विश्वास को भी जिसने एक सौ पचास दिन तक प्रतिशोधपूर्ण सागर की प्रचण्ड लहरों पर नौका को अजेय रखा था। न ही वे उस नव-जीवन को याद रखेंगे जिसको विश्वास ने जन्म दिया था और जिसके फलस्वरूप वे इस जगत् में आयेंगे।\*

“कहीं वे भूल न जायें, इसलिये, मेरे बेटे, तुम्हें इस पर्वत की सबसे ऊँची चोटी पर एक वेदी बनाने का आदेश देता हूँ। यह चोटी अब से पूजा-शिखर के नाम से जानी जायेगी। मैं यह भी आदेश देता हूँ कि उस वेदी के चारों ओर एक भवन का निर्माण करना जो हर प्रकार से उस नौका के सदृश तो हो, परन्तु आकार में उससे काफ़ी छोटा हो। वह भवन ‘नूह की नौका’ कहलायेगा।

“मेरी इच्छा है कि उस वेदी पर मैं अपनी अन्तिम कृतज्ञतापूर्ण प्रार्थना करूँ। मेरा आदेश है कि जिस अग्नि को मैं उस वेदी पर प्रज्वलित करूँगा उसे अखण्ड ज्योति के रूप में निरन्तर जलती रखना। जहाँ तक उस भवन का प्रश्न है, उसका उपयोग चुने हुए व्यक्तियों की छोटी-सी बिरादरी के लिये एक आश्रम के रूप में करना। उस बिरादरी के सदस्य न कभी नौ से अधिक होंगे और न ही कभी नौ से कम। वे ‘नौका के साथी’ कहलायेंगे। जब भी उनमें से किसी साथी का देहान्त होगा, प्रभु उसका स्थान लेने के लिये तुरन्त किसी दूसरे व्यक्ति को भेज देगा। वे आश्रम को छोड़कर कहीं नहीं जायेंगे, बल्कि अपना पूरा जीवन उसी के अन्दर एकान्तवास में बितायेंगे। वे ‘माँ-नौका’ के व्रतों का पूरा पालन करेंगे, विश्वास की ज्योति जलाये रखेंगे और अपने तथा समस्त मानव-परिवार के पथ-प्रदर्शन के लिये परमात्मा से प्रार्थना करते रहेंगे। उनकी शारीरिक आवश्यकताएँ श्रद्धालुओं के दान से पूरी होती रहेंगी।”

सैम ने, जो अपने पिता के एक-एक शब्द को बड़े ध्यान से सुन रहा था, हज़रत नूह को टोककर पूछा कि नौ की संख्या ही क्यों रखी गई है,

\* यह विवरण बाइबल (जैनिस्ज, 6-9) पर आधारित है।

कम या ज्यादा क्यों नहीं? और आयु के भार से दबे कुलपिता ने उसे समझाते हुए कहा:

“मेरे पुत्र, जो व्यक्ति नौका में सवार थे उनकी संख्या नौ ही थी।”

परन्तु जब सैम ने गिनती की तो आठ से आगे न बढ़ पाया: उसके पिता और माता, वह खुद और उसकी पत्नी तथा उसके दो भाई और उनकी पत्नियाँ। इसलिये पिता के शब्दों ने उसे बड़े विस्मय में डाल दिया। अपने पुत्र को विस्मित देखकर हज़रत नूह ने आगे स्पष्ट किया:

“देखो बेटा, मैं तुम पर एक गहरे भेद की बात प्रकट करता हूँ। नौवाँ व्यक्ति गुप्त रूप से नौका पर चढ़ा था; उसे केवल मैं जानता था और केवल मैंने ही उसे देखा था। वह निरन्तर मेरे साथ रहता था और मेरा कर्णधार था। उसके विषय में मुझसे और कुछ मत पूछना; पर अपने आश्रम में उसके लिये जगह रखना मत भूलना। सैम, मेरे बेटे, यह मेरी इच्छा है। इसे अवश्य पूरी करना।”

और सैम ने वह सब किया जिसका उसके पिता ने उसे आदेश दिया था।

जब हज़रत नूह अपने पूर्वजों से जा मिले तो उनके बच्चों ने उनके मृत शरीर को नौका की वेदी के नीचे दफ़ना दिया। उसके बाद युगों तक यह नौका, व्यावहारिक रूप में और सच्चे अर्थों में, वैसा ही आश्रम बनी रही जिसकी जल-प्रलय के माननीय विजेता ने कल्पना की थी और जिसके निर्माण के लिये उन्होंने आदेश दिया था।

परन्तु जैसे-जैसे सदियाँ बीतती गईं, नूह की नौका ने धीरे-धीरे अपनी आवश्यकताओं से कहीं अधिक दान श्रद्धालुओं से स्वीकार करना शुरू कर दिया। फलस्वरूप भूमि, सोने-चाँदी और जवाहरात की दृष्टि से नौका प्रतिवर्ष अधिक सम्पन्न होती चली गई।

कुछ पीढ़ियाँ पहले जब नौ साथियों में से एक की मृत्यु हुई ही थी, एक अजनबी नौका के द्वार पर आया और उसने विनती की कि उसे बिरादरी में शामिल कर लिया जाये। नौका की पुरातन परम्परा के अनुसार, जिसका कभी उल्लंघन नहीं किया गया था, उस अजनबी को तुरन्त स्वीकार कर लिया जाना चाहिये था, क्योंकि वह एक साथी की मृत्यु



के तुरन्त बाद आनेवाला पहला व्यक्ति था जिसने बिरादरी में शामिल किये जाने की विनती की थी। परन्तु संयोग से उस समय नौका का महन्त, जो मुखिया कहलाता था, एक हठी, दुनियादार तथा कठोर-हृदय व्यक्ति था। उसे अजनबी की सूरत न सुहाई, जो वस्त्रहीन तथा भूख का मारा था और जिसका शरीर घावों से भरा हुआ था। मुखिया ने उससे कह दिया कि तू इस योग्य नहीं कि तुझे बिरादरी में शामिल किया जाये।

अजनबी ने शामिल किये जाने के लिये बहुत आग्रह किया और उसके इस आग्रह से मुखिया को इतना क्रोध आ गया कि उसने हुक्म दिया कि इसी क्षण यहाँ से चला जा। परन्तु अजनबी अपनी बात मनवाने का यत्न करता रहा और किसी भी तरह जाने के लिये राज़ी न हुआ। अन्त में उसने मुखिया को मना लिया कि वह उसे एक नौकर के रूप में रख ले।

उसके बाद मुखिया बहुत समय तक प्रतीक्षा करता रहा कि दिवंगत साथी के स्थान पर प्रभु किसी दूसरे को भेज दे। पर कोई नहीं आया। इस प्रकार नौका के इतिहास में पहली बार आठ साथी और एक नौकर नौका में रहने लगे।

सात वर्ष बीत गये। मठ इतना धनवान् हो गया कि कोई उसकी विपुल सम्पदा का अनुमान नहीं लगा सकता था। चारों ओर मीलों तक फैले गाँव और ज़मीनें उसकी सम्पत्ति बन गये थे। मुखिया बहुत प्रसन्न था, और यह सोच कर कि अजनबी नौका के लिये भाग्यशाली सिद्ध हुआ है उसके साथ अच्छा व्यवहार करने लगा।

परन्तु आठवें वर्ष के आरम्भ होते ही स्थिति तेज़ी से बदलने लगी। अभी तक शान्त चली आ रही बिरादरी में खलबली मच गई। चतुर मुखिया ने तुरन्त ताड़ लिया कि अजनबी ही इसका कारण है, और उसने अजनबी को नौका से निकाल देने का निश्चय किया। लेकिन अफ़सोस, बहुत देर हो चुकी थी। अजनबी के नेतृत्व में साथी अब किसी नियम या तर्क को मानने के लिये तैयार न थे। दो ही वर्षों में उन्होंने आश्रम की सारी चल और अचल सम्पत्ति बाँट दी। मठ के असंख्य लगानदारों को उन्होंने ज़मीनों का मालिक बना दिया। तीसरे वर्ष वे मठ को छोड़कर चले गए। और

इससे भी अधिक दिल दहला देनेवाली बात यह हुई कि उस अजनबी ने मुखिया को शाप दे दिया जिसके परिणामस्वरूप वह आज तक मठ की भूमि के साथ बँधा हुआ है और बोलने में असमर्थ है।

इस प्रकार प्रचलित है लोक-कथा।

ऐसे प्रत्यक्षदर्शी गवाहों की कोई कमी नहीं थी जिन्होंने मुझे विश्वास दिलाया कि कितनी ही बार—कभी दिन में तो कभी रात में—उन्होंने मुखिया को उजाड़ और अब काफ़ी हद तक खण्डहर बन चुके मठ के मैदानों में भटकते देखा है। परन्तु ऐसा कोई नहीं था जो उसके मुख से एक शब्द भी बुलवा सका हो। बल्कि जब भी वह किसी पुरुष या स्त्री की उपस्थिति महसूस करता तो तेज़ी के साथ न जाने कहाँ गायब हो जाता था।

मुझे मानना होगा कि इस कथा ने मेरे मन का चैन छीन लिया। पूजा-शिखर जैसे सुनसान पर्वत पर इतने पुरातन आश्रम के आँगन में तथा आस-पास वर्षों से भटकते हुए एकाकी महन्त—अथवा उसकी छाया-मात्र—की कल्पना एक ऐसा हठपूर्वक पीछा करनेवाला दृश्य था कि उससे छुटकारा पाना असम्भव था। वह मेरी आँखों में ररकने लगा; वह मेरे विचारों पर आघात करने लगा; वह मेरे रक्त को उत्तेजित करने लगा; वह मेरे हाड़-मांस को बेधने लगा।

आखिर मैंने फ़ैसला किया, मैं पर्वत पर अवश्य चढ़ूँगा।

## चकमकी ढलान

पश्चिम दिशा में समुद्र की ओर मुख किये और उससे कई हजार फुट ऊँचा पूजा-शिखर था, जिसका विस्तीर्ण, उन्नत, पथरीला और दुर्गम रूप दूर से ही चुनौतीपूर्ण और भयावह प्रतीत होता था। उस पर जाने के लिये मुझे दो मार्ग बताये गए जो काफी हद तक खतरे से खाली थे। दोनों ही मार्ग घुमावदार और सँकरे थे तथा अनेक खड़ी चट्टानों की कगार पर बल खाते हुए जाते थे—एक था दक्षिण की ओर से, दूसरा उत्तर की ओर से। मैंने तय किया कि उन दोनों में से कोई भी मार्ग नहीं अपनाऊँगा। दोनों के बीच में, शिखर से सीधे नीचे उतरती तथा पर्वत की लगभग तलहटी तक पहुँचती एक सँकरी, समतल ढलान दिखाई दी। यह मुझे शिखर पर जाने के लिये राजमार्ग—सी प्रतीत हुई। इसने मुझे एक रहस्यमयी शक्ति के साथ आकर्षित किया, और मैंने निश्चय कर लिया कि यही मेरा मार्ग होगा।

जब मैंने अपना निश्चय एक स्थानीय पर्वतारोही को बताया तो उसने दो दहकते नेत्रों से मुझे जड़-सा कर दिया, और हाथ पर हाथ मारता हुआ आतंकित स्वर में बोल उठा:

“चकमकी ढलान? अपने प्राणों को इतने सस्ते में गँवाने की मूर्खता मत कर। तुझसे पहले कई इस रास्ते से चढ़ने की कोशिश कर चुके हैं, पर कोई भी आज तक आप-बीती सुनाने नहीं लौटा। चकमकी ढलान? कभी नहीं, कभी नहीं।”

उसने पर्वत पर चढ़ने में मेरा पथ-प्रदर्शन करने का आग्रह भी किया; परन्तु मैंने नम्रतापूर्वक उसकी सहायता लेने से इनकार कर दिया। मैं बता नहीं सकता कि उसके आतंकित होने का मुझ पर उलटा ही प्रभाव क्यों



पड़ा। रोकने के बजाय उसके भय ने मुझे और उकसाया तथा मेरे निश्चय को पहले से भी अधिक दृढ़ कर दिया।

एक दिन सवेरे, जब अन्धकार झुटपुटे में से निकलकर प्रकाश में बदल रहा था, मैंने रात के सपनों को अपनी पलकों पर से झटक दिया, अपनी लाठी उठाई, सात रोटियाँ साथ लीं और चकमकी ढलान की ओर चल पड़ा। मृतप्राय रात्रि के मन्द-मन्द श्वास, जन्म ले रहे दिवस की तेज धड़कन, बन्दी महन्त के रहस्य का सामना करने की मन को कचोटती हुई उत्सुकता, और अपने आपको अपने आपसे—चाहे क्षणमात्र को ही सही—मुक्त कर पाने की उससे भी कहीं अधिक कचोटती हुई उत्कण्ठा, इन सबने मानो मेरे पैरों में पंख लगा दिये थे, मेरे रक्त में स्फूर्ति का संचार कर दिया था।

हृदय में संगीत और आत्मा में दृढ़ निश्चय लिये मैंने अपनी यात्रा शुरू कर दी। परन्तु एक लम्बे और उल्लासपूर्ण सफ़र के बाद जब मैं ढलान के निचले सिरे पर पहुँचा और अपनी आँखों से उसकी ऊँचाई को नापने की कोशिश की, तो मेरा गीत मेरे कण्ठ में अटक कर रह गया। जो मार्ग-तल मुझे दूर से सीधा, सपाट और सँकरा दिखाई देता था, वही अब मेरे सामने था—चौड़ा, कठिन चढ़ाई वाला, ऊँचा और अजेय। ऊपर और दायें-बायें, जहाँ तक भी मेरी दृष्टि पहुँच सकती थी, चकमक पत्थर के विविध आकारों तथा रूपों वाले टुकड़ों के अतिरिक्त कुछ भी दिखाई नहीं दे रहा था; छोटे से छोटे टुकड़े तो पैनी सूई या धार किये चाकू जैसे थे। जीवन का कहीं कोई चिह्न तक न था। पूरे दृश्य पर दूर-दूर तक उदासी का एक ऐसा कफ़न फैला हुआ था कि रूह कँपकँपा उठती थी। शिखर की तो झलक तक दिखाई नहीं दे रही थी। फिर भी मैं हिम्मत हारने को तैयार नहीं था।

जिस नेक पुरुष ने मुझे ढलान पर चढ़ने के विरुद्ध चेतावनी दी थी, उसके दहकते नेत्र अभी तक मेरे चेहरे को तप्त कर रहे थे, पर मैंने अपने निश्चय को बटोरा और चढ़ना शुरू कर दिया। लेकिन शीघ्र ही मैंने स्पष्ट अनुभव किया कि केवल अपने पैरों के बल पर मैं ज़्यादा दूर नहीं जा

सकूँगा; क्योंकि चकमक पत्थर के टुकड़े मेरे पैरों के नीचे से लगातार फिसलते जा रहे थे और ऐसी भयानक आवाज़ पैदा कर रहे थे मानो मौत के शिकंजे में फँसकर कठिनाई से साँस ले रहे लाखों कण्ठों से निकलता सम्मिलित क्रन्दन हो। थोड़ा-सा भी आगे बढ़ने के लिये मुझे अपने हाथों और घुटनों को, पैरों की अँगुलियों तक को, चकमक की फिसलती हुई कंकड़ियों में गड़ाना पड़ता था। उस समय मेरे मन में कितनी प्रबल इच्छा उठ रही थी कि मुझमें बकरियों जैसा फुर्तीलापन होता!

बिना विश्राम किये मैं एक कीड़े की तरह टेढ़ा-मेढ़ा ऊपर को रेंगता गया, क्योंकि मुझे अब डर लगने लगा था कि मेरे मंज़िल पर पहुँचने से पहले ही रात कहीं मुझे घेर न ले। वापस लौटने का विचार तो मेरे मन से कोसों दूर था।

दिन प्रायः समाप्ति पर था; तभी अचानक मुझे अत्यधिक भूख महसूस हुई। तब तक मुझे कुछ खाने या पीने का खयाल ही नहीं आया था। जो रोटियाँ मैंने रूमाल में लपेटकर अपनी कमर से बाँध रखी थीं, वे उस समय निःसन्देह इतनी क्रीमती थीं कि उनका मोल नहीं आँका जा सकता था। मैं रूमाल खोलकर रोटी का पहला ग्रास तोड़ने ही लगा था कि एक घण्टी की खनक और एक ऐसी आवाज़ जो बाँसुरी के पीड़ा-भरे स्वर जैसी प्रतीत होती थी मेरे कानों में पड़ी। नुकीले चकमकों के उजाड़ में इससे बढ़कर चौंका देनेवाली बात और क्या हो सकती थी!

अगले ही क्षण अपनी दाहिनी ओर की एक चट्टान की लम्बी सँकरी चोटी पर मुझे एक दीर्घकाय काला बकरा दिखाई दिया जिसके गले में घण्टी लटक रही थी और जो बकरियों की टोली का अगुआ था। इससे पहले कि मैं सँभलता, बकरियों ने मुझे चारों ओर से घेर लिया। उनके पैरों के नीचे से चकमक उसी प्रकार शोर करते हुए गिर रहे थे जैसे मेरे पैरों के नीचे से, पर उनकी आवाज़ उतनी भयावह नहीं थी। काले बकरे की अगुआई में बकरियाँ मेरी रोटियों पर इस प्रकार झपटीं मानो उन्हें न्योता दिया गया हो, और वे मेरे हाथों से रोटियाँ छीन ही लेतीं अगर उनके गडरिये ने, जो न जाने कैसे और कहाँ से आकर मेरी बगल में खड़ा हो गया था,



आवाज़ देकर उन्हें रोका न होता। वह एक विलक्षण आकृति वाला युवक था—लम्बा, बलवान् और तेजस्वी। कमर पर लिपटी खाल उसकी एकमात्र पोशाक थी, और हाथ में पकड़ी बाँसुरी उसका एकमात्र हथियार।

एक मुस्कराहट के साथ कोमल स्वर में वह बोला, “मेरा अगुआ बकरा लाड़ में बिगड़ा हुआ है। जब भी मेरे पास रोटियाँ होती हैं, मैं इसे खिला देता हूँ। पर रोटि खानेवाला कोई प्राणी कितने ही पखवारों से इधर से नहीं गुज़रा।” फिर घण्टी वाले अगुआ बकरे की ओर मुड़ते हुए उसने कहा, “देख रहे हो तुम, मेरे वफ़ादार बकरे, अच्छा भाग्य किस प्रकार हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है? भाग्य की ओर से कभी निराश मत होओ।”

इतना कहकर उसने झुककर एक रोटि उठा ली। यह सोचकर कि वह भूखा है, मैंने बहुत नम्रतापूर्वक और अत्यन्त निश्छल भाव से उससे कहा:

“यह सादा भोजन हम बाँटकर खा लेंगे। ये रोटियाँ हम दोनों के लिये काफ़ी हैं—और आपके अगुआ बकरे के लिये भी।”

मैं आश्चर्य से सन्न हो गया जब उसने एक रोटि बकरियों को डाल दी, फिर दूसरी और फिर तीसरी, और यहाँ तक कि सातवीं भी; और हर रोटि में से एक-एक ग्रास वह स्वयं लेता गया। यह देख मुझ पर बिजली गिर पड़ी, और क्रोध से मेरी छाती फटने लगी। पर अपनी विवशता को समझते हुए मैंने अपने क्रोध को थोड़ा शान्त किया और विस्मित नेत्रों से गडारिये की ओर देखते हुए कुछ विनती और कुछ उलाहने के स्वर में बोला:

“अब जब कि एक भूखे आदमी की रोटियाँ तुमने अपनी बकरियों को खिला दी हैं, क्या उसे अपनी बकरियों का थोड़ा-सा दूध नहीं पिलाओगे?”

“मेरी बकरियों का दूध मूर्खों के लिये विष है; और मैं नहीं चाहता कि मेरी कोई बकरी किसी मूर्ख तक के प्राण लेने का अपराध करे।”

“पर मैं मूर्ख क्योंकर हुआ?”

“क्योंकि तू सात जन्मों की यात्रा पर सात रोटियाँ लेकर चला है।”

“तो क्या मुझे सात हज़ार रोटियाँ लेकर चलना चाहिये था?”

“नहीं, एक भी नहीं।”

“इतने लम्बे सफ़र पर क्या तुम बिना रसद के जाने की सलाह देते हो?”

“जिस पथ पर पथिक को खाने को न मिले, वह पथ चलने के लायक नहीं।”

“क्या तुम चाहते हो कि मैं रोटी की जगह चकमक के टुकड़े खाऊँ और पानी की जगह अपना पसीना पीऊँ?”

“खाने के लिये तेरा मांस काफ़ी है, और पीने के लिये तेरा रक्त। और फिर मार्ग भी तो है।”

“तुम मेरा कुछ ज़्यादा ही मज़ाक़ उड़ा रहे हो, गडरिये। फिर भी मैं बदले में तुम्हारा मज़ाक़ नहीं उड़ाना चाहता। जो कोई भी मेरा अन्न खाता है, वह चाहे मुझे भूखा ही मार दे, मेरा भाई बन जाता है। देखो, दिन पर्वत के पीछे छिप रहा है, पर मुझे अपना सफ़र जारी रखना होगा। तुम मुझे बताओगे नहीं कि क्या मैं अभी भी शिखर से दूर हूँ?”

“तू विस्मृति के अत्यन्त निकट है।”

यह कहकर उसने बाँसुरी अपने अधरों से लगाई और एक विलक्षण धुन बजाते हुए चल पड़ा। लगता था कि वह पाताल-लोक से आती हुई कोई फ़रियाद है। अगुआ बकरा उसके पीछे चल पड़ा और बकरे के पीछे बाक़ी सब बकरियाँ। बहुत देर तक मुझे बाँसुरी के पीड़ा-भरे स्वर में मिली हुई चकमक पत्थरों के गिरने और बकरियों के मिमियाने की आवाज़ें सुनाई देती रहीं।

अपनी भूख को मैं बिलकुल भूल चुका था, इसलिये गडरिये द्वारा ध्वस्त की जा चुकी अपनी शक्ति और दृढ़ता को मैं फिर से सँजोने लगा। अगर रात को मुझे चकमक के इस विषादपूर्ण अम्बार में घिरा पाना था तो ज़रूरी था कि मैं अपने लिए कोई ऐसा स्थान ढूँढ़ लूँ जहाँ थककर चूर हुई अपनी हड्डियों को ढलान पर लुढ़काने के भय के बिना सीधी कर सकूँ। सो मैंने फिर घिसटना शुरू कर दिया। पर्वत से नीचे की ओर दृष्टि डाली तो मेरे लिए विश्वास करना कठिन था कि मैं इतनी ऊँचाई पर पहुँच चुका



हूँ। ढलान का निचला सिरा अब दिखाई नहीं दे रहा था, जब कि लगता था कि शिखर अब लगभग मेरी पहुँच में है।

रात होते-होते मैं शिलाओं के एक समूह तक पहुँच गया जिनसे एक गुफा-सी बनी हुई थी। यह गुफा एक ऐसे गहरे खड्ड के बिलकुल किनारे पर थी जिसकी तह में भयंकर काले साये करवटें ले रहे थे, फिर भी मैंने रात के लिये उसी को अपना बसेरा बनाने का निश्चय किया।

मेरे जूतों के चिथड़े उड़ गये थे और उन पर रक्त के बहुत-से धब्बे पड़े हुए थे। जब मैंने उन्हें उतारने की कोशिश की तो मुझे पता चला कि मेरे पैरों की खाल उनसे इस तरह कसकर चिपक गई है जैसे उसे गोंद लगा हो। मेरी हथेलियों पर गहरी रक्तिम धारियाँ पड़ गई थीं। नाखून किसी सूखे पेड़ से उखाड़ी हुई छाल के किनारों जैसे हो गये थे। मेरे वस्त्र अपना अधिकाँश भाग तीखे चकमक पत्थरों को भेंट कर चुके थे। मेरा सिर नींद से बोझिल हो रहा था। लगता था उसमें और कोई विचार है ही नहीं।

मैं कितनी देर सोया रहा था—एक क्षण, एक घण्टा या अनन्त काल तक, मुझे पता नहीं। लेकिन, यह महसूस होने पर कि कोई बलपूर्वक मेरी आस्तीन खींच रहा है, मैं उठकर बैठा तो हड़बड़ाहट और नींद की बेसुधी में मैंने देखा कि एक युवती हाथ में मन्द प्रकाश वाली एक लालटेन लिए मेरे सामने खड़ी है। वह पूर्णतया निर्वस्त्र थी और उसके शरीर की गठन तथा चेहरे में एक अत्यन्त सुकुमार सौन्दर्य था। और मेरी जैकेट की बाँह खींच रही थी एक वृद्धा जो उतनी ही कुरूप थी जितनी वह युवती रूपवती थी। एक सर्द सिहरन ने मुझे सिर से पैर तक कँपा दिया।

जैकेट को मेरे कन्धों से थोड़ा खींचती हुई वृद्धा कह रही थी, “देख रही हो तुम, मेरी प्यारी बच्ची, अच्छा भाग्य किस प्रकार हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है? भाग्य की ओर से कभी निराश मत होओ।”

मेरी ज़बान पथरा गई; और विरोध करना तो दूर, मैंने बोलने तक की कोशिश नहीं की। व्यर्थ ही मैंने अपने मनोबल को पुकारा। लगता था कि वह मेरा साथ छोड़ चुका है। इतना अधिक शक्तिहीन हो गया था मैं उस वृद्धा के सामने; क्योंकि यदि मैं चाहता तो उसे और उसकी पुत्री को फूँक



मारकर गुफा से बाहर फेंक सकता था। पर मैं तो इच्छा भी नहीं कर पा रहा था, और न ही मुझमें फूँक मारने की शक्ति थी।

अकेली जैकेट से ही सन्तुष्ट न होकर उस स्त्री ने मेरे बाक़ी कपड़े भी उतारने शुरू कर दिये, यहाँ तक कि मेरी देह पर एक भी वस्त्र नहीं रहने दिया। मेरे वस्त्र उतारते-उतारते वह हर वस्त्र उस कन्या को देती जाती और वह कन्या उसे स्वयं पहन लेती। गुफा की दीवार पर पड़ रही मेरे नग्न शरीर की परछाईं और दोनों स्त्रियों की टूटी-फूटी परछाइयों ने मिलकर मुझे डर और घृणा से भर दिया। मैं बिना कुछ समझे देखता रहा और बिना कुछ बोले खड़ा रहा, जब कि उस समय बोलना ही सबसे अधिक आवश्यक था और उस अरुचिकर अवस्था में मेरे पास वही एक शस्त्र बचा रह गया था। आख़िर मेरी ज़बान खुली और मैंने कहा:

“ऐ बुढ़िया, अगर तुम्हारी सब शर्म ख़त्म हो गई है तो मेरी तो नहीं हुई। तुम जैसी निर्लज्ज डायन के सामने भी मुझे अपने नंगेपन पर शर्म आ रही है। पर इस कन्या के भोलेपन के सामने तो मेरी लज्जा का कोई अन्त ही नहीं है।”

“जिस प्रकार यह तेरी लज्जा को ओढ़े हुए है, उसी प्रकार तू इसके भोलेपन को ओढ़ ले।”

“किसी कन्या को एक थके-हारे मनुष्य के फटे हुए वस्त्र किसलिये चाहियें, और एक ऐसे मनुष्य के जो पर्वतों में ऐसे स्थान पर, ऐसी रात में भटक गया है?”

“शायद उसका बोझ हलका करने के लिये। शायद अपने आपको गर्म रखने के लिये। सर्दी से बेचारी बालिका के दाँत बज रहे हैं।”

“पर जब सर्दी से मेरे दाँत बजेंगे तो मैं उसे कैसे दूर भगाऊँगा? क्या तुम्हारे हृदय में तनिक भी दया नहीं है? मेरे कपड़े ही इस संसार में मेरी एकमात्र सम्पत्ति हैं।”

“कम संचय—कम बन्धन।

अधिक संचय—अधिक बन्धन।

अधिक बन्धन—कम मोल।

कम बन्धन—अधिक मोल।

आओ हम चलें, मेरी बच्ची।”

जब वह कन्या का हाथ पकड़कर चलने को हुई तो मेरे मन में उससे पूछने के लिये हजारों प्रश्न उमड़ पड़े; लेकिन केवल एक ही मेरी ज़बान पर आ पाया:

“ऐ बुजुर्ग औरत, जाने से पहले मुझे इतना बताने की कृपा नहीं करोगी कि क्या मैं शिखर से अभी भी दूर हूँ?”

“तू काले खड्ड के कगार पर है।”

उनकी विचित्र परछाइयाँ लालटेन के मन्द प्रकाश में क्षण-भर के लिये पीछे को मेरी ओर लहराई; वे दोनों गुफा से निकलीं और काजल-सी काली रात में विलीन हो गईं। न जाने कहाँ से एक काली ठण्डी लहर मेरी ओर लपकी। उसके बाद और अधिक काली, और अधिक ठण्डी लहरें आने लगीं। लगता था गुफा की दीवारें ही बर्फ़ीली साँसें छोड़ रही हैं। मेरे दाँत कटकटाने लगे और उनके साथ ही मेरे पहले से ही अस्त-व्यस्त विचार भी: चारे के लिये चकमक पत्थरों पर मुँह मार रही बकरियाँ, खिल्ली उड़ाता गडरिया, यह स्त्री और यह कन्या; मैं नंगा, खरोंचों और घावों से भरा, भूख से पीड़ित, सर्दी से अकड़ा, हक्का-बक्का ऐसी गुफा में, ऐसे अथाह खड्ड के किनारे। क्या मैं अपनी मंज़िल के समीप था? क्या मैं कभी वहाँ पहुँच पाऊँगा? क्या इस रात्रि का अन्त होगा?

मैं अभी अपने आपको सँभाल भी नहीं पाया था कि मुझे एक कुत्ते के भौंकने की आवाज़ सुनाई दी और साथ ही दिखाई दी एक और रोशनी, बहुत पास, बहुत ही पास—ठीक गुफा के अन्दर।

“देख रही हो तुम, प्रिये, अच्छा भाग्य किस प्रकार हमारी आवश्यकताओं की पूर्ति करता है? भाग्य की ओर से कभी निराश मत होओ।” यह आवाज़ थी एक वृद्ध, बहुत ही वृद्ध पुरुष की, जिसकी दाढ़ी बढ़ी हुई थी, कमर झुकी हुई थी और घुटने काँप रहे थे। वह एक स्त्री से बात कर रहा था जो उस जितनी ही बूढ़ी थी, दन्त-हीन, अस्त-व्यस्त। उसकी भी कमर झुकी हुई थी और घुटने काँप रहे थे। प्रकट रूप से मेरी

उपस्थिति की ओर कोई ध्यान न देते हुए उसी तीखे स्वर में, जो बहुत कठिनाई से उसके कण्ठ से निकल रहा लगता था, वह बोलता चला गया:

“हमारे प्रणय के लिये एक शानदार सुहाग-कक्ष, और तुम्हारी खोई हुई लाठी के बदले एक बहुत बढ़िया लाठी। ऐसी लाठी पाकर अब तुम्हारे पैर कभी नहीं लड़खड़ायेंगे, प्रिये।” यह कहते हुए उसने मेरी लाठी उठा ली और उस स्त्री को थमा दी जो बड़ी कोमलता के साथ उस पर झुकी और बड़े प्यार के साथ उसे अपने जर्जर हाथों से थपथपाने लगी। फिर, मानो मेरी उपस्थिति पर ध्यान देते हुए, परन्तु पूरा समय अपनी संगिनी से ही बात करते हुए वह बोला:

“यह अजनबी अभी यहाँ से चला जायेगा प्रिये, और अपने रात्रि के सपने हम एकान्त में देखेंगे।”

यह कथन मेरे लिए एक आदेश बनकर आया जिसकी अवज्ञा करने की शक्ति मुझमें नहीं थी, विशेषतया जब उसका कुत्ता डरावने ढंग से गुर्राता हुआ मेरी ओर बढ़ा मानो अपने स्वामी की आज्ञा का पालन करने आ रहा हो। पूरे दृश्य ने मुझे भयाक्रान्त कर दिया, मैं उसे इस तरह देखता रहा जैसे मेरी सुध-बुध खो गई हो; एक सुध-बुध खो चुके व्यक्ति की भाँति ही मैं उठा और गुफा के प्रवेश-द्वार की ओर बढ़ा; साथ-साथ मैं बोलने का—अपनी रक्षा करने का, दृढ़तापूर्वक अपना अधिकार जताने का—निराशापूर्ण प्रयत्न भी करता रहा।

“मेरी लाठी तुमने ले ली है। क्या तुम इतने निर्दयी हो जाओगे कि इस गुफा को भी मुझसे छीन लोगे जो इस रात के लिये मेरा बसेरा है?”

“सुखी हैं लाठी-हीन,

वे ठोकर नहीं खाते।

सुखी हैं बेघर,

वे अपने घर में हैं।

ठोकर खाते हैं जो,

हमारे जैसे,

उन्हीं को चलना पड़ता है

लाठियाँ लेकर।



बँधे हैं घर से जो,  
हमारी तरह,  
उन्हीं को ज़रूरत है  
एक घर की।”

इस प्रकार वे एक साथ गाते रहे, और साथ ही अपने लम्बे नाखूनों को ज़मीन में धँसाते हुए तथा कंकड़-कंकड़ियों को समतल करते हुए अपनी सेज तैयार करते रहे। लेकिन मेरी ओर उन्होंने कोई ध्यान नहीं दिया। इससे मैं बुरी तरह हताश होकर चीख उठा:

“मेरे हाथों को देखो। मेरे पैरों को देखो। मैं एक पथिक हूँ, इस वीरान ढलान में भटका हुआ पथिक। अपने ही रक्त से अपने पदचिह्न अंकित करता हुआ मैं 'यहाँ' तक पहुँचा हूँ। इस भयंकर पर्वत का, जो तुम्हारा खूब जाना-पहचाना लगता है, मुझे आगे एक इंच भी दिखाई नहीं दे रहा है। क्या तुम्हें करनी का फल भुगतने का ज़रा भी डर नहीं? यदि तुम मुझे अपने साथ गुफा में रात बिताने की अनुमति नहीं देना चाहते तो कम से कम अपनी लालटेन ही मुझे दे दो।”

“प्रेम बेपरदा नहीं होगा।  
प्रकाश बाँटा नहीं जायेगा।  
प्रेम करो और देखो।  
ज्योति जगाओ और जियो।  
जब रात दम तोड़ दे,  
जब दिन साथ छोड़ दे,  
जब धरती जाये मर,  
तब क्या बीतेगी पथिकों पर?  
तब कौन होगा यहाँ  
जो कर पायेगा साहस?”

बहुत लाचार होकर मैंने मिन्नत से काम लेने का निश्चय किया, यद्यपि हर पल मुझे लग रहा था कि इससे कोई लाभ नहीं होगा; क्योंकि कोई रहस्यमयी शक्ति मुझे बाहर की ओर धकेलती जा रही थी।

“ऐ नेक बूढ़े! ऐ नेक बुढ़िया! मैं ठण्ड से सुन्न हो गया हूँ और थकान से चूर-चूर, फिर भी तुम्हारे आनन्द में बाधा नहीं डालूँगा। मैंने भी कभी प्रेम का प्याला पिया है। मैं अपनी लाठी और अपनी तुच्छ कुटिया, जिसे तुमने अपना सुहाग-कक्ष चुन लिया है, तुम्हारे लिए तुम्हारे पास ही रहने दूँगा। पर बदले में एक छोटी-सी चीज़ मैं तुमसे अवश्य चाहता हूँ: जब तुम मुझे अपनी लालटेन के प्रकाश से वंचित रख रहे हो तो क्या इतनी कृपा भी नहीं करोगे कि मुझे इस गुफा में से बाहर ले चलो और शिखर पर जाने का रास्ता बता दो? क्योंकि मैं दिशा का ज्ञान पूर्णतया खो चुका हूँ, और अपना सन्तुलन भी। मुझे पता नहीं कि मैं कितना ऊँचा चढ़ चुका हूँ और कितना ऊँचा मुझे अभी और चढ़ना है।”

मेरी विनती की ओर कोई ध्यान न देते हुए वे गाते गये:

“सचमुच ऊँचा  
होता है सदा नीचा।  
सचमुच वेगवान्  
होता है सदा मन्द।  
अति संवेदनशील  
होता है चेतना-शून्य।  
अतीव वाक्पटु  
होता है मूक।  
ज्वार और भाटा  
दो रूप हैं  
एक ही लहर के।  
जिसका नहीं है  
कोई मार्गदर्शक,  
उसी के पास है  
पक्का मार्गदर्शक।  
बहुत महान्  
होता है बहुत छोटा।

सब-कुछ है उसके पास  
जो सब-कुछ  
देता है लुटा।”

एक अन्तिम प्रयत्न करते हुए मैंने उनसे प्रार्थना की कि मुझे यह तो बता दो कि गुफा से निकलने पर मैं किस ओर मुड़ूँ, क्योंकि हो सकता है पहले ही क़दम पर मौत मेरी ताक में बैठी हो; और मैं अभी मरना नहीं चाहता। साँस रोके मैं उनके उत्तर की प्रतीक्षा करता रहा जो एक और रहस्यमय गीत के रूप में मिला और जिसने मुझे पहले से भी अधिक उलझन में डालकर और अधिक बेचैन कर दिया:

“चट्टान का मस्तक है कठोर और उन्नत।

शून्य की गोद है कोमल और अथाह।

सिंह और कीट,

देवदार और ईधन,

खरहा और घोंघा,

छिपकली और बटेर,

गरुड़ और छछूँदर—

सबको लेटना है एक ही खोह में।

एक ही काँटा, एक ही चारा।

केवल मृत्यु क्षति-पूर्ति कर सकती है

जैसा नीचे, वैसा ऊपर—

जीने के लिये मरो,

या मरने के लिये जियो।”

हाथों और घुटनों के बल घिसटता हुआ मैं जैसे ही गुफा से बाहर निकला, लालटेन की लौ टिमटिमाकर बुझ गई। कुत्ता दबे पैर मेरे पीछे-पीछे चला आ रहा था, मानो मुझे बाहर निकालना चाहता हो। अन्धकार इतना घना था कि उसके स्याह बोझ को मैं अपनी पलकों पर महसूस कर रहा था। मैं और एक पल भी वहाँ नहीं ठहर सकता था। इस बात का कुत्ते ने मुझे विश्वास दिला दिया था।



एक झिझकता क़दम। एक और झिझकता क़दम। तीसरे क़दम पर मुझे ऐसा लगा जैसे पर्वत अचानक मेरे पैरों के नीचे से निकल गया है और मैंने अपने आपको अन्धकार के समुद्र के तूफ़ानी भँवर में फँसा हुआ पाया जिसने मेरे प्राण सुखा दिये और मुझे प्रचण्ड वेग से नीचे झटक दिया— नीचे, और नीचे।

जब मैं काले खड्ड के शून्य में चक्कर खा रहा था, तब जो अन्तिम दृश्य मेरे मन में कौंधा वह था उन प्रेत जैसे दूल्हा और दुलहन का। जब मेरी साँस नासिका में जमने लगी थी, तब जो अन्तिम शब्द मैंने बुदबुदाये वे उन्हीं के शब्द थे:

“जीने के लिये मरो, या मरने के लिये जियो।”

## किताब का रखवाला

“उठ, ऐ भाग्यशाली अजनबी, तूने अपनी मंज़िल पा ली है।”

प्यास से सूखा कण्ठ लिये और सूर्य की झुलसाती किरणों के नीचे छटपटाते हुए मैंने आँखें थोड़ी खोलीं तो अपने आपको ज़मीन पर चित पड़ा पाया और देखा कि एक मनुष्य की काली आकृति मुझ पर झुकी हुई बड़ी कोमलता से मेरे सूखे होंठों को पानी से नम कर रही है, और उतनी ही कोमलता से मेरे अनेक घावों पर जमे रक्त को धो रही है। उसका शरीर भारी था और मुखाकृति भद्दी, दाढ़ी तथा भौंहें घनी, दृष्टि गहरी तथा तीक्ष्ण। उसकी आयु का अनुमान लगाना अत्यन्त कठिन था। परन्तु उसका स्पर्श कोमल और शक्तिदायक था। उसकी सहायता से मैं उठकर बैठ सका, और ऐसे स्वर में जो मेरे अपने कानों तक भी बड़ी कठिनाई से पहुँच रहा था पूछ पाया,

“मैं कहाँ हूँ?”

“पूजा-शिखर पर।”

“और गुफा”

“तुम्हारे पीछे।”

“और काला खड्ड?”

“तुम्हारे सामने।”

निःसन्देह, बहुत आश्चर्य हुआ मुझे जब मैंने देखा कि सचमुच ही गुफा मेरे पीछे है और काला खड्ड मुँह बाये मेरे सामने है। मैं खड्ड के एकदम किनारे पर था। मैंने उस व्यक्ति को गुफा में साथ चलने के लिये कहा और वह खुशी-खुशी मेरे साथ हो लिया।

“इस खड्ड में से मुझे किसने निकाला?”

“जिसने ऊपर शिखर तक तुम्हारा मार्गदर्शन किया, अवश्य उसी ने तुम्हें खड्ड में से निकाला होगा।”

“कौन है वह?”

“वही जिसने मेरी ज़बान बन्द कर दी और मुझे डेढ़ सौ साल तक इस शिखर के साथ बाँधे रखा।”

“तो क्या तुम ही बन्दी महन्त हो?”

“हाँ, वह मैं ही हूँ।”

“पर तुम बोल सकते हो जब कि वह गूँगा है।”

“मेरी ज़बान तुमने खोल दी है।”

“वह मनुष्य की संगति से कतराता भी है। परन्तु लगता है कि तुम मुझसे बिलकुल नहीं डर रहे।”

“मैं सबसे कतराता हूँ, पर तुमसे नहीं।”

“तुमने पहले कभी मेरी शक्ल नहीं देखी। फिर ऐसा क्यों कि तुम और सबसे कतराते हो, पर मुझसे नहीं?”

“एक सौ पचास साल मैंने तुम्हारे आने की प्रतीक्षा की है। एक सौ पचास साल, एक भी दिन छोड़े बिना, हर ऋतु में, हर मौसम में मेरी पापी आँखें इस ढलान के चकमक पत्थरों को निहारती रही हैं कि शायद कोई मनुष्य मुझे इस पर्वत पर चढ़ता और ऐसी दशा में यहाँ पहुँचता दिखाई दे जाये जिस दशा में तुम पहुँचे तो—पास न लाठी, न वस्त्र, न रसद। बहुतों ने ढलान के रास्ते चढ़ने का प्रयत्न किया, पर पहुँचा कभी कोई नहीं। दूसरे रास्तों से कई पहुँचे, पर ऐसा एक भी नहीं था जिसके पास न लाठी हो, न वस्त्र, न रसद। मैंने कल सारा दिन तुम्हारी प्रगति पर नज़र रखी। रात मैंने तुम्हें गुफा में सोकर बिताने दी; किन्तु पौ फटने के साथ ही मैं यहाँ आया और देखा कि तुम्हारी साँस बन्द है। लेकिन मुझे पूरा विश्वास था कि तुम जी उठोगे। और देखो, तुम मुझसे अधिक सजीव हो। तुम जीने के लिये मरे हो। मैं मरने के लिये जी रहा हूँ। हाँ, महिमा उसी के नाम की है। सबकुछ वैसा ही है जैसा कि उसने वादा किया था। सबकुछ वैसा ही है



जैसा होना चाहिये था। मेरे मन में तनिक भी सन्देह नहीं रहा कि तुम ही वह चुने हुए व्यक्ति हो।”

“कौन-सा व्यक्ति?”

“वह भाग्यशाली व्यक्ति जिसके हाथों में मुझे पवित्र किताब संसार के सामने लाने के लिये सौंपनी है।”

“कौन-सी किताब?”

“उसकी किताब—मीरदाद की किताब।”

“मीरदाद? कौन है मीरदाद?”

“क्या यह सम्भव है कि तुमने मीरदाद का नाम नहीं सुना? कितनी विचित्र बात है। मुझे पूर्ण विश्वास था कि अब तक उसका नाम पृथ्वी पर ऐसे फैल चुका होगा जैसे वह आज तक मेरे पैरों के नीचे की भूमि, मेरे आस-पास की वायु और मेरे ऊपर के आकाश में व्याप्त है। पवित्र है यह भूमि, ऐ अजनबी, इस पर उसके पाँव चले थे। पवित्र है यह वायु; इसे उसके फेफड़ों ने अपनी साँस बनाया था। पवित्र है यह आकाश; इसके हर भाग पर उसकी दृष्टि पड़ी थी।” इतना कहकर महन्त श्रद्धापूर्वक झुका, तीन बार उसने ज़मीन को चूमा, और फिर मौन साध लिया। थोड़ा रुककर मैंने कहा, “जिस व्यक्ति को तुम मीरदाद कहते हो, उसके विषय में और जानने की मेरी उत्कण्ठा को तुम बढ़ा रहे हो।”

“मेरी बात ध्यानपूर्वक सुनो, और जो कुछ बताने की मुझे इजाज़त है वह सब तुम्हें बताऊँगा। मेरा नाम शमदाम है। मैं नौका का मुखिया था जब नौ साथियों में से एक की मृत्यु हुई। उसकी आत्मा अभी संसार से विदा हुई ही थी कि मैंने सुना कि द्वार पर खड़ा कोई अजनबी मुझे बुला रहा है। मैं तुरन्त जान गया कि विधाता ने उसे दिवंगत साथी का स्थान लेने के लिये भेजा है; मुझे खुश होना चाहिये था कि प्रभु अभी भी नौका पर अपनी कृपा-दृष्टि रखे हुए है, जैसे वह हमारे पूर्वज सैम के समय से रखता आया था।”

यहाँ मैंने यह पूछने के लिये उसे बीच में रोका कि नीचे के लोगों ने जो मुझे बताया है कि इस नौका को हज़रत नूह के बड़े पुत्र ने बनवाया था

क्या वह सच है। उसने तुरन्त जोरदार शब्दों में उत्तर दिया, “हाँ बिल्कुल वैसा ही है जैसा तुम्हें बताया गया है।” फिर बीच में रोकी गई अपनी कहानी जारी रखते हुए उसने कहा,

“हाँ, मुझे खुश होना चाहिये था। पर किन्हीं कारणों से, जो पूर्णतया मेरी समझ से परे थे, मैंने अपने अन्दर एक विद्रोह उभरता महसूस किया। अजनबी पर मैंने अभी एक नज़र भी न डाली थी कि मेरे पूरे अस्तित्व ने उसके विरुद्ध युद्ध छेड़ दिया। और मैंने उसे अस्वीकार करने का निर्णय कर लिया, यह पूरी तरह समझते हुए भी कि उसे अस्वीकार करना अलंघ्य परम्पराओं का उल्लंघन करना होगा, जिसने उसे भेजा उसे अस्वीकार करना होगा।

“मैंने जब द्वार खोला और उसे देखा—मात्र एक युवक जिसकी आयु पच्चीस से अधिक नहीं होगी—तो मेरे हृदय में अनेक खंजर चुभने लगे जिन्हें मैं उसकी देह में भोंक देना चाहता था। नग्न, स्पष्ट रूप से भूख से पीड़ित, अपनी सुरक्षा के सभी साधनों से, लाठी तक से, विहीन वह सर्वथा असहाय प्रतीत हो रहा था। परन्तु उसके मुख पर एक विलक्षण तेज था जिसके कारण वह कवच से पूर्णतया सज्जित एक योद्धा से कहीं अधिक सुरक्षित और अपनी आयु से कहीं अधिक बड़ा लग रहा था। मेरा सम्पूर्ण व्यक्तित्व उसके विरुद्ध चीख उठा। मेरी शिराओं में बहते रक्त की एक-एक बूँद उसे कुचल देने के लिये मचल उठी। इसका कारण मुझसे मत पूछो। शायद उसकी पैनी दृष्टि ने मेरी आत्मा को निर्वस्त्र कर दिया था, और अपनी आत्मा को किसी के भी सामने निर्वस्त्र होता देख मैं भयभीत हो उठा था। शायद उसकी पवित्रता ने मेरी गन्दगी पर से पर्दे हटा दिये थे, और जो पर्दे मैं अपनी गन्दगी को ढकने के लिये इतनी देर तक बुनता रहा था उनसे वंचित हो जाने का मुझे दुःख था, क्योंकि गन्दगी को अपने पर्दों से सदा प्यार रहा है। शायद उसके ग्रहों और मेरे ग्रहों के बीच कोई पुराना वैर था। कौन जाने? यह तो केवल वही बता सकता है।

“मैंने बड़े कर्कश और निष्ठुर स्वर में उससे कहा कि उसे बिरादरी में शामिल नहीं किया जा सकता, और उसे तुरन्त वहाँ से चले जाने का



आदेश दिया। परन्तु वह अपनी बात पर डटा रहा और शान्त स्वर में उसने मुझे पुनः विचार करने का परामर्श दिया। उसके परामर्श को मैंने अपना अपमान समझा और उसके मुँह पर मैंने थूक दिया। बिना किसी उत्तेजना के वह अपनी बात पर डटा रहा, और धीरे से अपने मुँह पर से थूक को पोंछते हुए उसने एक बार फिर मुझे अपने निर्णय को बदलने का परामर्श दिया। जब वह अपने मुँह पर से थूक पोंछ रहा था तो मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे वह थूक मेरे मुँह पर पुत रहा हो। मैंने अपने आपको पराजित भी महसूस किया और कहीं अपने अन्तर की गहराई में मान लिया कि वह मुकाबला बराबरी का नहीं है, अजनबी ही अधिक बलवान् प्रतिद्वन्द्वी है।

“हर पराजित अहंकार की तरह मेरा अहंकार भी तब तक संघर्ष छोड़ने के लिये तैयार नहीं था जब तक उसे नीचे पटक कर मिट्टी में रौंदा न जाता। मैं उसके अनुरोध को स्वीकार करने के लिये लगभग तैयार था, पर मैं पहले उसे नीचा दिखाना चाहता था। लेकिन उसे तो किसी तरह नीचा दिखाया ही नहीं जा सकता था।

“अचानक उसने कुछ भोजन और वस्त्र माँगे, और मेरी आशा फिर से जाग उठी। अब जब कि भूख और ठण्ड उसके विरुद्ध मेरा साथ दे रही थी, मुझे विश्वास हो गया कि मैंने युद्ध जीत लिया है। निर्दयतापूर्वक मैंने उसे रोटी का एक टुकड़ा तक देने से इनकार कर दिया; कह दिया कि मठ का गुजारा दान पर चलता है और मठ दान नहीं दे सकता। यह कहते हुए मैं सरासर झूठ बोल रहा था, क्योंकि मठ इतना अधिक धनवान् था कि ज़रूरतमन्दों को भोजन और वस्त्र देने से इनकार कर ही नहीं सकता था। मैं चाहता था कि अजनबी मेरे आगे हाथ पसारे। लेकिन वह हाथ पसारने को तैयार न था। वह तो ऐसे माँग रहा था जैसे यह उसका अधिकार हो; उसके माँगने में आदेश था।

“लड़ाई देर तक चली, पर उसका रुख ज़रा भी न बदला। शुरू से ही वह उसकी थी। अपनी पराजय को छिपाने के लिये आखिर मैंने उसके सामने प्रस्ताव रखा कि वह एक नौकर बनकर नौका में आ जाये—केवल एक नौकर बनकर। मैंने अपने आपको दिलासा दिया कि इससे उसकी



हेठी होगी। मैं तब भी न समझ पाया कि भिखारी मैं हूँ, वह नहीं। मेरी हेठी पर मुहर लगाते हुए उसने बिना किसी आपत्ति के मेरा प्रस्ताव स्वीकार कर लिया। उस समय मैं कल्पना तक न कर पाया कि उसे नौकर के रूप में प्रवेश देकर भी मैं अपने आपको मठ से बाहर निकाल रहा हूँ। अन्तिम दिन तक मैंने इस भ्रम को गले से लगाये रखा कि नौका का स्वामी वह नहीं, मैं हूँ। ओह, मीरदाद, मीरदाद, तूने शमदाम का क्या हाल कर दिया! शमदाम, तूने अपना क्या हाल बना लिया!”

दो बड़े-बड़े आँसू महन्त की दाढ़ी में से होते हुए नीचे गिर पड़े और उसकी भारी भरकम देह काँप उठी। मेरा हृदय द्रवित हो गया और मैंने कहा, “जिसकी याद तुम्हारी आँखों से आँसू बनकर बह रही है, कृपया उसके बारे में अब और बात मत करो।”

“अशान्त न होओ, ऐ भाग्यशाली दूत। यह तो मुखिया का बीते समय का अहंकार है जो अब भी कटुता के आँसू बहा रहा है। यह तो क्रानून की सत्ता है जो आत्मा की सत्ता के विरुद्ध दाँत पीस रही है। अहंकार को रो लेने दो; यह इसका अन्तिम रुदन है। सत्ता को दाँत पीस लेने दो; यह अन्तिम बार दाँत पीस रही है। काश, उस समय मेरी आँखों पर यों दुनियावी धुन्ध के पर्दे न पड़े होते जब इन्होंने उसके दिव्य स्वरूप को पहली बार देखा था! काश, उस समय मेरे कानों में दुनियावी बुद्धि की रूई न भरी होती जब उसके दिव्य ज्ञान ने इन्हें ललकारा था! काश, उस समय मेरी जिह्वा पर विषयासक्ति की कड़वी मिठास का लेप न होता जब उसकी आत्मिक रस से लिप्त वाणी के साथ वह संघर्ष कर रही थी! लेकिन अपने बोये भ्रम का घास-पात मैं बहुत-कुछ काट चुका हूँ, और अभी मुझे और भी काटना है।

“सात साल तक एक तुच्छ सेवक बनकर वह हमारे बीच रहा—शिष्ट, सतर्क, सौम्य, संकोचशील, किसी भी साथी के छोटे से छोटे आदेश के पालन के लिये तैयार। वह ऐसे चलता-फिरता था मानो हवा पर सवार हो। उसके मुख से कभी कोई शब्द न निकलता। हमने समझा कि उसने मौन-व्रत धारण किया हुआ है। शुरू-शुरू में हममें से कुछ की प्रवृत्ति उसको

चिढ़ाने की रही। पर वह हमारे शब्दिक प्रहारों का उत्तर एक अलौकिक मौन से देता; शीघ्र ही उसने हम सबको उसके मौन का आदर करने के लिये विवश कर दिया। लेकिन जहाँ बाक़ी सात साथियों को उसके मौन से प्रसन्नता होती थी और शान्ति मिलती थी, वहाँ मुझे वह मौन कष्ट देता था, विचलित करता था। उसके मौन को भंग करने के लिये मैंने अनेक प्रयत्न किये, पर सब व्यर्थ सिद्ध हुए।

“उसने हमें अपना नाम मीरदाद बताया। केवल इस नाम से पुकारे जाने पर ही वह उत्तर देता था। उसके बारे में हम केवल इतना ही जानते थे। फिर भी उसकी उपस्थिति हम सबको तीव्रता के साथ महसूस होती थी, इतनी तीव्रता के साथ कि जब तक वह अपनी कोठरी में न चला जाता हम ज़रूरी बातों के विषय में भी कभी-कभार ही ज़बान खोलते।

“वे समृद्धि के दिन थे, मीरदाद के पहले सात वर्ष। सात-गुना और इससे भी अधिक वृद्धि हुई मठ की विशाल सम्पत्ति में। मेरा हृदय उसके प्रति नरम हो गया, और यह देखते हुए कि विधाता ने और किसी को हमारे पास नहीं भेजा है, मैंने उसे एक साथी के रूप में स्वीकार करने के बारे में बाक़ी साथियों के साथ गम्भीरतापूर्वक मन्त्रणा की।

“पर ठीक उसी समय वह घटना घटी जिसका किसी को अनुमान तक न था, जिसका अनुमान कोई लगा ही नहीं सकता था, कम से कम यह बेचारा शमदाम तो कभी भी नहीं। मीरदाद ने अपने होंठों पर लगा मौन का ताला तोड़ दिया, और उसके साथ ही खुल गये एक तूफ़ान के द्वार। जिन विचारों को उसके मौन ने इतनी देर तक छिपाये रखा था, उन्हें अब मीरदाद ने प्रकट कर दिया, और वह ऐसी अबाध धाराओं में फूट पड़े कि सभी साथी उनके प्रचण्ड वेग की लपेट में आ गये—सिवाय बेचारे इस शमदाम के जो अन्त तक उनके साथ जूझता रहा। मुखिया के रूप में अपना प्रभुत्व जताते हुए मैंने उस बहाव की दिशा को मोड़ना चाहा, परन्तु साथी मीरदाद के अतिरिक्त और किसी के प्रभुत्व को स्वीकार करने के लिये तैयार नहीं थे। मीरदाद मालिक था; शमदाम, केवल बिरादरी से निकाला हुआ एक व्यक्ति। मैंने धूर्तता का सहारा भी लिया। कुछ साथियों को मैंने सोने



और चाँदी की बहुमूल्य वस्तुओं का प्रलोभन दिया; औरों से लम्बे-चौड़े उपजाऊ भूखण्ड देने का वादा किया। मैं लगभग सफल हो गया था जब, किसी रहस्यमय ढंग से, मीरदाद ने मेरे प्रयत्नों को जान लिया और उसने अनायास ही उन पर पानी फेर दिया—केवल कुछ शब्दों से ही।

“बहुत विचित्र और बहुत जटिल था वह सिद्धान्त जिसे उसने प्रस्तुत किया। किताब में सब दिया हुआ है। उसके विषय में बोलने की मुझे आज्ञा नहीं। किन्तु मीरदाद की वक्तृत्व-शक्ति से बर्फ़ काली स्याह प्रतीत होने लगती थी और काली स्याह चीज़ बर्फ़-सी सफ़ेद। इतने पैने और शक्तिशाली थे उसके शब्द। उस शस्त्र का सामना मैं किस चीज़ से कर सकता था? किसी भी चीज़ से नहीं, सिवाय मठ की मुहर के जो मेरे पास रहती थी। परन्तु वह भी किसी काम की नहीं रह गई थी, क्योंकि मीरदाद के उत्तेजक उपदेशों से प्रभावित होकर साथी उस प्रत्येक दस्तावेज़ पर, जिसका मेरी ओर से लिखा होना उन्हें उचित जान पड़ता था, हस्ताक्षर करने और मुहर लगाने के लिये मुझे बाध्य कर देते थे। थोड़ी-थोड़ी करके वे सब ज़मीनें, जो श्रद्धालुओं ने सदियों के दौरान मठ को दान में दी थीं, उन्होंने ज़रूरी दस्तावेज़ तैयार करके दूसरों को दे दीं। इसके बाद मीरदाद ने साथियों को उपहारों से लादकर उन उपहारों को आस-पास के सभी गाँवों के गरीबों और ज़रूरतमन्दों में बाँटने के लिये बाहर भेजना शुरू कर दिया। फिर अन्तिम नौका-दिवस पर, जो नौका के दो वार्षिक उत्सवों में से एक था—दूसरा था अंगूर-बेल का दिवस—मीरदाद ने अपने उन्मादपूर्ण कार्यों का अन्त अपने साथियों को यह आदेश देकर किया कि मठ का सारा सामान निकालकर बाहर इकट्ठे हुए लोगों में बाँट दिया जाये।

“यह सबकुछ मैंने अपनी पापी आँखों से देखा और अपने हृदय में अंकित कर लिया जो मीरदाद के प्रति घृणा से फटने ही वाला था। यदि घृणा अकेली ही किसी का वध करने में समर्थ होती, तो जो घृणा उस समय मेरी छाती में उफन रही थी, वह हजार मीरदादों का वध कर डालती। परन्तु उसका प्रेम मेरी घृणा से अधिक शक्तिशाली था। मुकाबला एक बार फिर बराबरी का नहीं था। मेरा अहंकार एक बार फिर टलने को



तैयार नहीं था जब तक उसे नीचे पटककर मिट्टी में रौंदा न जाता। पर बिना लड़े ही मीरदाद ने मुझे कुचल डाला। मैं लड़ा उससे, पर कुचला मैंने अपने आपको ही। कितनी बार उसने अपने प्रेमपूर्ण अनन्त धैर्य के साथ मेरी आँखों पर जमी परतों को उतारने का प्रयास किया! कितनी बार मैंने अपनी आँखों पर पहले से भी अधिक कड़ी परतें जमा लीं! जितनी अधिक कोमलता के साथ वह मुझसे पेश आता, उतनी ही अधिक घृणा के साथ मैं उसका उत्तर देता।

“मैदान में हम दो योद्धा थे—मीरदाद और मैं। वह अपने आपमें एक पूरी सेना था और मैं अकेला लड़ रहा था। यदि मुझे दूसरे साथियों का समर्थन प्राप्त होता तो अन्त में विजय मेरी होती। और तब मैं उसका कलेजा चीरकर रख देता। पर मेरे साथी उसका पक्ष लेकर मेरे साथ लड़े। गद्दार! मीरदाद, मीरदाद, तुमने अपना बदला ले लिया।”

और आँसू, तथा इस बार साथ में सिसकियाँ भी, और फिर एक लम्बी खामोशी, जिसके बाद मुखिया एक बार फिर झुका, तीन बार ज़मीन को चूमा और बोला:

“मीरदाद, मेरे विजेता, मेरे स्वामी, मेरी आशा, मेरे दण्ड और मेरे पुरस्कार, शमदाम की कटुता को क्षमा करो। धड़ से अलग होने के बाद भी साँप का फन विष नहीं तजता। पर सौभाग्य से वह काट नहीं सकता। देखो, शमदाम के अब न दाँत हैं, न विष। उसे अब अपने प्रेम का सहारा दो ताकि शमदाम वह दिन देख सके जब तुम्हारे मुख की तरह उसके मुख से भी शहद टपकने लगे। इसका तुमने उसे वचन दे रखा है। आज के दिन तुमने उसके पहले कारागार से उसे मुक्त कर दिया है। दूसरे में भी उसे ज्यादा देर न ठहरने देना।”

मेरे मन में प्रश्न उठा कि वह कौन-से कारागारों की बात कर रहा है। मुखिया ने मानो उसे पढ़ लिया, और एक दीर्घ निःश्वास छोड़ते हुए समझाना शुरू किया। परन्तु उसकी आवाज़ अब इतनी मधुर हो गई थी, इतनी बदल गई थी कि कोई भी सचमुच क्रसम खाकर कह सकता था कि यह आवाज़ किसी अन्य व्यक्ति की है।

उसने कहा:

“उस दिन मीरदाद ने हम सबको इसी गुफा में बुलाया जहाँ वह आम तौर पर सात साथियों को उपदेश दिया करता था। सूर्य अस्त होने को था। पछवाँ\* एक गहरे कोहरे को ऊपर घेर लाई थी जिससे घाटियाँ भर गई थीं और जो एक रहस्यपूर्ण चादर की भाँति यहाँ से लेकर समुद्र तक की पूरी धरती पर छा गया था। कोहरा हमारे पर्वत के कटि-तट से ऊपर नहीं पहुँचा था, इसलिये यह पर्वत एक सागर-तट के समान प्रतीत हो रहा था। पश्चिमी क्षितिज पर घनघोर घटा घिर आई थी जिसने सूर्य को पूरी तरह से छिपा लिया था। मुर्शिद ने प्रेम-विभोर होते हुए भी अपनी भावनाओं को नियन्त्रण में रखकर बारी-बारी सातों को गले लगाया, और अन्तिम को गले लगाते हुए वह बोला:

“बहुत देर रह चुके हो तुम ऊँचाइयों पर। आज तुम्हें गहराइयों में उतरना ही होगा। जब तक तुम नीचे उतरते हुए ऊपर नहीं चढ़ोगे, और जब तक तुम वादी को शिखर से नहीं जोड़ लोगे, ऊँचाइयों पर तुम्हारा सिर सदा चकराता रहेगा और गहराइयों में तुम्हारी आँखें सदा अपनी ज्योति खोती रहेंगी।”

फिर मेरी ओर मुड़ते हुए उसने देर तक कोमलतापूर्वक मेरी आँखों में देखा और बोला:

“जहाँ तक तुम्हारा सम्बन्ध है, शमदाम, तुम्हारा समय अभी नहीं आया। तुम्हें इस शिखर पर मेरे पुनः आने की प्रतीक्षा करनी होगी। और इस प्रतीक्षा के दौरान तुम मेरी किताब के रखवाले रहोगे जो वेदी के नीचे एक लोहे के सन्दूक के अन्दर ताले में रखी हुई है। ध्यान रखना कि किसी के हाथ उसका स्पर्श न करें—तुम्हारे हाथ भी नहीं। समय आने पर मैं अपना दूत इस किताब को तुमसे लेकर संसार के सामने प्रकट करने के लिये भेजूँगा। इन चिह्नों से पहचान पाओगे तुम उसे। वह चकमक पत्थरों वाली ढलान से इस शिखर पर चढ़ेगा। वह पूरे कपड़े पहनकर, एक लाठी

---

\* पच्छिमी हवा।



और सात रोटियाँ लेकर इस ओर अपनी यात्रा पर निकला होगा; परन्तु जब वह इस गुफा के सामने तुम्हारे पास पहुँचेगा तब उसके पास न लाठी होगी, न भोजन, न वस्त्र, और उसकी साँस बन्द होगी। जब तक वह नहीं आता, तुम्हारी ज़बान और होंठ मुहर-बन्द रहेंगे और तुम हर मनुष्य के सम्पर्क से दूर रहोगे। केवल उसकी झलक ही तुम्हें मौन के कारागार से मुक्त करेगी। यह किताब उसके हाथों में सौंपने के बाद तुम एक शिला बन जाओगे, जो शिला मेरे आने तक इस गुफा के प्रवेश-द्वार की रखवाली करेगी। उस कारागार से तुम्हें केवल मैं ही मुक्त करूँगा। अगर प्रतीक्षा तुम्हें लम्बी लगी तो उसे और भी लम्बी कर दिया जायेगा और अगर छोटी लगी तो और भी छोटी। विश्वास करना और धैर्य रखना।” इसके बाद उसने मुझे भी गले से लगा लिया।

“फिर दोबारा सातों साथियों की ओर मुड़ते हुए उसने हाथ हिलाकर संकेत किया और कहा, ‘साथियो, मेरे पीछे-पीछे आओ।’

“और वह उनके आगे-आगे ढलान से नीचे उतरने लगा; उसका गौरवशाली मस्तक उठा हुआ था, उसकी स्थिर दृष्टि दूर कुछ खोज रही थी, उसके पवित्र चरण नाममात्र के लिये धरती का स्पर्श कर रहे थे। जब वे कोहरे की चादर के छोर पर पहुँचे तो सूर्य की किरणें समुद्र पर छाये काले बादल के निचले किनारे को बेधकर निकल आईं। इससे आकाश में एक उज्ज्वल मेहराबदार मार्ग बन गया जिस पर फैला प्रकाश इतना विलक्षण था कि मनुष्य के शब्द उसका वर्णन नहीं कर सकते थे, इतना देदीप्यमान था कि मनुष्य की आँखें उसे देख नहीं सकती थीं। और मुझे ऐसा दिखाई दिया जैसे मुर्शिद तथा उसके साथ ही वे सातों पर्वत से अलग हो गये हों और धुन्ध पर चलते हुए सीधे मेहराब के अन्दर—सूर्य के अन्दर—प्रवेश कर रहे हों। और मुझे दुःख हो रहा था अकेले पीछे रह जाने का—ओह, इतना अकेला!”

लम्बे दिन के कठोर परिश्रम से थके-हारे व्यक्ति के समान शमदाम सहसा निढाल होकर मौन हो गया; उसका सिर झुक गया, पलकें बन्द हो गईं और वक्ष अनियमित साँसों से ऊँचा-नीचा होने लगा। इस अवस्था में



वह बहुत देर तक रहा। मैं उसके लिये सान्त्वना के कुछ शब्द ढूँढ़ ही रहा था कि उसने अपना सिर उठाया और बोला,

“तुम भाग्य के लाड़ले हो। एक अभाग को माफ़ कर दो। मैं बहुत बोल गया हूँ—शायद बहुत ज़्यादा। मैं और कर ही क्या सकता था? क्या एक व्यक्ति, जिसकी जिह्वा ने एक सौ पचास साल का उपवास किया हो, केवल एक ‘हाँ’ या ‘ना’ कहकर अपना उपवास तोड़ सकता है? क्या एक शमदाम एक मीरदाद हो सकता है?”

“शमदाम, मेरे भाई, क्या मैं एक प्रश्न पूछ सकता हूँ?”

“तुम कितने नेक हो कि मुझे भाई कहकर सम्बोधित कर रहे हो। जिस दिन मेरे एकमात्र भाई की मृत्यु हुई थी उस दिन से किसी ने मुझे भाई कहकर नहीं पुकारा, और उसे मेरे कई वर्ष बीत गये हैं। तुम्हारा प्रश्न क्या है?”

“मीरदाद इतना महान् शिक्षक है, इसलिये मैं बड़ा हैरान हूँ कि आज तक दुनिया ने उसके या उसके सात साथियों में से किसी के बारे में नहीं सुना। यह कैसे हुआ?”

“शायद, वह एक उचित अवसर की प्रतीक्षा में है। शायद वह किसी और नाम से शिक्षा दे रहा है। एक बात का मुझे पूर्ण विश्वास है: मीरदाद संसार को बदल देगा जैसे उसने नौका को बदल दिया था।”

“उसे मेरे तो बहुत समय बीत चुका होगा।”

“नहीं, मीरदाद नहीं मर सकता। मीरदाद मृत्यु से अधिक शक्तिशाली है।”

“तो क्या तुम्हारा तात्पर्य है कि वह संसार को नष्ट कर देगा जैसे उसने नौका को नष्ट कर दिया था?”

“नहीं, नहीं। जैसे उसने नौका को भार-मुक्त कर दिया था, वह संसार को भार-मुक्त कर देगा। और फिर से जलायेगा उस अमर ज्योति को जिसे मेरे जैसे लोगों ने भ्रमों के असंख्य ढेरों के नीचे छिपा दिया है और अब आहें भरते हुए रोते हैं कि हाय, हमारे इर्द-गिर्द अँधेरा क्यों है। मनुष्य ने अपने अन्दर अपना जो कुछ ध्वस्त कर दिया है, वह उसका पुनर्निर्माण करेगा। किताब शीघ्र ही तुम्हारे हाथों में होगी। उसे पढ़ना; तुम्हें प्रकाश

दिखाई देगा। अब मुझे और देर नहीं करनी चाहिये। कुछ क्षण यहीं मेरे लौटने की प्रतीक्षा करो; मेरे साथ हरगिज़ मत आना।”

वह उठा और मुझे आश्चर्य तथा उत्सुकता में डूबा छोड़कर तेज़ी के साथ बाहर निकल गया। मैं भी बाहर निकल आया, लेकिन खड्ड के कगार से आगे नहीं बढ़ा।

जो दृश्य मेरी आँखों के सामने फैला था उसकी जादू-भरी रेखाओं और रंगों ने मेरी आत्मा को ऐसा मन्त्र-मुग्ध कर दिया कि क्षण-भर के लिये मैंने अपने अस्तित्व को द्रवित होकर छोटी-छोटी अदृश्य फुहारों के रूप में हर वस्तु के ऊपर और अन्दर बिखरता हुआ महसूस किया: दूर मोतिया कोहरे से ढके शान्त सागर पर; कभी मुड़ती, कभी लेटती, पर समुद्र-तट से शुरू होकर एक के बाद एक जल्दी-जल्दी उठ रही और निरन्तर ऊपर की ओर सरकते-सरकते बीहड़ गिरि-शिखरों की ठीक चोटियों तक पहुँच रही पहाड़ियों पर; धरती की हरियाली से घिरी हुई पहाड़ियों के ऊपर बसी शान्त बस्तियों पर; पर्वतों के हृदय के तरल प्रवाह से अपनी प्यास बुझा रही और परिश्रम-रत मनुष्यों तथा दूब चरते पशुओं से जड़ी, पहाड़ियों की गोद में दुबकी हरी-भरी वादियों पर; पर्वतों द्वारा समय के विरुद्ध लड़े जा रहे युद्ध में उन्हें लगे घावों के सजीव चिह्नों जैसे बड़े-बड़े खड्डों और तंग घाटियों में; अलसाये समीर में; ऊपर नीले आकाश में; नीचे भस्मरंगी धरती पर।

इधर-उधर भटकती मेरी आँखें जब ढलान पर आकर ठहरिं तभी मुझे मुखिया तथा उसके द्वारा लज्जापूर्वक सुनाये गए अपने और मीरदाद तथा किताब के वृत्तान्त का ध्यान आया। और तब उस अदृश्य शक्ति पर मुझे महान् आश्चर्य हुआ जिसने मुझे भेजा तो था एक वस्तु की तलाश में, और पहुँचा दिया किसी दूसरी वस्तु तक। और मैंने मन ही मन उस अज्ञात शक्ति को धन्य-धन्य कहा।

शीघ्र ही मुखिया लौट आया और बीते समय के साथ पीले पड़ चुके कपड़े में लिपटा एक छोटा-सा पुलिन्दा हाथों में देते हुए बोला:

“अब तक मेरे पास रही यह धरोहर अब से तुम्हारे पास रहेगी।



इस धरोहर के प्रति वफादार रहना। अब मेरी दूसरी घड़ी निकट है। मेरे कारागार के द्वार मेरे स्वागत के लिये खुल रहे हैं। शीघ्र ही वे मुझे कैद करने के लिये बन्द हो जायेंगे। वे कितना समय बन्द रहेंगे—यह केवल मीरदाद ही बता सकता है। शीघ्र ही शमदाम का नाम हर स्मृति-पटल पर से मिट जायेगा। कितना दुःखदायी, ओह, कितना दुःखदायी होता है मिटा दिया जाना! पर यह मैं क्यों कह रहा हूँ? मीरदाद की स्मृति से तो कभी कुछ नहीं मिटता। जो कोई भी मीरदाद की स्मृति में जीता है, वह सदा जीवित रहता है।”

इसके बाद मुखिया देर तक मौन रहा। फिर उसने अपना सिर उठाया और अश्रु-पूरित नेत्रों से मेरी ओर देखते हुए बहुत धीमे स्वर में, जो कठिनाई से सुना जा सकता था, फिर कहना शुरू किया:

“जल्दी ही तुम वापस नीचे संसार में पहुँच जाओगे। परन्तु तुम नग्न हो, और संसार नग्नता से घृणा करता है। अपनी आत्मा को भी वह चिथड़ों में लपेटकर रखता है। मेरे वस्त्र अब मेरे किसी काम के नहीं रहे। मैं इन्हें उतारने के लिये गुफा में जाता हूँ ताकि तुम इनसे अपनी नग्नता को ढक सको, हालाँकि शमदाम के वस्त्र शमदाम के सिवाय और किसी को ठीक नहीं बैठ सकते। मेरी कामना है कि वे तुम्हारे लिये बन्धन न बनें।”

मैंने इस सुझाव पर कोई राय प्रकट नहीं की; एक प्रसन्न मौन के साथ इसे स्वीकार कर लिया। जब मुखिया कपड़े उतारने के लिये गुफा में गया तो मैंने किताब पर लिपटा कपड़ा हटाया और घबराहट के साथ पीले पड़ चुके उसके चमड़े के पृष्ठों को पलटने लगा। जिस पृष्ठ को मैंने सबसे पहले पढ़ने का यत्न किया, शीघ्र ही अपने आपको उसी में मग्न पाया। मैं पढ़ता गया, और ज्यों-ज्यों पढ़ता गया और अधिक तल्लीन होता चला गया। अवचेतन मन में मैं प्रतीक्षा कर रहा था कि मुखिया आवाज़ देकर कहे कि उसने कपड़े उतार दिये हैं और मुझे कपड़े पहनने के लिये बुलाये। पर समय बीतता गया और उसने मुझे बुलाया नहीं।

किताब के पृष्ठों पर से आँखें उठाकर मैंने गुफा के अन्दर झाँका तो देखा कि गुफा के बीच में मुखिया के कपड़ों का ढेर पड़ा है। परन्तु



मुखिया स्वयं दिखाई नहीं दे रहा था। मैंने उसे कई बार पुकारा, हर बार पहले से ऊँचे स्वर में; पर कोई उत्तर न मिला। मैं बहुत डर गया और अत्यन्त परेशान हो उठा। जिस सँकरे प्रवेश-द्वार पर मैं खड़ा था, उसके सिवाय गुफा से बाहर निकलने का और कोई मार्ग नहीं था। मुखिया प्रवेश-द्वार से बाहर नहीं गया—यह मैं निश्चित रूप से जानता था, इसमें मुझे लेशमात्र भी सन्देह नहीं था। क्या वह केवल एक प्रेत था? पर मेरे अपने हाड़-मांस से मैंने उसके हाड़-मांस का स्पर्श किया था। और फिर उसकी किताब मेरे हाथ में थी, और उसके वस्त्र गुफा में पड़े थे। कहीं वह कपड़ों के नीचे तो नहीं छिपा है? मैं आगे बढ़ा और उन्हें एक-एक करके उठाया, और ऐसा करते हुए मुझे अपने आप पर हँसी भी आई। ऐसे और कई ढेर भी मुखिया के भारी भरकम शरीर को नहीं ढक सकते थे। क्या वह किसी रहस्यमय ढंग से गुफा में से निकलकर गहरे काले खड्ड में गिर गया?

जिस तेज़ी से यह अन्तिम विचार मेरे मन में कौंधा, उसी तेज़ी से दौड़कर मैं बाहर आया, और प्रवेश-द्वार के बाहर कुछ ही क़दम की दूरी पर मैं सहसा ज़मीन में गड़-सा गया जब मैंने देखा कि सामने खड्ड के ठीक किनारे पर एक बहुत बड़ी शिला पड़ी है। यह शिला पहले वहाँ नहीं थी। वह देखने में एक दुबके हुए पशु जैसी लगती थी, परन्तु उस पशु का सिर मनुष्य के सिर से बहुत मिलता-जुलता था; मुखाकृति मोटी और बेडौल थी, ठोड़ी चौड़ी तथा ऊपर को उठी हुई, जबड़े भिंचे हुए, होंठ कसकर बन्द थे, और आँखें भेंगी नज़र से उत्तर दिशा में शून्य को ताक रही थीं।

यह है  
**किताब-ए-मीरदाद**

उस रूप में जिसमें इसे  
उसके साथियों में से  
सबसे छोटे  
और विनम्र

नरौंदा

ने लेखनीबद्ध किया।

जिनमें

आत्म-विजय के लिये

तड़प है

उनके लिये यह

आलोक-स्तम्भ

और

आश्रय है।

बाक़ी सब

इससे सावधान रहें।

## मीरदाद अपना पर्दा हटाता है और पर्दों और मुहरों के विषय में बात करता है

नरौंदा: उस शाम आठों साथी खाने की मेज़ के चारों ओर जमा थे और मीरदाद एक ओर खड़ा चुपचाप उनके आदेशों की प्रतीक्षा कर रहा था।

साथियों पर लागू पुरातन नियमों में से एक यह था कि जहाँ तक सम्भव हो वार्तालाप में 'मैं' शब्द का प्रयोग न किया जाये। साथी शमदाम मुखिया के रूप में अर्जित अपनी उपलब्धियों के बारे में डींग मार रहा था। यह दिखाते हुए कि उसने नौका की सम्पत्ति और प्रतिष्ठा में कितनी वृद्धि की है, उसने बहुत-से आँकड़े प्रस्तुत किये। ऐसा करते हुए उसने वर्जित शब्द का बहुत अधिक प्रयोग किया। साथी मिकेयन ने इसके लिये उसे एक हलकी-सी झिड़की दी। इस पर एक उत्तेजनापूर्ण विवाद छिड़ गया कि इस नियम का क्या उद्देश्य था और इसे किसने बनाया था—पिता हज़रत नूह ने या मुख्य साथी अर्थात् सैम ने। उत्तेजना से एक-दूसरे पर दोष लगाने की नौबत आ गई और इसके फलस्वरूप बात इतनी बढ़ गई कि कहा तो बहुत-कुछ गया पर समझ में किसी की कुछ नहीं आया।

विवाद को हँसी के वातावरण में बदलने की इच्छा से शमदाम मीरदाद की ओर मुड़ा और स्पष्ट उपहास के स्वर में बोला:

“इधर देखो, कुलपिता से भी बड़ी हस्ती यहाँ मौजूद है। मीरदाद, शब्दों की इस भूलभुलैयाँ से निकलने की हमें राह बता।”

सबकी दृष्टि मुड़कर मीरदाद पर टिक गई, और हमें बड़ा आश्चर्य तथा प्रसन्नता हुई जब, सात वर्ष की लम्बी अवधि में पहली बार, मीरदाद ने अपना मुँह खोला, और हमें सम्बोधित किया।



**मीरदाद:** नौका के मेरे साथियो, शमदाम की इच्छा चाहे उपहास में प्रकट की गई है, किन्तु अनजाने ही मीरदाद के गम्भीर निर्णय की पूर्व-सूचना देती है। क्योंकि जिस दिन मीरदाद ने इस नौका में प्रवेश किया था, उसी दिन उसने अपनी मुहरें तोड़ने, अपने पर्दे हटाने और तुम्हारे तथा संसार के सम्मुख अपने वास्तविक रूप में प्रकट होने के लिये इसी समय और स्थान को—इसी परिस्थिति को—चुना था।

सात मुहरों से मीरदाद ने अपना मुँह बन्द किया हुआ है। सात पर्दों से उसने अपना चेहरा ढक रखा है, ताकि जब तुम शिक्षा ग्रहण करने के योग्य हो जाओ तो वह तुम्हें और संसार को सिखा दे कि कैसे अपने होंठों पर लगी मुहरें तोड़ी जायें, अपनी आँखों पर पड़े पर्दे हटाये जायें और इस तरह अपने आपको अपने सामने अपने ही सम्पूर्ण तेज में प्रकट किया जाये।

तुम्हारी आँखें बहुत-से पर्दों से ढकी हुई हैं। हर वस्तु, जिस पर तुम दृष्टि डालते हो, मात्र एक पर्दा है।

तुम्हारे होंठों पर बहुत-सी मुहरें लगी हुई हैं। हर शब्द, जिसका तुम उच्चारण करते हो, मात्र एक मुहर है।

क्योंकि पदार्थ, चाहे उनका कोई भी रूप या प्रकार क्यों न हो, केवल पर्दे और पोतड़े हैं जिनमें जीवन ढका और लिपटा हुआ है। तुम्हारी आँख, जो स्वयं एक पर्दा और पोतड़ा है, पर्दों और पोतड़ों के सिवाय तुम्हें कहीं और कैसे ले जा सकती है?

और शब्द—वे क्या अक्षरों और मात्राओं में बन्द किये हुए पदार्थ नहीं हैं? तुम्हारा होंठ, जो स्वयं एक मुहर है, मुहरों के सिवाय और क्या बोल सकता है?

आँखें पर्दा डाल सकती हैं, पर्दों को बेध नहीं सकतीं।

होंठ मुहर लगा सकते हैं, मुहरों को तोड़ नहीं सकते।

इससे अधिक इनसे कुछ न माँगो। शरीर के कार्यों में से इनके हिस्से का कार्य इतना ही है; और इसे ये भली-भाँति निभा रहे हैं। पर्दे डालकर, और मुहरें लगाकर ये तुमसे पुकार-पुकार कर कह रहे हैं कि आओ, और

उसकी खोज करो जो पर्दों के पीछे छिपा है, और उसका भेद प्राप्त करो जो मुहरों के नीचे बन्द है।

पर्दों को बेधने के लिये तुम्हें पलकों, भौंहों और बरौनियों से ढकी इन आँखों की नहीं, बल्कि एक और ही आँख की आवश्यकता है।

मुहरों को तोड़ने के लिये तुम्हें अपनी नाक के नीचे के जाने-पहचाने मांस-पिण्ड की नहीं, बल्कि एक और ही होंठ की आवश्यकता है।

अगर तुम अन्य वस्तुओं को सही रूप से देखना चाहते हो तो पहले स्वयं आँख को ठीक से देखो। तुम्हें आँख के द्वारा नहीं, आँख में से देखना होगा ताकि इससे परे की सब वस्तुओं को तुम देख सको।

यदि तुम दूसरे शब्द ठीक से बोलना चाहते हो तो पहले होंठ और ज़बान ठीक से बोलो। तुम्हें होंठ और ज़बान के द्वारा नहीं, बल्कि होंठ और ज़बान में से बोलना होगा ताकि उनसे परे के सब शब्द तुम बोल सको।

यदि तुम केवल ठीक से देखोगे और बोलोगे, तो तुम्हें अपने सिवाय और कुछ नज़र नहीं आयेगा, और न तुम अपने सिवाय और कुछ बोलोगे। क्योंकि प्रत्येक वस्तु के अन्दर और प्रत्येक वस्तु से परे, सब शब्दों में और सब शब्दों से परे, केवल तुम ही हो—देखनेवाले और बोलनेवाले।

यदि फिर तुम्हारा संसार एक चकरा देनेवाली पहेली है, तो वह इसलिये कि तुम स्वयं ही वह चकरा देनेवाली पहेली हो। और यदि तुम्हारी वाणी एक विकट भूलभुलैयाँ है, तो वह इसलिये कि तुम स्वयं ही वह विकट भूलभुलैयाँ हो। चीज़ें जैसी हैं वैसी ही रहने दो; उन्हें बदलने का प्रयास मत करो। क्योंकि वे जो प्रतीत होती हैं, इसलिये प्रतीत होती हैं कि तुम वह प्रतीत होते हो जो प्रतीत होते हो। जब तक तुम उन्हें दृष्टि और वाणी प्रदान नहीं करते, वे न देख सकती हैं, न बोल सकती हैं। यदि उनकी वाणी कर्कश है तो अपनी ही जिह्वा की ओर देखो। यदि वे कुरूप दिखाई देती हैं तो शुरू में भी और आखिर में भी अपनी ही आँख को परखो।

पदार्थों से उनके पर्दे उतार फेंकने के लिये मत कहो। अपने पर्दे उतार फेंको, पदार्थों के पर्दे स्वयं उतर जायेंगे। न ही पदार्थों से उनकी मुहरें तोड़ने के लिये कहो। अपनी मुहरें तोड़ दो, अन्य सबकी मुहरें स्वयं टूट जायेंगी।

अपने पर्दे उतारने और अपनी मुहरें तोड़ने की कुंजी एक शब्द है जिसे तुम सदैव अपने होंठों में पकड़े रहते हो। शब्दों में यह सबसे तुच्छ और सबसे महान् है। मीरदाद ने इसे सिरजनहार शब्द कहा है।

नरौंदा: मुर्शिद रुक गये; और हम सब पर एक गहरा किन्तु उत्कण्ठा-पूर्ण मौन छा गया। अन्त में मिकेयन तीव्र अधीरता के साथ बोल उठा:

मिकेयन: हमारे कान उस शब्द को सुनने के लिये बेचैन हैं। हमारे हृदय उस कुंजी को पाने के लिये तरस रहे हैं। अपनी बात कहते जाओ, मीरदाद; हम विनती करते हैं, अपनी बात कहते जाओ।



## सिरजनहार शब्द

‘मैं’ समस्त वस्तुओं का स्रोत और केन्द्र है

**मीरदाद:** जब तुम्हारे मुख से ‘मैं’ निकले तो तुरन्त अपने हृदय में कहो, “प्रभु, ‘मैं’ की विपत्तियों में मेरा आश्रय बनो, और ‘मैं’ के परम आनन्द की ओर चलने में मेरा मार्गदर्शन करो।” क्योंकि इस शब्द के अन्दर, यद्यपि यह अत्यन्त साधारण है, प्रत्येक अन्य शब्द की आत्मा कैद है। एक बार उसे मुक्त कर दो, तो सुगन्ध फैलायेगा तुम्हारा मुख, मिठास में पगी होगा तुम्हारी जिह्वा, और तुम्हारे प्रत्येक शब्द से जीवन के आह्लाद का रस टपकेगा। उसे कैद रहने दो, तो दुर्गन्धपूर्ण होगा तुम्हारा मुख, कड़वी होगी तुम्हारी जिह्वा और तुम्हारे प्रत्येक शब्द से मृत्यु का मवाद टपकेगा।

क्योंकि, साथियो, ‘मैं’ ही सिरजनहार शब्द है। और जब तक तुम इसकी चमत्कारी शक्ति को प्राप्त नहीं करोगे; जब तक तुम उस शक्ति के स्वामी नहीं बन जाओगे, तब तक तुम्हारी हालत ऐसी होगी कि यदि गाना चाहोगे तो आर्तनाद करोगे; यदि शान्ति चाहोगे तो युद्ध करोगे; यदि प्रकाश में उड़ान भरना चाहोगे, तो अँधेरे कारागारों में पड़े सिकुड़ोगे।

तुम्हारा ‘मैं’ अस्तित्व की तुम्हारी चेतना-मात्र है, मूक और देह-रहित अस्तित्व की, जिसे वाणी और देह दे दी गई है। यह तुम्हारे अन्दर का अश्रव्य है जिसे श्रव्य बना दिया गया है, अदृश्य है जिसे दृश्य बना दिया गया है ताकि जब तुम देखो तो अदृश्य को देख सको; और जब सुनो तो अश्रव्य को सुन सको। क्योंकि अभी तुम आँख और कान के साथ बँधे हुए हो। और यदि तुम इन आँखों के द्वारा न देखो, और यदि तुम इन कानों के द्वारा न सुनो, तो तुम कुछ भी देख और सुन नहीं सकते।

‘मैं’ के विचार-मात्र से तुम अपने दिमाग में विचारों के समुद्र को हिलकोरने लगते हो। वह समुद्र रचना है तुम्हारे ‘मैं’ की जो एक साथ विचारक और विचार दोनों है। यदि तुम्हारे विचार ऐसे हैं जो चुभते, काटते या नोचते हैं, तो समझ लो कि तुम्हारे अन्दर के ‘मैं’ ने ही उन्हें डंक, दाँत और पंजे प्रदान किये हैं।

मीरदाद चाहता है कि तुम यह भी जान लो कि जो प्रदान कर सकता है वह छीन भी सकता है।

‘मैं’ की भावना-मात्र से तुम अपने हृदय में भावनाओं का कुआँ खोद लेते हो। यह कुआँ रचना है तुम्हारे ‘मैं’ की जो एक साथ अनुभव करनेवाला और अनुभव दोनों है। यदि तुम्हारे हृदय में कँटीली झाड़ियाँ हैं, तो जान लो कि तुम्हारे अन्दर के ‘मैं’ ने ही उन्हें वहाँ लगाया है।

मीरदाद चाहता है कि तुम यह भी जान लो कि जो इतनी आसानी से लगा सकता है वह उतनी ही आसानी से जड़ से उखाड़ भी सकता है।

‘मैं’ के उच्चारण-मात्र से तुम शब्दों के एक विशाल समूह को जन्म देते हो; प्रत्येक शब्द होता है एक वस्तु का प्रतीक; प्रत्येक वस्तु होती है एक संसार का प्रतीक; प्रत्येक संसार होता है एक ब्रह्माण्ड का घटक अंग। वह ब्रह्माण्ड रचना है तुम्हारे ‘मैं’ की जो एक साथ स्रष्टा और सृष्टि दोनों है। यदि तुम्हारी सृष्टि में कुछ हौए हैं, तो जान लो कि तुम्हारे अन्दर के ‘मैं’ ने ही उन्हें अस्तित्व दिया है।

मीरदाद चाहता है कि तुम यह भी जान लो कि जो रचना कर सकता है वह नष्ट भी कर सकता है।

जैसा स्रष्टा होता है, वैसी ही होती है उसकी रचना। क्या कोई अपने आपसे अधिक रचना रच सकता है? या अपने आपसे कम? स्रष्टा केवल अपने आपको ही रचता है—न अधिक, न कम।

एक मूल-स्रोत है ‘मैं’ जिसमें से सब वस्तुएँ प्रवाहित होती हैं और जिसमें वे वापस चली जाती हैं। जैसा मूल स्रोत होता है, वैसा ही होता है उसका प्रवाह भी।

एक जादू की छड़ी है 'मैं'। फिर भी यह छड़ी ऐसी किसी वस्तु को पैदा नहीं कर सकती जो जादूगर में न हो। जैसा जादूगर होता है, वैसी ही होती है उसकी छड़ी की पैदा की हुई वस्तुएँ।

इसलिये, जैसी तुम्हारी चेतना है, वैसा ही है तुम्हारा 'मैं'। जैसा तुम्हारा 'मैं' है, वैसा ही है तुम्हारा संसार। यदि इस 'मैं' का अर्थ स्पष्ट और निश्चित है, तो तुम्हारे संसार का अर्थ भी स्पष्ट और निश्चित है; और तब तुम्हारे शब्द कभी भूलभुलैयाँ नहीं होंगे; न ही होंगे तुम्हारे कर्म कभी पीड़ा के घोंसले। यदि यह धुँधला और अनिश्चित है, तो तुम्हारा संसार भी धुँधला और अनिश्चित है; और तुम्हारे शब्द केवल उलझाव हैं, तुम्हारे कर्म पीड़ा की उत्पादनशालाएँ।

यदि यह परिवर्तन-रहित तथा चिरस्थायी है, तो तुम्हारा संसार भी परिवर्तन-रहित और चिरस्थायी है; और तब तुम हो समय से भी अधिक महान् तथा स्थान से भी कहीं अधिक विस्तृत। यदि यह अस्थायी और परिवर्तनशील है, तो तुम्हारा संसार भी अस्थायी और परिवर्तनशील है; और तुम हो धुएँ की एक परत जिस पर सूर्य अपनी कोमल साँस छोड़ रहा है।

यदि यह एक है तो तुम्हारा संसार भी एक है; और तब तुम्हारे और स्वर्ग तथा पृथ्वी के सब निवासियों के बीच अनन्त शान्ति है। यदि यह अनेक है तो तुम्हारा संसार भी अनेक है; और तुम अपने साथ तथा प्रभु के असीम साम्राज्य के प्रत्येक प्राणी के साथ अन्त-हीन युद्ध कर रहे हो।

'मैं' तुम्हारे जीवन का केन्द्र है जिसमें से वे वस्तुएँ निकलती हैं जिनसे तुम्हारा सम्पूर्ण संसार बना है, और जिसमें वे सब वापस आकर मिल जाती हैं। यदि यह स्थिर है तो तुम्हारा संसार भी स्थिर है; ऊपर या नीचे की कोई भी शक्ति तुम्हें दायें या बायें नहीं डुला सकती। यदि यह चलायमान है तो तुम्हारा संसार भी चलायमान है; और तुम एक असहाय पत्ता हो जो हवा के क्रुद्ध बवण्डर की लपेट में आ गया है।

और देखो, तुम्हारा संसार स्थिर अवश्य है, परन्तु केवल अस्थिरता में। निश्चित है तुम्हारा संसार, परन्तु केवल अनिश्चितता में; नित्य है तुम्हारा संसार, परन्तु केवल अनित्यता में; और एक है तुम्हारा संसार, परन्तु केवल अनेकता में।



तुम्हारा संसार है क़ब्रों में बदलते पालनों का, और पालनों में बदलती क़ब्रों का; रातों को निगलते दिनों का, और दिनों को उगलती रातों का; युद्ध की घोषणा कर रही शान्ति का, और शान्ति की प्रार्थना कर रहे युद्ध का; अश्रुओं पर तैरती मुस्कानों का, और मुस्कानों से दमकते अश्रुओं का।

तुम्हारा संसार निरन्तर प्रसव-वेदना में तड़पता संसार है, जिसकी धाय है मृत्यु।

तुम्हारा संसार छलनियों और झरनियों का संसार है जिसमें कोई दो छलनियाँ या झरनियाँ एक जैसी नहीं हैं। और तुम निरन्तर उन वस्तुओं को छानने और झारने में खपते रहे हो जिन्हें छाना या झारा नहीं जा सकता।

तुम्हारा संसार अपने ही विरुद्ध विभाजित है, क्योंकि तुम्हारे अन्दर का 'मैं' इसी प्रकार विभाजित है।

तुम्हारा संसार अवरोधों और बाड़ों का संसार है, क्योंकि तुम्हारे अन्दर का 'मैं' अवरोधों और बाड़ों का 'मैं' है। कुछ वस्तुओं को यह पराया मानकर बाड़ से बाहर कर देना चाहता है; कुछ को अपना मानकर बाड़ के अन्दर ले लेना चाहता है। परन्तु जो वस्तु बाड़ के बाहर है वह सदा बलपूर्वक अन्दर आती रहती है, और जो बाड़ के अन्दर है वह सदा बलपूर्वक बाहर जाती रहती है। क्योंकि वे एक ही माँ की—तुम्हारे 'मैं' की—सन्तान होने के कारण अलग-अलग नहीं होना चाहतीं।

और तुम, उनके शुभ मिलाप से प्रसन्न होने के बजाय, अलग न हो सकनेवालों को अलग करने की निष्फल चेष्टा में फिर जुट जाते हो। 'मैं' के अन्दर की दरार को भरने के बजाय तुम अपने जीवन को छील-छील कर नष्ट करते जाते हो; तुम आशा करते हो कि इस तरह तुम इसे एक पच्चड़ बना लोगे जिसे तुम, जो तुम्हारी समझ में तुम्हारा 'मैं' है और जो तुम्हारी कल्पना में तुम्हारे 'मैं' से भिन्न है, उन दोनों के बीच ठोक सको।

इसीलिये मनुष्यों के शब्द विष-भरे होते हैं। इसीलिये उनके दिन सन्ताप में डूबे होते हैं। इसीलिये उनकी रातें पीड़ा से तड़पती हैं।

हे साधुओ, मीरदाद तुम्हारे 'मैं' के अन्दर की दरारों को भर देना चाहता है ताकि तुम अपने साथ, मनुष्य-मात्र के साथ, और सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के साथ शान्तिपूर्वक जी सको।

मीरदाद तुम्हारे 'मैं' के अन्दर भरे विष को सोख लेना चाहता है ताकि तुम ज्ञान की मिठास का स्वाद चख सको।

मीरदाद तुम्हें तुम्हारे 'मैं' को तोलने की विधि सिखाना चाहता है ताकि तुम पूर्ण सन्तुलन का आनन्द ले सको।

*नरौंदा:* मुर्शिद फिर रुक गये, और हम सब पर फिर से एक गहन मौन छा गया। एक बार फिर मिकेयन ने मौन को भंग करते हुए कहा:

*मिकेयन:* तुम्हारे शब्द हमारी उत्सुकता बढ़ा रहे हैं, मीरदाद। वे अनेक द्वार खोलते हैं, पर हमें देहरी पर ही छोड़ जाते हैं। हमें इससे आगे ले चलो—हमें अन्दर ले चलो।

## पावन त्रिपुटी और पूर्ण सन्तुलन

**मीरदादः** यद्यपि तुममें से हर-एक अपने-अपने 'मैं' में केन्द्रित है, फिर भी तुम सब एक 'मैं' में केन्द्रित हो—प्रभु के एकमात्र 'मैं' में।

प्रभु का 'मैं', मेरे साथियो, प्रभु का शाश्वत, एकमात्र शब्द है। इसमें प्रभु प्रकट होता है जो परम चेतना है। इसके बिना वह पूर्ण मौन ही रह जाता। इसी के द्वारा स्रष्टा ने अपनी रचना की है। इसी के द्वारा वह निराकार अनेक आकार धारण करता है जिनमें से होते हुए जीव फिर से निराकारता में पहुँच जायेंगे।

अपने आपका अनुभव करने के लिये; अपने आपका चिन्तन करने के लिये; अपने आपका उच्चारण करने के लिये प्रभु को 'मैं' से अधिक और कुछ बोलने की आवश्यकता नहीं। इसलिये 'मैं' उसका एकमात्र शब्द है। इसलिये यही शब्द है।

जब प्रभु 'मैं' कहता है तो कुछ भी अनकहा नहीं रह जाता। देखे गये लोक और अनदेखे लोक; जन्म ले चुकी वस्तुएँ और जन्म लेने की प्रतीक्षा कर रही वस्तुएँ; बीत रहा समय और अभी आनेवाला समय—सब, सब-कुछ ही, रेत का एक-एक सूक्ष्म कण तक, इसी शब्द के द्वारा प्रकट होता है और इसी शब्द में समा जाता है। इसी के द्वारा सब वस्तुएँ रची गई थीं। इसी के द्वारा सबका पालन होता है।

यदि किसी शब्द का कोई अर्थ न हो, तो वह शब्द शून्य में गूँजती केवल एक प्रतिध्वनि है। यदि इसका अर्थ सदा एक ही न हो, तो यह गले का कैंसर और ज़बान पर पड़े छाले से अधिक और कुछ नहीं।

प्रभु का शब्द शून्य में गूँजती प्रतिध्वनि नहीं है, न ही गले का कैंसर है, न ही ज़बान पर पड़े छाले, सिवाय उनके लिये जो दिव्य ज्ञान से रहित



हैं। क्योंकि दिव्य ज्ञान वह पवित्र शक्ति है जो शब्द को प्राणवान् बनाती है और उसे चेतना के साथ जोड़ देती है। यह उस अनन्त तराजू की डण्डी है जिसके दो पलड़े हैं—आदि चेतना और शब्द।

आदि चेतना, शब्द और दिव्य ज्ञान—देखो साधुओ, अस्तित्व की यह त्रिपुटी, वे तीन जो एक हैं, वह एक जो तीन है, परस्पर समान, सह-व्यापक, सह-शाश्वत; आत्म-सन्तुलित, आत्म-ज्ञानी, आत्म-पूरक। यह न कभी घटती है न बढ़ती है—सदैव शान्त, सदैव समान। यह है पूर्ण सन्तुलन, ऐ साधुओ।

मनुष्य ने इसे प्रभु नाम दिया है, यद्यपि यह इतना विलक्षण है कि इसे कोई नाम नहीं दिया जा सकता। फिर भी पावन है यह नाम, और पावन है वह जिह्वा जो इसे पावन रखती है।

मनुष्य यदि इस प्रभु की सन्तान नहीं तो और क्या है? क्या वह प्रभु से भिन्न हो सकता है? क्या बड़ का वृक्ष अपने बीज के अन्दर समाया हुआ नहीं है? क्या प्रभु मनुष्य के अन्दर व्याप्त नहीं है?

इसलिये मनुष्य भी एक ऐसी ही पावन त्रिपुटी है: चेतना, शब्द और दिव्य ज्ञान। मनुष्य भी, अपने प्रभु की तरह, एक स्रष्टा है। उसका 'मैं' उसकी रचना है। फिर क्यों वह अपने प्रभु जैसा सन्तुलित नहीं है?

यदि तुम इस पहेली का उत्तर जानना चाहते हो, तो ध्यान से सुनो जो कुछ भी मीरदाद तुम्हें बताने जा रहा है।

## मनुष्य पोतड़ों में लिपटा एक परमात्मा है

मनुष्य पोतड़ों में लिपटा एक परमात्मा है। समय एक पोतड़ा है, स्थान एक पोतड़ा है, देह एक पोतड़ा है, और इसी प्रकार हैं इन्द्रियाँ तथा उनके द्वारा अनुभव-गम्य वस्तुएँ भी। माँ भली प्रकार जानती है कि पोतड़े शिशु नहीं हैं। परन्तु बच्चा यह नहीं जानता।

अभी मनुष्य का अपने पोतड़ों में बहुत अधिक ध्यान रहता है जो हर दिन के साथ, हर युग के साथ बदलते रहते हैं। इसलिये उसकी चेतना में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है; इसीलिये उसका शब्द, जो उसकी चेतना की अभिव्यक्ति है, कभी भी अर्थ में स्पष्ट और निश्चित नहीं होता; और इसीलिये उसके विवेक पर धुन्ध छाई रहती है; और इसीलिये उसका जीवन असन्तुलित है। यह तिगुनी उलझन है।

इसीलिये मनुष्य सहायता की प्रार्थना करता है। उसका आर्तनाद अनादि काल से गूँज रहा है। वायु उसके विलाप से बोझिल है। समुद्र उसके आँसुओं के नमक से खारा है। धरती पर उसकी क़ब्रों से गहरी झुर्रियाँ पड़ गई हैं। आकाश उसकी प्रार्थनाओं से बहरा हो गया है। और यह सब इसलिये कि अभी तक वह अपने 'मैं' का अर्थ नहीं समझता जो उसके लिये है पोतड़े और उनमें लिपटा हुआ शिशु भी।

'मैं' कहते हुए मनुष्य शब्द को दो भागों में चीर देता है; एक, उसके पोतड़े; दूसरा प्रभु का अमर अस्तित्व। क्या मनुष्य वास्तव में अविभाज्य को विभाजित कर देता है? प्रभु न करे ऐसा हो। अविभाज्य को कोई शक्ति विभाजित नहीं कर सकती—ईश्वर की शक्ति भी नहीं। मनुष्य अपरिपक्व

है इसलिये विभाजन की कल्पना करता है। और मनुष्य, एक शिशु, उस अनन्त अस्तित्व को अपने अस्तित्व का वैरी मानकर लड़ाई के लिये कमर कस लेता है और युद्ध की घोषणा कर देता है।

इस युद्ध में, जो बराबरी का नहीं है, मनुष्य अपने मांस के चिथड़े उड़ा देता है, अपने रक्त की नदियाँ बहा देता है; जब कि परमात्मा, जो माता भी है और पिता भी, स्नेह-पूर्वक देखता रहता है, क्योंकि वह भली-भाँति जानता है कि मनुष्य अपने उन मोटे परदों को ही फाड़ रहा है और अपने उस कड़वे द्वेष को ही बहा रहा है जो उस एक के साथ उसकी एकता के प्रति उसे अन्धा बनाये हुए हैं।

यही मनुष्य की नियति है—लड़ना और रक्त बहाना और मूर्च्छित हो जाना, और अन्त में जागना और 'मैं' के अन्दर की दरार को अपने मांस से भरना और अपने रक्त से उसे मजबूती से बन्द कर देना।

इसलिये, साथियो, तुम्हें सावधान कर दिया गया है—और बड़ी बुद्धिमानी के साथ सावधान कर दिया गया है—कि 'मैं' का कम से कम प्रयोग करो। क्योंकि जब तक 'मैं' से तुम्हारा तात्पर्य पोतड़े हैं, उनमें लिपटा केवल शिशु नहीं; जब तक इसका अर्थ तुम्हारे लिये एक चलनी है, कुठाली नहीं, तब तक तुम अपने मिथ्या अभिमान को छानते रहोगे और बटोरोगे केवल मृत्यु को, उससे उत्पन्न सभी पीड़ाओं और वेदनाओं के साथ।



## कुठालियाँ और चलनियाँ

### शब्द प्रभु का और मनुष्य का

प्रभु का शब्द एक कुठाली है। जो कुछ वह रचता है उसको पिघलाकर एक कर देता है, न उसमें से किसी को अच्छा मानकर स्वीकार करता है, न ही बुरा मानकर ठुकराता है। दिव्य ज्ञान से परिपूर्ण होने के कारण वह भली-भाँति जानता है कि उसकी रचना और वह स्वयं एक हैं; कि एक अंश को ठुकराना सम्पूर्ण को ठुकराना है; और सम्पूर्ण को ठुकराना अपने आपको ठुकराना है। इसलिये उसका उद्देश्य और आशय सदा एक ही रहता है।

जब कि मनुष्य का शब्द एक चलनी है। जो कुछ यह रचता है उसे लड़ाई-झगड़े में लगा देता है। यह निरन्तर किसी को मित्र मानकर अपनाता रहता है तो किसी को शत्रु मानकर ठुकराता रहता है। और अकसर इसका कल का मित्र आज का शत्रु बन जाता है; आज का शत्रु, कल का मित्र।

इस प्रकार मनुष्य का अपने ही विरुद्ध क्रूर और निरर्थक युद्ध छिड़ा रहता है। और यह सब इसलिये कि मनुष्य में पवित्र शक्ति का अभाव है, और केवल वही उसे बोध करा सकती है कि वह तथा उसकी रचना एक ही हैं; कि शत्रु को त्याग देना मित्र को त्याग देना है। क्योंकि दोनों शब्द, 'शत्रु' और 'मित्र', उसके शब्द—उसके 'मैं'—की रचना हैं।

जिससे तुम घृणा करते हो और बुरा मानकर त्याग देते हो, उसे अवश्य ही कोई अन्य व्यक्ति, अथवा अन्य पदार्थ, अच्छा मानकर अपना लेता है। क्या एक वस्तु एक ही समय में परस्पर विपरीत दो वस्तुएँ हो सकती हैं?

वह न एक है, न ही दूसरी; केवल तुम्हारे 'मैं' ने उसे बुरा बना दिया है, और किसी दूसरे 'मैं' ने उसे अच्छा बना लिया है।

क्या मैंने कहा नहीं था कि जो रच सकता है वह अ-रचित भी कर सकता है? जिस प्रकार तुम किसी को शत्रु बना लेते हो, उसी प्रकार उसके साथ शत्रुता को मिटा भी सकते हो, या उसे शत्रु से मित्र बना सकते हो। इसके लिये तुम्हारे 'मैं' को एक कुठाली बनना होगा। इसके लिये तुम्हें दिव्य ज्ञान की आवश्यकता है।

इसलिये मैं तुमसे कहता हूँ कि यदि तुम कभी किसी वस्तु के लिये प्रार्थना करते ही हो, तो केवल दिव्य ज्ञान के लिये प्रार्थना करो।

छाननेवाले कभी न बनना, मेरे साथियो। क्योंकि प्रभु का शब्द जीवन है; और जीवन एक कुठाली है जिसमें सबकुछ एक, अविभाज्य एक बन जाता है; सबकुछ पूरी तरह सन्तुलित होता है, और सबकुछ अपने रचयिता—पावन त्रिपुटी—के योग्य होता है। और इससे और कितना अधिक वह तुम्हारे योग्य होगा?

छाननेवाले कभी न बनना, मेरे साथियो; तब तुम्हारा व्यक्तित्व इतना महान्, इतना सर्वव्यापी और इतना सर्वग्राही हो जायेगा कि ऐसी कोई भी चलनी नहीं मिल सकेगी जो तुम्हें अपने अन्दर समेट ले।

छाननेवाले कभी न बनना, मेरे साथियो। पहले शब्द का ज्ञान प्राप्त करो ताकि तुम अपने खुद के शब्द को जान सको। जब तुम अपने शब्द को जान लोगे तब अपनी चलनियों को अग्नि की भेंट कर दोगे। क्योंकि तुम्हारा शब्द और प्रभु का शब्द एक हैं, अन्तर इतना ही है कि तुम्हारा शब्द अभी भी पर्दों में छिपा हुआ है।

मीरदाद तुमसे पर्दे फिंकवा देना चाहता है।

प्रभु के शब्द के लिये समय और स्थान का कोई अस्तित्व नहीं। क्या कोई ऐसा समय था जब तुम प्रभु के साथ नहीं थे? क्या कोई ऐसा स्थान है जहाँ तुम प्रभु के अन्दर नहीं हो? फिर क्यों बाँधते हो तुम अनन्तता को प्रहरों और ऋतुओं की जंजीरों में? और क्यों समेटते हो स्थान को इंचों और मीलों में?

प्रभु का शब्द वह जीवन है जो जन्मा नहीं, इसी लिये अविनाशी है। फिर तुम्हारा शब्द जन्म और मरण की लपेट में क्यों है? क्या तुम केवल प्रभु के जीवन के सहारे जीवित नहीं हो? और क्या मृत्यु से मुक्त कभी मृत्यु का स्रोत हो सकता है?

प्रभु के शब्द में सबकुछ शामिल है। उसके अन्दर न कोई अवरोध हैं, न बाड़ें। फिर तुम्हारा शब्द अवरोधों और बाड़ों से क्यों इतना जर्जर है?

मैं तुमसे कहता हूँ, तुम्हारी हड्डियाँ और मांस भी केवल तुम्हारी ही हड्डियाँ और मांस नहीं हैं। तुम्हारे हाथों के साथ और अनगिनत हाथ भी पृथ्वी और आकाश की उन्हीं देगचियों में डुबकी लगाते हैं जिनमें से तुम्हारी हड्डियाँ और मांस आते हैं और जिनमें वे वापस चले जाते हैं।

न ही तुम्हारी आँखों की ज्योति केवल तुम्हारी ज्योति है। यह उन सबकी ज्योति भी है जो सूर्य के प्रकाश में तुम्हारे भागीदार हैं। यदि मुझमें प्रकाश न होता तो क्या तुम्हारी आँखें मुझे देख पातीं? यह मेरा प्रकाश है जो तुम्हारी आँखों में मुझे देखता है। यह तुम्हारा प्रकाश है जो मेरी आँखों में तुम्हें देखता है। यदि मैं पूर्ण अन्धकार होता तो मेरी ओर ताकने पर तुम्हारी आँखें पूर्ण अन्धकार ही होतीं।

न ही तुम्हारे वक्ष में चलता श्वास केवल तुम्हारा श्वास है। जो श्वास लेते हैं, या जिन्होंने कभी श्वास लिया था, वे सब तुम्हारे वक्ष में श्वास ले रहे हैं। क्या यह आदम का श्वास नहीं जो अभी भी तुम्हारे फेफड़ों को फुला रहा है? क्या यह आदम का हृदय नहीं जो आज भी तुम्हारे हृदय के अन्दर धड़क रहा है?

न ही तुम्हारे विचार तुम्हारे अपने विचार हैं। सार्वजनिक चिन्तन का समुद्र दावा करता है कि यह विचार उसके हैं; और यही दावा करते हैं चिन्तन करनेवाले अन्य सब प्राणी जो तुम्हारे साथ उस समुद्र में भागीदार हैं।

न ही तुम्हारे स्वप्न केवल तुम्हारे स्वप्न हैं। तुम्हारे स्वप्नों में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड अपने सपने देख रहा है।



न ही तुम्हारा घर केवल तुम्हारा घर है। यह तुम्हारे मेहमान का और उस मक्खी, उस चूहे, उस बिल्ली का, और उन सब प्राणियों का भी घर है जो तुम्हारे साथ इसका उपयोग करते हैं।

इसलिये, बाड़ों से सावधान रहो। तुम केवल भ्रम को बाड़ के अन्दर लाते हो और सत्य को बाड़ के बाहर निकालते हो। और जब तुम अपने आपको बाड़ के अन्दर देखने के लिये मुड़ते हो, तो अपने सामने खड़ा पाते हो मृत्यु को जो भ्रम का दूसरा नाम है।

मनुष्य को, ऐ साधुओ, प्रभु से अलग नहीं किया जा सकता; और इसलिये अपने साथी मनुष्यों से और अन्य प्राणियों से भी उसे अलग नहीं किया जा सकता क्योंकि वे भी शब्द से उत्पन्न हुए हैं।

शब्द सागर है, तुम बादल हो, और बादल क्या बादल हो सकता है यदि सागर उसके अन्दर न हो? निःसन्देह मूर्ख है वह बादल जो अपने रूप और अपने अस्तित्व को सदा के लिये बनाये रखने के उद्देश्य से आकाश में अधर टँगे रहने के प्रयास में ही अपना जीवन नष्ट करना चाहता है। अपने मूर्खतापूर्ण श्रम का उसे भग्न आशाओं और कटु मिथ्याभिमान के सिवाय और क्या फल प्राप्त होगा? यदि वह अपने आपको गँवा नहीं देता, तो अपने आपको पा नहीं सकता। यदि वह बादल के रूप में मरकर लुप्त नहीं हो जाता, तो अपने अन्दर के सागर को पा नहीं सकता जो उसका एकमात्र अस्तित्व है।

मनुष्य एक बादल है जो प्रभु को अपने अन्दर लिये हुए है। यदि वह अपने आपसे रिक्त नहीं हो जाता, तो वह अपने आपको पा नहीं सकता। आह, कितना आनन्द है रिक्त हो जाने में!

यदि तुम अपने आपको सदा के लिये शब्द में खो नहीं देते, तो तुम उस शब्द को समझ नहीं सकते जो कि तुम स्वयं हो, जो कि तुम्हारा 'मैं' ही है। आह, कितना आनन्द है खो जाने में!

मैं तुमसे फिर कहता हूँ, दिव्य ज्ञान के लिये प्रार्थना करो। जब तुम्हारे अन्तर में दिव्य ज्ञान प्रकट हो जायेगा, तो प्रभु के विशाल साम्राज्य में ऐसा कुछ नहीं होगा जो तुम्हारे द्वारा उच्चारित प्रत्येक 'मैं' का उत्तर एक प्रसन्न हुँकार से न दे।

और तब स्वयं मृत्यु तुम्हारे हाथों में केवल एक अस्त्र होगी जिससे तुम मृत्यु को पराजित कर सको। और तब जीवन तुम्हारे हृदय को अपने असीम हृदय की कुंजी प्रदान करेगा। वह है प्रेम की सुनहरी कुंजी।

**शमदाम:** मैंने स्वप्न में भी कल्पना नहीं की थी कि जूठे बर्तन पोंछने के चिथड़े और झाड़ू में से इतनी बुद्धिमत्ता निचोड़ी जा सकती है। (उसका संकेत मीरदाद के सेवक होने की ओर था।)

**मीरदाद:** बुद्धिमानों के लिये सबकुछ बुद्धिमत्ता का भण्डार है। बुद्धिहीनों के लिये बुद्धिमत्ता स्वयं एक मूर्खता है।

**शमदाम:** तेरी ज़बान, निःसन्देह, बड़ी चतुर है। आश्चर्य है कि तूने उसे इतने समय तक लगाम दिये रखी। परन्तु तेरे शब्द बहुत कठोर और कठिन हैं।

**मीरदाद:** मेरे शब्द तो सरल हैं, शमदाम। कठिन तो तुम्हारे कानों को लगते हैं। अभागें हैं वे जो सुनकर भी नहीं सुनते; अभागें हैं वे जो देखकर भी नहीं देखते।

**शमदाम:** मुझे खूब सुनाई और दिखाई देता है, शायद जरूरत से कुछ ज्यादा ही। फिर भी मैं ऐसी मूर्खता की बात नहीं सुनूँगा कि शमदाम और मीरदाद दोनों समान हैं; कि मालिक और नौकर में कोई अन्तर नहीं।

## स्वामी और सेवक

साथी मीरदाद के बारे में  
अपने विचार प्रकट करते हैं

**मीरदाद:** मीरदाद ही शमदाम का एकमात्र सेवक नहीं है। शमदाम, क्या तुम अपने सेवकों की गिनती कर सकते हो ?

क्या कोई गरुड़ या बाज़ है; क्या कोई देवदार या बरगद है; क्या कोई पर्वत या नक्षत्र है; क्या कोई महासागर या सरोवर है; क्या कोई फ़रिश्ता या बादशाह है जो शमदाम की सेवा न कर रहा हो ? क्या सारा संसार ही शमदाम की सेवा में नहीं है ?

न ही मीरदाद शमदाम का एकमात्र स्वामी है। शमदाम, क्या तुम अपने स्वामियों की गिनती कर सकते हो ?

क्या कोई भृंगी या कीट है; क्या कोई उल्लू या गौरैया है; क्या कोई काँटा या टहनी है; क्या कोई कंकड़ या सीप है; क्या कोई ओस-बिन्दु या तालाब है; क्या कोई भिखारी या चोर है जिसकी शमदाम सेवा न कर रहा हो ? क्या शमदाम सम्पूर्ण संसार की सेवा में नहीं है ? क्योंकि अपना कार्य करते हुए संसार तुम्हारा कार्य भी करता है। और अपना कार्य करते हुए तुम संसार का कार्य भी करते हो।

हाँ, मस्तक पेट का स्वामी है; परन्तु पेट भी मस्तक का कम स्वामी नहीं। कोई भी चीज़ सेवा नहीं कर सकती जब तक सेवा करने में उसकी अपनी सेवा न होती हो। और कोई भी चीज़ सेवा नहीं करवा सकती जब तक उस सेवा से सेवा करनेवाले की सेवा न होती हो।



शमदाम, मैं तुमसे और सभी से कहता हूँ, सेवक स्वामी का स्वामी है, और स्वामी सेवक का सेवक। सेवक को अपना सिर न झुकाने दो। स्वामी को अपना सिर न उठाने दो। क्रूर स्वामी के अहंकार को कुचल डालो। शर्मिन्दा सेवक की शर्मिन्दगी को जड़ से उखाड़ फेंको।

याद रखो, शब्द एक है। और उस शब्द के अक्षर होते हुए तुम भी वास्तव में एक ही हो। कोई भी अक्षर किसी अन्य अक्षर से श्रेष्ठ नहीं, न ही किसी अन्य अक्षर से अधिक आवश्यक है। अनेक अक्षर एक ही अक्षर हैं, यहाँ तक कि शब्द भी। तुम्हें ऐसा एकाक्षर बनना होगा यदि तुम उस अकथ आत्म-प्रेम के क्षणिक परम आनन्द का अनुभव प्राप्त करना चाहते हो जो सबके प्रति, सब पदार्थों के प्रति, प्रेम है।

शमदाम, इस समय मैं तुमसे उस तरह बात नहीं कर रहा हूँ जिस तरह स्वामी सेवक से अथवा सेवक स्वामी से करता है; बल्कि इस तरह बात कर रहा हूँ जिस तरह भाई भाई से करता है। तुम मेरी बातों से क्यों इतने व्याकुल हो रहे हो?

तुम चाहो तो मुझे अस्वीकार कर दो। परन्तु मैं तुम्हें अस्वीकार नहीं करूँगा। क्या मैंने अभी-अभी नहीं कहा था कि मेरे शरीर का मांस तुम्हारे शरीर के मांस से भिन्न नहीं है? मैं तुम पर वार नहीं करूँगा, कहीं ऐसा न हो कि मेरा रक्त बहे। इसलिये अपनी ज़बान को म्यान में ही रहने दो, यदि तुम अपने रक्त को बहने से बचाना चाहते हो। मेरे लिये अपने हृदय के द्वार खोल दो, यदि तुम उन्हें व्यथा और पीड़ा के लिये बन्द कर देना चाहते हो।

ऐसी जिह्वा से जिसके शब्द काँटे और जाल हों जिह्वा का न होना कहीं अच्छा है। और जब तक जिह्वा दिव्य ज्ञान के द्वारा स्वच्छ नहीं की जाती तब तक उससे निकले शब्द सदा घायल करते रहेंगे और जाल में फँसाते रहेंगे।

ऐ साधुओ, मेरा आग्रह है कि तुम अपने हृदय को टटोलो। मेरा आग्रह है कि तुम उसके अन्दर के सभी अवरोधों को उखाड़ फेंको। मेरा आग्रह है कि तुम उन पोतड़ों को जिनमें तुम्हारा 'मैं' अभी लिपटा हुआ है फेंक दो,

ताकि तुम देख सको कि अभिन्न है तुम्हारा 'मैं' प्रभु के शब्द से जो अपने आपमें सदा शान्त है और अपने में से उत्पन्न हुए सभी खण्डों-ब्रह्माण्डों के साथ निरन्तर एक-स्वर है।

यही शिक्षा थी मेरी नूह को।

यही शिक्षा है मेरी तुम्हें।

नरौंदा: इसके बाद हम सबको अवाक् और लज्जित छोड़कर मीरदाद अपनी कोठरी में चला गया। कुछ समय के मौन के बाद, जिसका बोझ असह्य हो रहा था, साथी उठकर जाने लगे और जाते-जाते हर साथी ने मीरदाद के विषय में अपना विचार प्रकट किया।

शमदाम: राज-मुकुट के स्वप्न देखनेवाला एक भिखारी।

मिकेयन: यह वही है जो गुप्त रूप से हज़रत नूह की नौका में सवार हुआ था। इसने कहा नहीं था, "यही शिक्षा थी मेरी नूह को?"

अबिमार: उलझे हुए सूत की एक गुच्छी।

मिकास्तर: किसी दूसरे ही आकाश का एक तारा।

बैनून: एक मेधावी पुरुष, किन्तु परस्पर विरोधी बातों में खोया हुआ।

ज़मोरा: एक विलक्षण रबाब जिसके स्वरों को हम नहीं पहचानते।

हिम्बल: एक भटकता शब्द किसी सहृदय श्रोता की खोज में।

मिकेयन और नरौंदा  
रात को मीरदाद से बातचीत करते हैं  
जो भावी जल-प्रलय का संकेत देता है और  
उनसे तैयार रहने का आग्रह करता है

नरौंदा: रात्रि के तीसरे पहर की लगभग दूसरी घड़ी थी जब मुझे लगा कि मेरी कोठरी का द्वार खुल रहा है और मैंने मिकेयन को धीमे स्वर में कहते सुना,

“क्या तुम जाग रहे हो, नरौंदा ?”

“इस रात मेरी कोठरी में नींद का आगमन नहीं हुआ है, मिकेयन।”

“न ही नींद ने आकर मेरी आँखों में बसेरा किया है। और वह—क्या तुम सोचते हो कि वह सो रहा है ?”

“तुम्हारा मतलब मुर्शिद से है ?”

“तुम अभी से उसे मुर्शिद कहने लगे ? शायद वह है भी। जब तक मैं निश्चय नहीं कर लेता कि वह कौन है, मैं चैन से नहीं बैठ सकता। चलो, इसी क्षण उसके पास चलें।”

हम दबे पाँव मेरी कोठरी में से निकले और मुर्शिद की कोठरी में जा पहुँचे। फीकी पड़ रही चाँदनी की कुछ किरणें दीवार के ऊपरी भाग के एक छिद्र में से चोरी-छिपे घुसती हुई उसके साधारण-से बिस्तर पर पड़ रही थीं जो साफ़-सुथरे ढंग से धरती पर बिछा हुआ था। स्पष्ट था कि उस रात उस पर कोई सोया न था। जिसकी तलाश में हम वहाँ आये थे, वह वहाँ नहीं मिला।



चकित, लज्जित और निराश हम लौटने ही लगे थे कि अचानक, इससे पहले कि हमारी आँखें द्वार पर उसके करुणामय मुख की झलक पातीं, उसका कोमल स्वर हमारे कानों में पड़ा।

**मीरदाद:** घबराओ मत, शान्ति से बैठ जाओ। शिखरों पर रात्रि तेज़ी से प्रभात में विलीन होती जा रही है।

विलीन होने के लिये यह घड़ी बड़ी अनुकूल है।

**मिकेयन:** (उलझन में, और रुक-रुक कर) इस अनाधिकार प्रवेश के लिये क्षमा करना। रात-भर हम सो नहीं पाये।

**मीरदाद:** बहुत क्षणिक होता है नींद में अपने आपको भूल जाना। नींद की हलकी-हलकी झपकियाँ लेकर अपने को भूलने से बेहतर है जागते हुए ही अपने आपको पूरी तरह से भुला देना। मीरदाद से तुम क्या चाहते हो ?

**मिकेयन:** हम यह जानने के लिये आये थे कि तुम कौन हो।

**मीरदाद:** जब मैं मनुष्यों के साथ होता हूँ तो परमात्मा हूँ। जब परमात्मा के साथ, तो मनुष्य। क्या तुमने जान लिया, मिकेयन ?

**मिकेयन:** तुम परमात्मा की निन्दा कर रहे हो।

**मीरदाद:** मिकेयन के परमात्मा की—शायद हाँ, मीरदाद के परमात्मा की—बिलकुल नहीं।

**मिकेयन:** क्या जितने मनुष्य हैं उतने ही परमात्मा हैं जो तुम मीरदाद के लिये एक परमात्मा की और मिकेयन के लिये दूसरे परमात्मा की बात करते हो ?

**मीरदाद:** परमात्मा अनेक नहीं हैं। परमात्मा एक है। किन्तु, फिर भी मनुष्यों की परछाइयाँ अनेक और भिन्न-भिन्न हैं। जब तक मनुष्यों की परछाइयाँ धरती पर पड़ती हैं, तब तक किसी मनुष्य का परमात्मा उसकी परछाई से बड़ा नहीं हो सकता। केवल परछाई-रहित मनुष्य ही पूरी तरह से प्रकाश में है। केवल परछाई-रहित मनुष्य ही उस एक परमात्मा को जानता है। क्योंकि परमात्मा प्रकाश है, और केवल प्रकाश ही प्रकाश को जान सकता है।

**मिकेयन:** हमसे पहेलियों में बात मत करो। हमारी बुद्धि अभी बहुत मन्द है।

**मीरदाद:** जो मनुष्य परछाई का पीछा करता है, उसके लिये सबकुछ ही पहेली है। ऐसा मनुष्य उधार ली हुई रोशनी में चलता है, इसलिये वह अपनी परछाई से ठोकर खाता है। जब तुम दिव्य ज्ञान के प्रकाश से चमक उठोगे, तब तुम्हारी कोई परछाई रहेगी ही नहीं।

शीघ्र ही मीरदाद परछाइयाँ इकट्ठी कर लेगा और उन्हें सूर्य के ताप में जला डालेगा। तब वह सब जो इस समय तुम्हारे लिये पहेली है एक ज्वलन्त सत्य के रूप में सहसा तुम्हारे सामने प्रकट हो जायेगा, और वह सत्य इतना प्रत्यक्ष होगा कि उसे किसी व्याख्या की आवश्यकता नहीं होगी।

**मिकेयन:** क्या तुम हमें बताओगे नहीं कि तुम कौन हो? यदि हमें तुम्हारे नाम का—तुम्हारे वास्तविक नाम का—तथा तुम्हारे देश और तुम्हारे पूर्वजों का ज्ञान होता तो शायद हम तुम्हें अधिक अच्छी तरह से समझ लेते।

**मीरदाद:** ओह, मिकेयन! मीरदाद को अपनी जंजीरों में बाँधने और अपने पदों में छिपाने का तुम्हारा यह प्रयास ऐसा ही है जैसा गरुड़ को वापस उस खोल में ठूँसना जिसमें से वह निकला था। क्या नाम हो सकता है उस मनुष्य का जो अब 'खोल के अन्दर' है ही नहीं? किस देश की सीमाएँ उस मनुष्य को अपने अन्दर रख सकती हैं जिसमें एक ब्रह्माण्ड समाया हुआ है? कौन-सा वंश उस मनुष्य को अपना कह सकता है जिसका एकमात्र पूर्वज स्वयं परमात्मा है?

यदि तुम मुझे अच्छी तरह से जानना चाहते हो, मिकेयन, तो पहले मिकेयन को अच्छी तरह से जान लो।

**मिकेयन:** शायद तुम मनुष्य का चोला पहने एक कल्पना हो।

**मीरदाद:** हाँ, लोग किसी दिन कहेंगे कि मीरदाद केवल एक कल्पना था। परन्तु तुम्हें शीघ्र ही पता चल जायेगा कि यह कल्पना कितनी यथार्थ है—मनुष्य के किसी भी प्रकार के यथार्थ से कितनी अधिक यथार्थ।

इस समय संसार का ध्यान मीरदाद की ओर नहीं है। पर मीरदाद संसार को सदा ध्यान में रखता है। संसार भी शीघ्र ही मीरदाद की ओर ध्यान देगा।

**मिकेयन:** कहीं तुम वही तो नहीं जो गुप्त रूप से नूह की नौका में सवार हुआ था ?

**मीरदाद:** मैं प्रत्येक उस नाव में गुप्त रूप से सवार हुआ व्यक्ति हूँ जो भ्रम के तूफानों से जूझ रही है। जब भी उन नौकाओं के कप्तान मुझे सहायता के लिये पुकारते हैं, मैं आगे बढ़कर पतवार थाम लेता हूँ। तुम्हारा हृदय भी, चाहे तुम नहीं जानते, दीर्घकाल से उच्च स्वर में मुझे पुकार रहा है। और देखो! मीरदाद तुम्हें सुरक्षित खेने के लिये यहाँ आ गया है ताकि अपनी बारी आने पर तुम संसार को खेकर उस जल-प्रलय से बाहर निकल सको जिससे बड़ा जल-प्रलय कभी देखा या सुना न गया होगा।

**मिकेयन:** एक और जल-प्रलय ?

**मीरदाद:** धरती को बहा देने के लिये नहीं, बल्कि धरती के अन्दर जो स्वर्ग है उसे बाहर लाने के लिये। मनुष्य का निशान तक मिटा देने के लिये नहीं, बल्कि मनुष्य के अन्दर छिपे परमात्मा को प्रकट करने के लिये।

**मिकेयन:** अभी कुछ ही दिन तो हुए हैं जब इन्द्र-धनुष ने अपने सात रंगों से हमारे आकाश को सुशोभित किया था, और तुम दूसरे जल-प्रलय की बात करते हो।

**मीरदाद:** नूह के जल-प्रलय से अधिक विनाशकारी होगा यह जल-प्रलय जिसकी तूफानी लहरें अभी से उठ रही हैं।

जल में डूबी धरती के गर्भ में वसन्त का वादा होता है। लेकिन अपने ही तप्त लहू में उबल रही धरती ऐसी नहीं होती।

**मिकेयन:** तो क्या हम समझें कि अन्त आनेवाला है ? क्योंकि हमें बताया गया था कि गुप्त रूप से नौका में सवार होनेवाले व्यक्ति का आगमन अन्त का सूचक होगा।

**मीरदाद:** धरती के बारे में कोई आशंका मत करो। अभी उसकी आयु बहुत कम है, और उसके वक्ष का दूध उसके अन्दर समा नहीं रहा



है। अभी और इतनी पीढ़ियाँ उसके दूध पर पलेंगी कि तुम उन्हें गिन नहीं सकते।

न ही धरती के स्वामी मनुष्य के लिये चिन्ता करो, क्योंकि वह अविनाशी है।

हाँ, अमिट है मनुष्य। हाँ, अक्षय है मनुष्य। वह भट्ठी में प्रवेश मनुष्य-रूप में करेगा और निकलेगा परमात्मा बनकर।

स्थिर रहो। तैयार रहो। अपनी आँखों, कानों और जिह्वाओं को भूखा रखो, ताकि तुम्हारा हृदय उस पवित्र भूख का अनुभव कर सके जिसे यदि एक बार शान्त कर दिया जाये तो वह सदा के लिये तृप्त कर देती है।

तुम्हें सदा तृप्त रहना होगा, ताकि तुम अतृप्तों को तृप्ति प्रदान कर सको। तुम्हें सदा सबल और स्थिर रहना होगा, ताकि तुम निर्बल और डगमगानेवालों को सहारा दे सको। तुम्हें तूफान के लिये सदा तैयार रहना होगा, ताकि तुम तूफान-पीड़ित बेआसराओं को आसरा दे सको। तुम्हें सदा प्रकाशमान रहना होगा, ताकि तुम अन्धकार में चलनेवालों को मार्ग दिखा सको।

निर्बल के लिये निर्बल बोझ है; परन्तु बलवान् के लिये एक सुखद दायित्व। निर्बलों की खोज करो; उनकी निर्बलता तुम्हारा बल है।

भूखे के लिये भूखे केवल भूख है; परन्तु तृप्त के लिये कुछ देने का एक शुभ अवसर। भूखों की खोज करो; उनकी भूख तुम्हारी तृप्ति है।

अन्धे के लिये अन्धे रास्ते के पत्थर हैं; परन्तु आँखोंवालों के लिये एक मील-पत्थर। अन्धों की खोज करो; उनका अन्धकार तुम्हारा प्रकाश है।

**नरौंदा:** तभी प्रभात की प्रार्थना के लिये आह्वान करता हुआ बिगुल बज उठा।

**मीरदाद:** ज़मोरा एक नये दिन के आगमन का बिगुल बजा रहा है—एक नये चमत्कार के आगमन का जिसे तुम गँवा दोगे उठने-बैठने के बीच, जँभाइयाँ लेते हुए, पेट को भरते और खाली करते हुए, व्यर्थ के शब्दों से अपनी जिह्वा को पैनी करते हुए और ऐसे अनेक कार्य करते हुए जिन्हें न करना बेहतर होता, और ऐसे कार्य न करते हुए जिन्हें करना आवश्यक है।

मिकेयन: तो क्या हम प्रार्थना के लिये न जायें ?

मीरदाद: जाओ ! करो प्रार्थना जैसे तुम्हें सिखाया गया है । जैसे भी हो सके प्रार्थना करो, किसी भी पदार्थ के लिये करो । जाओ ! तुम्हें जो कुछ भी करने के आदेश मिले हैं वह सबकुछ करो जब तक तुम आत्म-शिक्षित और आत्म-नियन्त्रित न हो जाओ, जब तक तुम हर शब्द को एक प्रार्थना, हर कार्य को एक बलिदान बनाना न सीख लो । शान्त मन से जाओ । मीरदाद को तो देखना है कि तुम्हारा सुबह का खाना पर्याप्त तथा स्वादिष्ट हो ।

## सात साथी मीरदाद से मिलने नीड़ में जाते हैं जहाँ वह उन्हें अँधेरे में काम करने से सावधान करता है

नरौंदा: उस दिन मैं और मिकेयन प्रभात की प्रार्थना में गये ही नहीं। शमदाम को हमारी अनुपस्थिति अखरी और यह पता लग जाने पर कि हम रात को मुर्शिद से मिलने गये थे, वह बहुत अप्रसन्न हुआ। फिर भी उसने अपनी अप्रसन्नता प्रकट नहीं की; उचित समय की प्रतीक्षा करता रहा।

बाक्री साथी हमारे व्यवहार से बहुत उत्तेजित हो गये थे और उसका कारण जानना चाहते थे। कुछ ने सोचा कि हमें प्रार्थना में शामिल न होने की सलाह मुर्शिद ने दी थी। अन्य कुछ साथियों ने उसकी पहचान के सम्बन्ध में कौतूहलपूर्ण अटकलें लगाते हुए कहा कि अपने आपको केवल हम पर प्रकट करने के लिये मुर्शिद ने हमें रात को अपने पास बुलाया था। कोई भी यह मानने को तैयार नहीं था कि मीरदाद ही गुप्त रूप से नूह की नौका में सवार होनेवाला व्यक्ति था। किन्तु सभी उससे मिलने और अनेक विषयों पर उससे प्रश्न पूछने के इच्छुक थे।

मुर्शिद की आदत थी कि जब वे नौका में अपने कार्यों से मुक्त होते तो अपना समय काले खड्ड के कगार पर टिकी गुफा में बिताते। इस गुफा को हम आपस में नीड़ कहकर पुकारते थे। उसी दिन की दोपहर, शमदाम के अतिरिक्त हम सबने उन्हें वहाँ ढूँढ़ा और ध्यान में डूबे हुए पाया। उनका चेहरा चमक रहा था; वह और भी चमक उठा जब उन्होंने आँखें ऊपर उठाई और हमारी ओर देखा।

**मीरदाद:** कितनी जल्दी तुमने अपना नीड़ ढूँढ़ लिया है। मीरदाद तुम्हारी खातिर इस बात पर खुश है।



**अबिमार:** हमारा नीड़ तो नौका है। तुम कैसे कहते हो कि यह गुफा हमारा नीड़ है ?

**मीरदाद:** नौका कभी नीड़ थी।

**अबिमार:** और आज ?

**मीरदाद:** अफ़सोस ! केवल एक छछूँदर का बिल।

**अबिमार:** हाँ, आठ प्रसन्न छछूँदर और नौवाँ मीरदाद।

**मीरदाद:** कितना आसान है मज़ाक़ उड़ाना; समझना कितना कठिन। पर मज़ाक़ ने सदा मज़ाक़ उड़ानेवाले का मज़ाक़ उड़ाया है। अपनी जिह्वा को व्यर्थ कष्ट क्यों देते हो ?

**अबिमार:** मज़ाक़ तो तुम हमारा उड़ाते हो जब हमें छछूँदर कहते हो। हमने ऐसा क्या किया है कि हमें यह नाम दिया जाये ? क्या हमने हज़रत नूह की ज्योति को जलाये नहीं रखा ? क्या हमने इस नौका को, जो कभी मुट्ठी-भर भिखारियों के लिये एक कुटिया-मात्र थी, सबसे अधिक समृद्ध महल से भी ज़्यादा समृद्ध नहीं बना दिया ? क्या हमने इसकी सीमाओं का दूर तक विस्तार नहीं किया जब तक कि यह एक शक्तिशाली साम्राज्य नहीं बन गई ? यदि हम छछूँदर हैं, तो निःसन्देह शिरोमणि हैं हम बिल खोदनेवालों में ?

**मीरदाद:** हज़रत नूह की ज्योति जल तो रही है, किन्तु केवल वेदी पर। यह ज्योति तुम्हारे किस काम की यदि तुम स्वयं वेदी नहीं बने, और नहीं बने तुम्हारे हृदय ईंधन और तेल ?

नौका इस समय सोने-चाँदी से बहुत अधिक लदी हुई है; इसलिये इसके जोड़ चर्चा रहे हैं, यह ज़ोर से डगमगा रही है और डूबने को तैयार है। जब कि माँ-नौका जीवन से भरपूर थी और उसमें कोई जड़ बोझ नहीं था; इसलिये सागर उसके विरुद्ध शक्तिहीन था।

जड़ बोझ से सावधान, मेरे साथियो। जिस मनुष्य को अपने ईश्वरत्व में दृढ़ विश्वास है उसके लिये सबकुछ जड़ बोझ है। वह संसार को अपने अन्दर धारण करता है, किन्तु संसार का बोझ नहीं उठाता।

मैं तुमसे कहता हूँ, यदि तुम अपने सोने और चाँदी को समुद्र में फेंककर नाव को हलका नहीं कर लोगे, तो वे तुम्हें अपने साथ समुद्र की तह तक खींच ले जायेंगे। क्योंकि मनुष्य जिस वस्तु को कसकर पकड़ता है, वही उसको जकड़ लेती है। वस्तुओं को अपनी पकड़ से मुक्त कर दो यदि तुम उनकी जकड़ से बचना चाहते हो।

किसी भी वस्तु का मोल न लगाओ, क्योंकि साधारण से साधारण वस्तु भी अनमोल होती है। तुम रोटी का मोल लगाते हो। सूर्य, वायु, धरती, सागर तथा मनुष्य के पसीने और चतुरता का मोल क्यों नहीं लगाते जिनके बिना रोटी हो ही नहीं सकती थी?

किसी भी वस्तु का मोल न लगाओ, कहीं ऐसा न हो कि तुम अपने प्राणों का मोल लगा बैठो। मनुष्य के प्राण उस वस्तु से अधिक मूल्यवान नहीं होते जिस वस्तु को वह मूल्यवान मानता है। ध्यान रखो, तुम अपने अनमोल प्राणों को कहीं सोने जितना सस्ता न मान लो।

नौका की सीमाएँ तुमने मीलों दूर तक फैला दी हैं। यदि तुम उन्हें धरती की सीमाओं तक भी फैला दो, फिर भी तुम सीमाओं के अन्दर रहोगे और उनमें कैद रहोगे। मीरदाद चाहता है कि तुम अनन्तता के चारों ओर सीमा-रेखा खींच दो, उससे आगे निकल जाओ। समुद्र धरती पर टिकी एक बूँद-मात्र है, फिर भी यह उसकी सीमा बना हुआ है, उसे अपने घेरे में लिये हुए है। और मनुष्य तो उससे और भी कहीं अधिक असीम सागर है। ऐसे नादान न बनो कि मनुष्य को एड़ी से चोटी तक नाप कर यह समझ बैठो कि तुमने उसकी सीमाएँ पा ली हैं।

तुम बिल खोदनेवालों में शिरोमणि हो सकते हो, जैसा कि अबिमार ने कहा है; परन्तु केवल उस छछूँदर की तरह जो अँधेरे में काम करता है। जितनी अधिक जटिल उसकी भूलभुलैयाँ हों उतना ही दूर होता है सूर्य से उसका मुख। मैं तुम्हारी भूलभुलैयाँ को जानता हूँ, अबिमार। तुम मुट्ठी भर प्राणी हो, जैसा तुम कहते हो, और कहने को संसार के सब प्रलोभनों से मुक्त और परमात्मा को समर्पित हो। परन्तु कुटिल और अन्धकारपूर्ण हैं वे रास्ते जो तुम्हें संसार के साथ जोड़ते हैं। क्या मुझे तुम्हारे मनोवेग



मचलते, फुँकारते सुनाई नहीं देते? क्या मुझे तुम्हारी ईर्ष्याएँ तुम्हारे परमात्मा की वेदी पर ही रेंगती और तड़पती दिखाई नहीं देती? भले ही तुम मुट्ठी भर हो परन्तु, ओह, कितना विशाल जनसमूह है उस मुट्ठी भर में!

यदि तुम वास्तव में ही बिल खोदनेवालों में शिरोमणि होते, जो तुम कहते हो तुम हो, तो तुमने खोदते-खोदते बहुत पहले धरती में से ही नहीं, सूर्य में से भी तथा गगन-मण्डल में चक्कर काटते हर ग्रह-उपग्रह में से भी अपनी राह बना ली होती।

छछूँदरों को थूथनों और पंजों से अपनी अँधेरी राहें बनाने दो। तुम्हें अपना राजपथ ढूँढ़ने के लिये पलक तक हिलाने की आवश्यकता नहीं। इस नीड़ में बैठे रहो और अपनी दिव्य कल्पना को उड़ान भरने दो। उस पथ-रहित अस्तित्व के, जो तुम्हारा साम्राज्य है, अद्भुत खज़ानों तक पहुँचने के लिये यही तुम्हारा दिव्य पथ-प्रदर्शक है। सशक्त और निर्भय मन से अपने पथ-प्रदर्शक के पीछे-पीछे चलो। उसके पद-चिह्न, चाहे वे दूरतम नक्षत्र पर हों, तुम्हारे लिये इस बात का सूचक और ज़मानत होंगे कि तुम्हारी जड़ वहाँ पहले ही रोपी जा चुकी है। क्योंकि तुम ऐसी किसी भी वस्तु की कल्पना नहीं कर सकते जो पहले से तुम्हारे भीतर न हो, या तुम्हारा अंग न हो।

वृक्ष अपनी जड़ों से आगे नहीं फैल सकता, जब कि मनुष्य असीम तक फैल सकता है, क्योंकि उसकी जड़ें अनन्त में हैं।

अपने लिए सीमाएँ निर्धारित मत करो। फैलते जाओ जब तक कि ऐसा कोई लोक न रहे जिसमें तुम न होओ। फैलते जाओ जब तक कि सारा संसार वहाँ न हो जहाँ संयोगवश तुम होओ। फैलते जाओ ताकि जहाँ कहीं भी तुम अपने आपसे मिलो, तुम प्रभु से मिलो। फैलते जाओ। फैलते जाओ!

अँधेरे में इस भरोसे कोई कार्य न करो कि अन्धकार एक ऐसा आवरण है जिसे कोई दृष्टि बेध नहीं सकती। यदि तुम्हें अन्धकार से अन्धे हुए लोगों से शर्म नहीं आती तो कम से कम जुगनुओं और चमगादड़ों से तो शर्म करो।



अन्धकार का कोई अस्तित्व नहीं है, मेरे साथियो। प्रकाश की मात्रा संसार के हर जीव की आवश्यकता की पूर्ति के लिये कम या अधिक होती है। तुम्हारे दिन का खुला प्रकाश अमरपक्षी\* के लिये साँझ का झुटपुटा है। तुम्हारी घनी अँधेरी रात मेंढक के लिये जगमगाता दिन है। यदि स्वयं अन्धकार पर से ही आवरण हटा दिये जायें तो वह किसी वस्तु के लिये आवरण कैसे हो सकता है ?

किसी भी वस्तु को ढकने का यत्न न करो। यदि और कुछ तुम्हारे रहस्यों को प्रकट नहीं करेगा तो उनका आवरण ही उन्हें प्रकट कर देगा। क्या ढक्कन नहीं जानता कि बर्तन के अन्दर क्या है ? कितनी दुर्दशा होती है साँपों और कीड़ों से भरे बर्तनों की जब उन पर से ढक्कन उठा दिये जाते हैं !

मैं तुमसे कहता हूँ, तुम्हारे अन्दर से एक भी ऐसा श्वास नहीं निकलता जो तुम्हारे हृदय के गहरे से गहरे रहस्यों को वायु में बिखेर नहीं देता। किसी आँख से एक भी ऐसी क्षणिक दृष्टि नहीं निकलती जो उसकी सभी लालसाओं तथा भयों को, उसकी मुसकानों तथा अश्रुओं को साथ न लिये हो। किसी द्वार में एक भी ऐसा सपना प्रविष्ट नहीं हुआ है जिसने अन्य सब द्वारों पर दस्तक न दी हो। तो ध्यान रखो तुम कैसे देखते हो। ध्यान रखो किन सपनों को तुम द्वार के अन्दर आने देते हो और किन्हें तुम पास से निकल जाने देते हो।

यदि तुम चिन्ता और पीड़ा से मुक्त होना चाहते हो, तो मीरदाद तुम्हें खुशी से रास्ता दिखायेगा।

---

\* अमरपक्षी (फ़ीनिक्स) मिस्र का एक पौराणिक पक्षी। यह बहुत लम्बी आयु भोगने के बाद जब आग में जलकर मर जाता है तो इसकी राख में से ही एक नया फ़ीनिक्स जन्म लेता है।

## पीड़ा-मुक्त जीवन का मार्ग

साथी जानना चाहते हैं कि क्या मीरदाद ही  
गुप्त रूप से नूह की नौका में चढ़नेवाला व्यक्ति था

मिकास्तर: हमें मार्ग दिखाओ।

**मीरदाद:** यह है चिन्ता और पीड़ा से मुक्ति का मार्ग:

“इस तरह सोचो मानो तुम्हारे हर विचार को आकाश में आग से अंकित होना है ताकि उसे हर प्राणी, हर पदार्थ देख सके। और वास्तव में वह अंकित होता भी है।

“इस तरह बोलो मानो सारा संसार केवल एक ही कान है जो तुम्हारी बात सुनने के लिये उत्सुक है। और वास्तव में वह उत्सुक है भी।

“इस तरह कर्म करो मानो तुम्हारे हर कर्म को पलटकर तुम्हारे सिर पर आना है। और वास्तव में वह आता भी है।

“इस तरह इच्छा करो मानो तुम स्वयं इच्छा हो। और वास्तव में तुम हो भी।

“इस तरह जियो मानो स्वयं तुम्हारे प्रभु को अपना जीवन जीने के लिये तुम्हारी आवश्यकता है। और वास्तव में उसे आवश्यकता है भी।”

**हिम्बल:** और कब तक तुम हमें उलझन में रखोगे, मीरदाद? तुम हमसे ऐसे बात करते हो जैसे कभी किसी व्यक्ति ने नहीं की, न हमने किसी किताब में पढ़ी।

**बैनून:** बताओ तुम कौन हो ताकि हम जान सकें कि तुम्हारी बात हम किस कान से सुनें। यदि तुम ही नूह की नौका में गुप्त रूप से चढ़नेवाले व्यक्ति हो तो हमें इसका कोई प्रमाण दो।

**मीरदाद:** ठीक कहा तुमने, बैनून। तुम्हारे बहुत-से कान हैं, इसलिये तुम सुन नहीं सकते। यदि तुम्हारा केवल एक ही कान होता जो सुनता और समझता, तो तुम्हें किसी प्रमाण की आवश्यकता न होती।

**बैनून:** नूह की नौका में गुप्त रूप से चढ़नेवाले व्यक्ति को संसार के बारे में निर्णय करने के लिये आना चाहिये और हम नौका के निवासियों को भी निर्णय करने में उसके साथ बैठना चाहिये। क्या हम निर्णय-दिवस की तैयारी करें?



## निर्णय तथा निर्णय-दिवस

**मीरदादः** मुझे कोई निर्णय नहीं देना है, देना है केवल दिव्य ज्ञान। मैं संसार में निर्णय देने नहीं आया, बल्कि उसे निर्णय के बन्धन से मुक्त करने आया हूँ। क्योंकि केवल अज्ञान ही न्यायाधीश की पोशाक पहनकर कानून के अनुसार दण्ड देना चाहता है।

अज्ञान का सबसे निष्ठुर निर्णायक स्वयं अज्ञान है। मनुष्य को ही लो। क्या उसने अज्ञानवश अपने आपको चीरकर दो नहीं कर डाला और इस प्रकार अपने लिये तथा उन सब पदार्थों के लिये जिनसे उसका खण्डित संसार बना है उसने मृत्यु को निमन्त्रण नहीं दे दिया ?

मैं तुमसे कहता हूँ, प्रभु और मनुष्य अलग नहीं हैं। केवल है प्रभु-मनुष्य या मनुष्य-प्रभु। वह एक है। उसे चाहे जैसे भी गुणा करें, चाहे जैसे भी भाग दें, वह सदा एक है।

प्रभु का एकत्व उसका स्थायी विधान है। यह विधान स्वयं लागू होता है। अपनी घोषणा के लिये, या अपना गौरव तथा सत्ता बनाये रखने के लिये इसे न न्यायालय की आवश्यकता है न न्यायाधीश की। सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड—जो दृश्य है और जो अदृश्य है—एकमात्र मुख है जो निरन्तर इसकी घोषणा कर रहा है—उनके लिये जिनके पास सुनने के लिये कान हैं।

सागर, चाहे वह विशाल और गहरा है, क्या एक ही बूँद नहीं ?

धरती, चाहे वह इतनी दूर तक फैली है, क्या एक ही ग्रह नहीं ?

सब ग्रह, चाहे वे अनगिनत हैं, क्या एक ही ब्रह्माण्ड नहीं ?

इसी प्रकार सम्पूर्ण मानव-जाति एक ही मनुष्य है; इसी प्रकार मनुष्य, अपने सभी संसारों सहित, एक पूर्ण इकाई है।

प्रभु का एकत्व, मेरे साथियो, अस्तित्व का एकमात्र क़ानून है। इसका दूसरा नाम है प्रेम। इसे जानना और स्वीकार करना जीवन को स्वीकार करना है। अन्य किसी क़ानून को स्वीकार करना अस्तित्व-हीनता या मृत्यु को स्वीकार करना है।

जीवन अन्तर में सिमटना है; मृत्यु बाहर बिखर जाना। जीवन जुड़ना है; मृत्यु टूट जाना। इसलिये मनुष्य, जो द्वैतवादी है, दोनों के बीच लटक रहा है। क्योंकि सिमटेगा वह अवश्य, किन्तु बिखरकर ही। और जुड़ेगा वह अवश्य, किन्तु टूटकर ही। सिमटने और जुड़ने में वह क़ानून के अनुसार आचरण करता है; और जीवन होता है उसका पुरस्कार। बिखरने और टूटने में वह क़ानून के विरुद्ध आचरण करता है; और मृत्यु होता है उसका कटु परिणाम।

फिर भी तुम, जो अपनी दृष्टि में दोषी हो, उन मनुष्यों पर निर्णय देने बैठते हो जो तुम्हारी ही तरह अपने आपको दोषी मानते हैं। कितने भयंकर हैं निर्णायक और उनका निर्णय!

निःसन्देह, इससे कम भयंकर होंगे मृत्यु-दण्ड के दो अभियुक्त जो एक-दूसरे को फाँसी की सज़ा सुना रहे हों।

कम हास्यजनक होंगे एक ही जुए में जुते दो बैल जो एक-दूसरे को जोतने की धमकी दे रहे हों।

कम घृणित होंगे एक ही क़ब्र में पड़े दो शव जो एक-दूसरे को क़ब्र के योग्य ठहरा रहे हों।

कम दयनीय होंगे दो निपट अन्धे जो एक-दूसरे की आँखें नोच रहे हों।

न्याय के हर आसन से बचो, मेरे साथियो। क्योंकि किसी भी व्यक्ति या वस्तु पर फैसला सुनाने के लिये तुम्हें न केवल उस क़ानून को जानना होगा और उसके अनुसार जीवन बिताना होगा, बल्कि गवाहियाँ भी सुननी होंगी। और किसी भी विचाराधीन मुक़दमे में तुम गवाही किनकी सुनोगे?

क्या तुम वायु को न्यायालय में बुलाओगे? क्योंकि आकाश के नीचे जो कुछ भी होता है, वायु उसके होने में सहायक और प्रेरक होती है।

या फिर तुम सितारों को तलब करोगे? क्योंकि संसार में जो भी घटनाएँ घटती हैं, सितारे उनके रहस्यों से परिचित होते हैं।

या फिर तुम आदम से लेकर आज तक के प्रत्येक मृतक को न्यायालय में उपस्थित होने का आदेश जारी करोगे? क्योंकि सब मृतक जीने वालों में जी रहे हैं।

किसी भी मुकद्दमे में पूरी गवाही प्राप्त करने के लिये ब्रह्माण्ड का गवाह होना आवश्यक है। जब तुम ब्रह्माण्ड को न्यायालय में बुला सकोगे, तुम्हें न्यायालयों की आवश्यकता ही नहीं रहेगी। तुम न्यायासन से उतर जाओगे और गवाह को न्यायाधीश बनने दोगे।

जब तुम सबकुछ जान लोगे, तो किसी के विषय में निर्णय नहीं दोगे।

जब तुम्हारे अन्दर संसारों को एकत्र करने का सामर्थ्य पैदा हो जायेगा, तब तुम जो बाहर बिखर गये हैं उनमें से एक को भी अपराधी नहीं ठहराओगे; क्योंकि तुम जान लोगे कि बिखरनेवाले को उसके बिखराव ने ही अपराधी घोषित कर दिया है और अपने आपको दोषी माननेवाले को दोषी ठहराने के बजाय तुम उसे उसके दोष से मुक्त करने का प्रयत्न करोगे।

इस समय मनुष्य अपने ऊपर स्वयं लादे हुए बोझ से बुरी तरह दबा हुआ है। उसका रास्ता बहुत ऊबड़-खाबड़ तथा टेढ़ा-मेढ़ा है। हर फ़ैसला जज और अभियुक्त दोनों के लिये समान रूप से एक अतिरिक्त बोझ होता है। यदि तुम अपने बोझ को हलका रखना चाहते हो, तो किसी के विषय में फ़ैसला करने न बैठो। यदि तुम चाहते हो कि तुम्हारा बोझ अपने आप उतर जाये, तो शब्द में डूबकर सदा के लिये उसमें खो जाओ। यदि तुम चाहते हो कि तुम्हारा मार्ग सीधा तथा समतल हो तो दिव्य-ज्ञान को अपना मार्गदर्शक बना लो।

मैं तुम्हारे पास निर्णय लेकर नहीं, दिव्य-ज्ञान लेकर आया हूँ।

**बैनून:** निर्णय-दिवस के विषय में तुम क्या कहते हो?

**मीरदाद:** हर दिन निर्णय-दिवस है, बैनून। पलक की हर झपक पर हर प्राणी के कर्मों का हिसाब किया जाता है। कुछ छिपा नहीं रहता। कुछ अनतुला नहीं रहता। ऐसा कोई विचार नहीं, कोई कर्म नहीं, कोई इच्छा



नहीं जो विचार, कर्म या इच्छा करनेवाले के अन्दर अंकित न हो जाये। संसार में कोई विचार, कोई इच्छा, कोई कर्म फल दिये बिना नहीं रहता; सब अपनी विधा और प्रकृति के अनुसार फल देते हैं। जो कुछ भी प्रभु के विधान के अनुकूल होता है, जीवन से जुड़ जाता है। जो कुछ उसके प्रतिकूल होता है, मृत्यु से जा जुड़ता है।

सब दिन एक समान नहीं होते, बैनून। कुछ शान्तिपूर्ण होते हैं, वे होते हैं ठीक तरह से बिताई गई घड़ियों के फल।

कुछ बादलों से घिरे होते हैं, वे होते हैं मृत्यु में अर्ध-सुप्त तथा जीवन में अर्ध-जाग्रत अवस्था में बिताई गई घड़ियों के उपहार।

कुछ और होते हैं जो तूफान पर सवार, आँखों में बिजली की कौंध और नथनों में बादल की गरज लिये तुम पर टूट पड़ते हैं। वे ऊपर से तुम पर प्रहार करते हैं; वे नीचे से तुम्हें कोड़े लगाते हैं; वे तुम्हें दायें-बायें पटकते हैं; वे धरती पर तुम्हें सपाट गिरा देते हैं और विवश कर देते हैं तुम्हें धूल चाटने पर और यह चाहने पर कि तुम कभी पैदा ही न हुए होते। ऐसे दिन होते हैं जान-बूझ कर विधान के विरुद्ध बिताई गई घड़ियों के फल।

संसार में भी ऐसा ही होता है। इस समय आकाश पर छाये हुए साये उन सायों से रत्ती भर भी कम अमंगल-सूचक नहीं हैं जो जल-प्रलय के अग्रदूत बनकर आये थे। अपनी आँखें खोलो और देखो।

जब तुम दक्षिणी वायु के घोड़े पर सवार बादलों को उत्तर की ओर जाते देखते हो, तो कहते हो कि ये तुम्हारे लिये वर्षा लाते हैं। इनसानी बादलों के रुख से यह अन्दाज़ा लगाने में कि वे क्या लायेंगे, तुम इतने बुद्धिमान क्यों नहीं हो? क्या तुम देख नहीं सकते कि मनुष्य कितनी बुरी तरह से अपने जालों में उलझ गये हैं?

जालों में से निकल आने का दिन निकट है। और कितना भयावह है वह दिन।

देखो, कितनी सदियों के दौरान मन और आत्मा की नसों से बुने गये हैं मनुष्यों के ये जाल! मनुष्यों को उनके जालों में से खींच निकालने

के लिये उनके मांस तक को फाड़ना पड़ेगा; उनकी हड्डियों तक को कुचलना पड़ेगा। और मांस को फाड़ने और हड्डियों को कुचलने का काम मनुष्य स्वयं ही करेंगे।

जब ढक्कन उठाये जायेंगे, जो उठाये अवश्य जायेंगे, और जब बरतन बतायेंगे कि उनके अन्दर क्या है, जो वे निःसन्देह बतायेंगे, तब मनुष्य अपने कलंक को कहाँ छिपायेंगे और भागकर कहाँ जायेंगे?

जीवित उस दिन मृतकों से ईर्ष्या करेंगे, और मृतक जीवितों को कोसेंगे। मनुष्यों के शब्द उनके कण्ठ में चिपककर रह जायेंगे, और प्रकाश उनकी पलकों पर जम जायेगा। उनके हृदय में से निकलेंगे नाग और बिच्छू, और यह भूलकर कि उन्होंने स्वयं अपने हृदय में इन्हें बसाया और पाला था, वे घबराकर चिल्ला उठेंगे, 'कहाँ से आ रहे हैं ये नाग और बिच्छू?'

अपनी आँखें खोलो और देखो। ठीक इसी नौका के अन्दर, जो ठोकरें खा रहे संसार के लिये आलोक-स्तम्भ के रूप में स्थापित की गई थी, इतनी दलदल है कि तुम उसे किसी तरह से भी पार नहीं कर सकते। यदि आलोक-स्तम्भ ही फन्दा बन जाये, तो उन यात्रियों की कैसी भयंकर दशा होगी जो समुद्र में हैं!

मीरदाद तुम्हारे लिये एक नई नौका का निर्माण करेगा। ठीक इसी नीड़ के अन्दर वह उसकी नींव रखकर उसे खड़ा करेगा। इस नीड़ में से उड़ कर तुम मनुष्य के लिये शान्ति का सन्देश लेकर नहीं, अनन्त जीवन लेकर संसार में जाओगे। इसके लिये अनिवार्य है कि तुम विधान को जानो और उसका पालन करो।

**जमोरा:** हम प्रभु के विधान को कैसे जानेंगे और कैसे करेंगे उसका पालन?

## प्रेम प्रभु का विधान है

मीरदाद दो साथियों के बीच हुए मन-मुटाव  
को ताड़ लेता है, रबाब मँगवाता है और  
नई नौका का स्तुति-गीत गाता है

**मीरदाद:** प्रेम ही प्रभु का विधान है।

तुम जीते हो ताकि तुम प्रेम करना सीख लो। तुम प्रेम करते हो ताकि तुम जीना सीख लो। मनुष्य को और कुछ सीखने की आवश्यकता नहीं।

और प्रेम करना क्या है, सिवाय इसके कि प्रेमी प्रियतम को सदा के लिये अपने अन्दर लीन कर ले ताकि दोनों एक हो जायें?

और मनुष्य को प्रेम किससे करना है? क्या उसे जीवन-वृक्ष के एक विशेष पत्ते को चुनकर उस पर ही अपना पूरा प्यार उड़ेल देना है? तो फिर क्या होगा उस शाखा का जिस पर वह पत्ता उगा है? उस तने का जिससे वह शाखा निकली है? उस छाल का जो उस शाखा की रक्षा करती है? उन जड़ों का जो छाल, तने, शाखाओं और पत्तों का पोषण करती हैं? उस मिट्टी का जिसने जड़ों को छाती से लगा रखा है? सूर्य, समुद्र और वायु का जो मिट्टी को उपजाऊ बनाते हैं?

यदि किसी पेड़ पर लगा एक छोटा-सा पत्ता तुम्हारे प्रेम का अधिकारी हो तो पूरा पेड़ उसका कितना अधिक अधिकारी होगा? जो प्रेम सम्पूर्ण के एक अंश को चुनता है, वह अपने भाग्य में आप ही दुःखों की रेखा खींच लेता है।

तुम कहते हो, “एक ही वृक्ष पर भाँति-भाँति के पत्ते होते हैं। कुछ स्वस्थ होते हैं, कुछ अस्वस्थ; कुछ सुन्दर होते हैं, कुछ कुरूप; कुछ दैत्याकार होते हैं, कुछ बौने। पसन्द करने और चुनने से भला हम कैसे बच सकते हैं?”



मैं तुमसे कहता हूँ कि बीमारों के पीलेपन में से तन्दुरुस्तों की ताज़गी पैदा होती है। मैं यह भी कहता हूँ कि कुरूपता सुन्दरता की रंग-पट्टी, रंग और कूँची है, और यह भी कि बौना, बौना न होता यदि उसने अपने क्रद में से कुछ क्रद दैत्य को भेंट न कर दिया होता।

तुम जीवन-वृक्ष हो। अपने आपको टुकड़ों में बाँटने से सावधान रहो। फल की फल से तुलना मत करो, न पत्ते की पत्ते से, न शाखा की शाखा से; और न तने की जड़ों से तुलना करो, न वृक्ष की माटी-माँ से। पर तुम ठीक यही करते हो जब तुम एक अंश को बाक़ी अंशों से अधिक, अथवा बाक़ी अंशों को छोड़कर केवल एक अंश को ही प्यार करते हो।

तुम जीवन-वृक्ष हो। तुम्हारी जड़ें हर स्थान पर हैं। तुम्हारी शाखाएँ और पत्ते हर स्थान पर हैं। तुम्हारे फल हर मुँह में हैं। इस वृक्ष पर फल जो भी हों; इसकी शाखाएँ और पत्ते जो भी हों; जड़ें जो भी हों, वे तुम्हारे फल हैं; वे तुम्हारी शाखाएँ और पत्ते हैं; वे तुम्हारी जड़ें हैं। यदि तुम चाहते हो कि वृक्ष को मीठे और सुगन्धित फल लगें, यदि तुम चाहते हो कि वह सदा दृढ़ और हरा-भरा रहे, तो उस रस का ध्यान रखो जिससे उसकी जड़ों का पोषण करते हो।

प्रेम जीवन का रस है, जबकि घृणा मृत्यु का मवाद। किन्तु प्रेम का भी, रक्त की तरह, हमारी रगों में बेरोक प्रवाहित होना नितान्त आवश्यक है। रक्त के प्रवाह को रोको तो वह एक खतरा, एक संकट बन जायेगा। और घृणा क्या है सिवाय दबा दिये गये या रोक लिये गये प्रेम के, जो इसी लिये घातक विष बन जाता है खिलानेवाले और खानेवाले, दोनों के लिये; घृणा करनेवाले और घृणा पानेवाले, दोनों के लिये?

तुम्हारे जीवन-वृक्ष का पीला पत्ता केवल प्रेम से वंचित पत्ता है। पीले पत्ते को दोष मत दो। मुरझाई हुई शाखा केवल प्रेम की भूखी शाखा है। मुरझाई हुई शाखा को दोष मत दो।

सड़ा हुआ फल केवल घृणा पर पाला गया फल है। सड़े हुए फल को दोष मत दो। बल्कि दोष दो अपने अन्धे और कृपण मन को, जो जीवन-रस को भीख की तरह थोड़े-से व्यक्तियों में बाँटकर अधिकाँश को उससे

वंचित रखता है, और ऐसा करते हुए अपने आपको भी उससे वंचित रखता है।

आत्म-प्रेम के अतिरिक्त कोई प्रेम सम्भव नहीं है। अपने अन्दर सबको समा लेनेवाले अहं के अतिरिक्त अन्य कोई अहं वास्तविक नहीं है। इसलिये प्रभु शुद्ध प्रेम है, क्योंकि वह इसी अहं से प्रेम करता है।

जब तक प्रेम तुम्हें पीड़ा देता है, तुम्हें अपना वास्तविक अहं नहीं मिला है, न ही प्रेम की सुनहरी कुंजी तुम्हारे हाथ लगी है। क्योंकि तुम एक क्षणभंगुर अहं को प्रेम करते हो, तुम्हारा प्रेम भी क्षण-भंगुर है।

स्त्री के लिए पुरुष का प्रेम, प्रेम नहीं। वह प्रेम का एक बहुत धुँधला चिह्न है। सन्तान के लिए माता या पिता का प्रेम, प्रेम के पवित्र मन्दिर की देहरी-मात्र है। जब तक हर पुरुष हर स्त्री का प्रेमी नहीं बन जाता और हर स्त्री हर पुरुष की प्रेमिका, जब तक हर सन्तान हर माता या पिता की सन्तान नहीं बन जाती और हर माता या पिता हर सन्तान की माता या पिता, तब तक स्त्री-पुरुष हाड़-मांस के साथ हाड़-मांस के घनिष्ठ सम्बन्ध की डींग भले ही मार लें, किन्तु प्रेम के पवित्र शब्द का उच्चारण कभी न करें। क्योंकि ऐसा करना प्रभु-निन्दा होगी।

जब तक तुम एक भी मनुष्य को शत्रु मानते हो, तुम्हारा कोई मित्र नहीं। जिस हृदय में शत्रुता का वास है, वह मित्रता के लिये सुरक्षित आवास कैसे हो सकता है?

जब तक तुम्हारे हृदय में घृणा है, तुम प्रेम के आनन्द से अपरिचित हो। यदि तुम अन्य सभी वस्तुओं का जीवन-रस से पोषण करते हो, पर किसी छोटे-से कीड़े को उससे वंचित रखते हो, तो वह छोटा-सा कीड़ा अकेला ही तुम्हारे जीवन में कड़वाहट घोल देगा। क्योंकि किसी वस्तु या किसी व्यक्ति से प्रेम करते हुए तुम वास्तव में अपने आपसे ही प्रेम करते हो। इसी प्रकार, किसी वस्तु या किसी व्यक्ति से घृणा करते हुए तुम वास्तव में अपने आपसे ही घृणा करते हो। क्योंकि जिससे तुम घृणा करते हो वह उसके साथ जुड़ा हुआ है जिससे तुम प्रेम करते हो—ऐसे जुड़ा हुआ है जैसे किसी सिक्के के दो पहलू जिन्हें कभी एक-दूसरे से अलग नहीं

किया जा सकता। यदि तुम अपने प्रति ईमानदार रहना चाहते हो तो उससे प्रेम करने से पहले जिसे तुम चाहते हो और जो तुम्हें चाहता है, उससे प्रेम करना होगा जिससे तुम घृणा करते हो और जो तुमसे घृणा करता है।

प्रेम कोई गुण नहीं है। प्रेम एक आवश्यकता है; रोटी और पानी से भी बड़ी, प्रकाश और हवा से भी बड़ी।

कोई भी अपने प्रेम करने का अभिमान न करे। प्रेम को उसी सरलता तथा स्वतन्त्रता के साथ स्वीकार करो जिस सरलता तथा स्वतन्त्रता से तुम साँस लेते हो।

क्योंकि प्रेम को उन्नत होने के लिये किसी की आवश्यकता नहीं। प्रेम तो उस हृदय को उन्नत कर देगा जिसे वह अपने योग्य समझता है।

प्रेम के बदले कोई पुरस्कार मत माँगो। प्रेम ही प्रेम का पर्याप्त पुरस्कार है, जैसे घृणा ही घृणा का पर्याप्त दण्ड है।

न ही प्रेम के साथ कोई हिसाब-किताब रखो; क्योंकि प्रेम अपने सिवाय किसी और को हिसाब नहीं देता।

प्रेम न उधार देता है, न उधार लेता है; प्रेम न खरीदता है, न बेचता है; बल्कि जब देता है तो अपना सब-कुछ दे देता है; और जब लेता है तो सब-कुछ ले लेता है। इसका लेना ही देना है। इसका देना ही लेना है। इसलिये यह आज, कल और कल के बाद भी सदा एक-सा रहता है।

एक विशाल नदी ज्यों-ज्यों अपने आपको समुद्र में खाली करती जाती है, समुद्र उसे फिर से भरता जाता है। इसी तरह तुम्हें अपने आपको प्रेम में खाली करते रहना है, ताकि प्रेम तुम्हें सदा भरता रहे। तालाब, जो समुद्र से मिला उपहार उसी को सौंपने से इनकार करता है, एक गन्दा पोखर बनकर रह जाता है।

प्रेम में न अधिक होता है, न कम। जिस क्षण तुम उसे किसी श्रेणी में रखने या मापने का प्रयत्न करते हो, उसी क्षण वह तुम्हारे हाथ से निकल जाता है, और पीछे छोड़ जाता है अपनी कड़वी यादें।

न प्रेम में अब और तब होता है, न ही यहाँ और वहाँ। सब ऋतुएँ प्रेम की ऋतुएँ हैं, सब स्थान प्रेम के निवास के योग्य स्थान।



प्रेम कोई सीमा या बाधा नहीं जानता। जिस प्रेम के मार्ग को किसी भी प्रकार की बाधा रोक ले, वह अभी प्रेम कहलाने का अधिकारी नहीं है।

मैं अकसर तुम्हें कहते सुनता हूँ कि प्रेम अन्धा होता है, अर्थात् उसे अपने प्रियतम में कोई दोष दिखाई नहीं देता। इस प्रकार का अन्धापन सर्वोत्तम दृष्टि है।

काश, तुम सदा इतने अन्धे होते कि तुम्हें किसी भी वस्तु में कोई दोष दिखाई न देता।

स्पष्टदर्शी और बेधक होती है प्रेम की आँख। इसलिये उसे कोई दोष दिखाई नहीं देता। जब प्रेम तुम्हारी दृष्टि को निर्मल कर देगा, तब कोई भी वस्तु तुम्हें प्रेम के अयोग्य दिखाई नहीं देगी। केवल प्रेमहीन, दोषपूर्ण आँख सदा दोष खोजने में व्यस्त रहती है। जो दोष उसे दिखाई देते हैं वे उसके अपने ही दोष होते हैं।

प्रेम जोड़ता है। घृणा तोड़ती है। मिट्टी और पत्थरों का यह विशाल और भारी ढेर, जिसे तुम पूजा-शिखर कहते हो, क्षण भर में बिखर जाता यदि इसे प्रेम ने बाँध न रखा होता। तुम्हारा शरीर भी, चाहे वह नाशवान् प्रतीत होता है, विनाश का प्रतिरोध अवश्य कर सकता था यदि तुम उसके प्रत्येक कोषाणु को समान लगन के साथ प्रेम करते।

प्रेम जीवन के मधुर संगीत से स्पन्दित शान्ति है, घृणा मृत्यु के पैशाचिक धमाकों से आकुल युद्ध है। तुम क्या चाहोगे? प्रेम करना और अनन्त शान्ति में रहना, या घृणा करना और अनन्त युद्ध में जुटे रहना?

समस्त धरती तुम्हारे अन्दर जी रही है। सभी आकाश तथा उनके निवासी तुम्हारे अन्दर जी रहे हैं। अतः धरती और उसकी गोद में पल रहे सब बच्चों से प्रेम करो यदि तुम अपने आपसे प्रेम करना चाहते हो। और आकाशों तथा उनके सब वासियों से प्रेम करो यदि तुम अपने आपसे प्रेम करना चाहते हो।

तुम नरौंदा से घृणा क्यों करते हो, अबिमार?

नरौंदा: मुर्शिद की आवाज़ और उनके विचार-प्रवाह में इस आकस्मिक परिवर्तन से सब अचम्भे में पड़ गये। मैं और अबिमार तो अपने आपसी

मन-मुटाव के बारे में ऐसा स्पष्ट प्रश्न पूछे जाने पर अवाक् रह गये, क्योंकि उस मन-मुटाव को हमने बड़ी सावधानी के साथ सबसे छिपाकर रखा था और हमें विश्वास था, जो अकारण नहीं था, कि उसका किसी को पता नहीं है। सबने परम आश्चर्य के साथ हम दोनों की ओर देखा और अबिमार के होंठ खुलने की प्रतीक्षा करने लगे।

**अबिमार:** (धिक्कारपूर्ण दृष्टि से मुझे देखते हुए) नरौंदा, क्या मुर्शिद को तुमने बताया?

**नरौंदा:** जब अबिमार ने 'मुर्शिद' कह दिया है तो मेरा हृदय प्रसन्नता से फूल उठा है, क्योंकि जब मीरदाद ने अपना भेद खोला उससे बहुत पहले हमारे बीच इसी शब्द पर मतभेद पैदा हुआ था; मैं कहता था कि वह शिक्षक है जो लोगों को दिव्य ज्ञान का मार्ग दिखाने आया है, और अबिमार का हठ था कि वह केवल एक साधारण व्यक्ति है।

**मीरदाद:** नरौंदा को सन्देह की दृष्टि से न देखो, अबिमार, क्योंकि वह तुम्हारे द्वारा लगाये गए दोष से मुक्त है।

**अबिमार:** तो फिर तुम्हें किसने बताया? क्या तुम मनुष्य के विचारों को भी पढ़ लेते हो?

**मीरदाद:** मीरदाद को न गुप्तचरों की आवश्यकता है न दुभाषियों की। यदि तुम मीरदाद से उसी तरह प्रेम करते जैसे वह तुमसे करता है, तो तुम आसानी से उसके विचारों को पढ़ लेते और उसके हृदय के अन्दर भी झाँक लेते।

**अबिमार:** एक अन्धे और बहरे मनुष्य को क्षमा करो, मुर्शिद। मेरे आँख और कान खोल दो, क्योंकि मैं देखने और सुनने के लिये उत्सुक हूँ।

**मीरदाद:** केवल प्रेम ही चमत्कार कर सकता है। यदि तुम देखना चाहते हो तो अपनी आँख की पुतली में प्रेम को बसा लो। यदि तुम सुनना चाहते हो तो अपने कान के पर्दे में प्रेम को स्थान दो।

**अबिमार:** किन्तु मैं किसी से घृणा नहीं करता, नरौंदा से भी नहीं।

**मीरदाद:** घृणा न करना प्रेम करना नहीं होता, अबिमार। क्योंकि प्रेम एक क्रियाशील शक्ति है; और जब तक यह तुम्हारी हर चेष्टा को, तुम्हारे हर पद

को राह न दिखाये, तुम अपना मार्ग नहीं पा सकते; और जब तक प्रेम तुम्हारी हर इच्छा में, हर विचार में पूरी तरह समा न जाये, तुम्हारी इच्छाएँ तुम्हारे सपनों में कँटीली झाड़ियाँ होंगी; तुम्हारे विचार तुम्हारे जीवन में शोक-गीत होंगे।

इस समय मेरा दिल रबाब है, और मेरा गाने को जी चाहता है। ऐ भले ज़मोरा, तुम्हारा रबाब कहाँ है?

ज़मोरा: क्या मैं जाकर उसे ले आऊँ, मुर्शिद?

मीरदाद: जाओ, ज़मोरा।

नरौंदा: ज़मोरा उसी क्षण उठा और अपना रबाब लाने के लिये चला गया। बाक़ी सब कुछ समझ न पाये और एक-दूसरे की ओर देखते हुए ख़ामोश बैठे रहे।

जब ज़मोरा रबाब लेकर लौटा तो मुर्शिद ने धीरे से उसे अपने हाथ में ले लिया और स्नेह के साथ उस पर झुकते हुए उसके हर तार का सुर मिलाया और फिर उसे बजाते हुए गाना शुरू कर दिया।

मीरदाद:

तैर, तैर, री नौका मेरी,

प्रभु तेरा कप्तान।

उगले जीवित और मृतक पर

नरक अपना प्रकोप भयंकर,

आग में उसकी तप कर धरती

हो जाये ज्यों पिघला सीसक,

नभ-मण्डल में रहे न बाक़ी

किसी तरह का कोई निशान।

तैर, तैर, री नौका मेरी,

प्रभु तेरा कप्तान।

चल, चल री ऐ नौका मेरी,

प्रेम तेरा कम्पास।

उत्तर-दक्षिण, पूरब-पश्चिम

कोष अपना तू जाकर बाँट।



तरंग-श्रृंग पर तुझको अपने  
कर लेगा तूफान सवार,  
मल्लाहों को अन्धकार में  
वहाँ से तू देगी प्रकाश।  
चल, चल, री ऐ नौका मेरी,  
प्रेम तेरा कम्पास।

बह, बह, री ऐ नौका मेरी,  
लंगर है विश्वास।  
गड़गड़ कर चाहे बादल गरजे,  
कौंधे तड़ित कड़क के साथ,  
थर्रा उठें अचल, फट जायें,  
खण्ड-खण्ड हों, फैले त्रास,  
मानव दुर्बल-हृदय हो जायें,  
भूल जायें वे दिव्य प्रकाश,  
पर बहती जा री नौका मेरी,  
लंगर है विश्वास।

नरौंदा: मुर्शिद ने गाना बन्द किया और रबाब पर ऐसे झुक गये जैसे  
प्यार में खोई माँ छाती से लगे अपने बच्चे पर झुक जाती है। और यद्यपि  
रबाब के तार अब कम्पित नहीं हो रहे थे, फिर भी अभी उसमें से “तैर,  
तैर, री नौका मेरी, प्रभु तेरा कप्तान” की धुन आ रही थी। और यद्यपि  
मुर्शिद के ओंठ बन्द थे, फिर भी उनका स्वर कुछ समय तक नीड़ में  
गूँजता रहा, और तरंगें बनकर तैरता हुआ पहुँच गया चारों ओर ऊँची-नीची  
चोटियों तक; ऊपर पहाड़ियों और नीचे वादियों तक; दूर अशान्त सागर  
तक; ऊपर मेहराबदार नीले आकाश तक।

उस स्वर में सितारों की बौछारें और इन्द्र-धनुष थे, उसमें भूकम्प और  
झक्कड़ थे और साथ ही थीं सनसनाती हवाएँ और गीत के नशे में झूमती

बुलबुलें। उसमें कोमल, शबनम-लदी धुन्ध से ढके लहराते सागर थे। लगता था मानो सारी सृष्टि आभार-भरी प्रसन्नता के साथ उस स्वर को सुन रही है।

और ऐसा भी लगता था मानो दूधिया पर्वत-माला जिसके बीचोंबीच पूजा-शिखर था, अचानक धरती से अलग हो गई है और अन्तरिक्ष में तैर रही है—गौरवशाली, सशक्त तथा अपनी दिशा के बारे में आश्वस्त।

इसके बाद तीन दिन तक मुर्शिद किसी से एक शब्द भी नहीं बोले।

## सिरजनहार मौन

मुख से कही बात अधिक से अधिक  
एक निष्कपट झूठ है

नरौंदा: जब तीन दिन बीत गये तो सातों साथी, मानो किसी सम्मोहक आदेश के अधीन, अपने आप इकट्ठे हो गये और नीड़ की ओर चल पड़े। मुर्शिद हमसे यों मिले जैसे उन्हें हमारे आने की पूरी आशा रही हो।

मीरदाद: मेरे नन्हें पंछियो, एक बार फिर मैं तुम्हारे नीड़ में तुम्हारा स्वागत करता हूँ। अपने विचार और इच्छाएँ मीरदाद से स्पष्ट कह दो।

मिकेयन: हमारा एकमात्र विचार और इच्छा मीरदाद के निकट रहने की है, ताकि हम उनके सत्य को महसूस कर सकें और सुन सकें; शायद हम उतने ही छाया-मुक्त हो जायें जितने वे हैं। फिर भी उनका मौन हम सबके मन में श्रद्धामिश्रित भय उत्पन्न करता है। क्या हमने उन्हें किसी तरह से नाराज़ कर दिया है?

मीरदाद: तुम्हें अपने आपसे दूर हटाने के लिये मैं तीन दिन मौन नहीं रहा हूँ, बल्कि मौन रहा हूँ तुम्हें अपने और अधिक निकट लाने के लिये। जहाँ तक मुझे नाराज़ करने की बात है, याद रखो, जिस किसी ने भी मौन की अजेय शान्ति का अनुभव किया है, उसे न कभी नाराज़ किया जा सकता है, न वह कभी किसी को नाराज़ कर सकता है।

मिकेयन: क्या मौन रहना बोलने से अधिक अच्छा है?

मीरदाद: मुख से कही बात अधिक से अधिक एक निष्कपट झूठ है; जबकि मौन कम से कम नग्न सत्य है।



**अबिमार:** तो क्या हम यह निष्कर्ष निकालें कि मीरदाद के वचन भी, निष्कपट होते हुए भी, केवल झूठ हैं ?

**मीरदाद:** हाँ, मीरदाद के वचन भी उन सबके लिये केवल झूठ हैं जिनका 'मैं' वही नहीं जो मीरदाद का है। जब तक तुम्हारे सब विचार एक ही खान में से खोदकर न निकाले गये हों, और जब तक तुम्हारी सब कामनाएँ एक ही कुएँ में से खींचकर न निकाली गई हों, तब तक तुम्हारे शब्द, निष्कपट होते हुए भी, झूठ ही रहेंगे।

जब तुम्हारा 'मैं' और मेरा 'मैं' एक हो जायेंगे, जैसे मेरा 'मैं' और प्रभु का 'मैं' एक हैं, हम शब्दों को त्याग देंगे और सच्चाई-भरे मौन में खुल कर दिल की बात करेंगे।

क्योंकि तुम्हारा 'मैं' और मेरा 'मैं' एक नहीं हैं, मैं तुम्हारे साथ शब्दों का युद्ध करने को बाध्य हूँ, ताकि मैं तुम्हारे ही शस्त्रों से तुम्हें पराजित कर सकूँ और तुम्हें अपनी खान और अपने कुएँ तक ले जा सकूँ।

और केवल तभी तुम संसार में जाकर उसे पराजित करके अपने वश में कर सकोगे, जैसे मैं तुम्हें पराजित करके अपने वश में करूँगा। और केवल तभी तुम इस योग्य होगे कि संसार को परम चेतना के मौन तक, शब्द की खान तक, और दिव्य ज्ञान के कुएँ तक ले जा सको।

जब तक तुम मीरदाद के हाथों इस प्रकार पराजित नहीं हो जाते, तुम सच्चे अर्थों में अजेय और महान् विजेता नहीं बनोगे। न ही संसार अपनी निरन्तर पराजय के कलंक को धो सकेगा जब तक कि वह तुम्हारे हाथों पराजित नहीं हो जाता।

इसलिये, युद्ध के लिये कमर कस लो। अपनी ढालों और कवचों को चमका लो और अपनी तलवारों और भालों को धार दे दो। मौन को नगाड़े पर चोट करने दो और ध्वज भी उसी को थामने दो।

**बैनून:** यह कैसा मौन है जिसे एक साथ नगाड़ची और ध्वज-धारी बनना होगा ?

**मीरदाद:** जिस मौन में मैं तुम्हें ले जाना चाहता हूँ, वह एक ऐसा अन्तहीन विस्तार है जिसमें अनस्तित्व अस्तित्व में बदल जाता है, और

अस्तित्व अनस्तित्व में। वह एक ऐसा विलक्षण शून्य है जहाँ हर ध्वनि उत्पन्न होती है और शान्त कर दी जाती है; जहाँ हर आकृति को रूप दिया जाता है और रूप-रहित कर दिया जाता है; जहाँ हर अहं को लिखा जाता है और अ-लिखित किया जाता है; जहाँ केवल 'वह' है, और 'वह' के सिवाय कुछ नहीं।

यदि तुम उस शून्य और उस विस्तार को मूक ध्यान में पार नहीं करोगे, तो तुम नहीं जान पाओगे कि तुम्हारा अस्तित्व कितना यथार्थ है, और तुम्हारा अनस्तित्व कितना कल्पित। न ही तुम यह जान सकोगे कि तुम्हारा यथार्थ सम्पूर्ण यथार्थ से कितनी दृढ़ता से बँधा हुआ है।

मैं चाहता हूँ कि इसी मौन में भ्रमण करो तुम, ताकि तुम अपनी पुरानी तंग केंचुली उतार दो और बन्धन-मुक्त, अनियन्त्रित होकर विचरण करो।

मैं चाहता हूँ कि इसी मौन में बहा दो तुम अपनी चिन्ताओं और आशंकाओं को, अपने मनोवेगों और तृष्णाओं को, अपनी ईर्ष्याओं और लालसाओं को, ताकि तुम उन्हें एक-एक करके मिटते हुए देखो और इस तरह अपने कानों को उनकी निरन्तर चीख-पुकार से छुटकारा दिला दो, और बचा लो अपनी पसलियों को उनकी नुकीली एड़ों की पीड़न से।

मैं चाहता हूँ कि इसी मौन में फेंक दो तुम इस संसार के धनुष-बाण जिनसे तुम सन्तोष और प्रसन्नता का शिकार करने की आशा करते हो, परन्तु वास्तव में अशान्ति और दुःख के सिवाय और किसी चीज़ का शिकार नहीं कर पाते।

मैं चाहता हूँ कि इसी मौन में तुम अहं के अँधेरे और घुटन-भरे खोल में से निकलकर उस 'एक अहं' की रोशनी और खुली हवा में आ जाओ।

इसी मौन की सिफारिश करता हूँ मैं तुमसे, न कि बोल-बोल कर थकी तुम्हारी जिह्वा के लिये विश्राम की।

धरती के फलदायक मौन की सिफारिश करता हूँ मैं तुमसे, न कि अपराधी और धूर्त के भयानक मौन की।

अण्डे सेनेवाली मुर्गी के धैर्य पूर्ण मौन की सिफारिश करता हूँ मैं तुमसे, न कि अण्डे देनेवाली उसकी बहन की अधीर कुड़कुड़ाहट की।

एक इक्कीस दिन तक इस मूक विश्वास के साथ अण्डे सेती है कि उसकी रोएँदार छाती और पंखों के नीचे वह अदृश्य हाथ करामात कर दिखायेगा। दूसरी तेज़ी से भागती हुई अपने दरबे से निकलती है और पागलों की तरह कुड़कुड़ाती हुई ढिण्ढोरा पीटती है कि मैं अण्डा दे आई हूँ।

डोंग मारती नेकी से खबरदार रहो, मेरे साथियो। जैसे तुम अपनी शर्मिन्दगी का मुँह बन्द रखते हो, वैसे ही अपने सम्मान का मुँह भी बन्द रखो। क्योंकि डोंग मारता सम्मान मूक कलंक से बदतर है; शोर मचाती नेकी गूँगी बदी से बदतर है।

बहुत बोलने से बचो। बोले गये हजार शब्दों में से शायद एक, केवल एक, ऐसा हो जिसे बोलना सचमुच आवश्यक है। बाक़ी सब तो केवल बुद्धि को धुँधला करते हैं, कानों को ठसाठस भरते हैं, जिह्वा को कष्ट देते हैं, और हृदय को भी अन्धा करते हैं।

कितना कठिन है वह शब्द बोलना जिसे बोलना सचमुच आवश्यक है!

लिखे गये हजार शब्दों में से शायद एक, केवल एक, ऐसा हो जिसे लिखना सचमुच आवश्यक है। बाक़ी सब तो व्यर्थ में गँवाई स्याही और कागज़ हैं, और ऐसे क्षण हैं जिन्हें प्रकाश के पंखों के बजाय सीसे के पैर दे दिये गये हैं।

कितना कठिन, ओह, कितना कठिन है वह शब्द लिखना जिसे लिखना सचमुच आवश्यक है!

बैनून: और प्रार्थना के बारे में क्या कहेंगे, मुर्शिद मीरदाद? प्रार्थना में हमें आवश्यकता से कहीं अधिक शब्द बोलने पड़ते हैं, और आवश्यकता से कहीं अधिक चीज़ें माँगनी पड़ती हैं। किन्तु माँगी हुई चीज़ों में से हमें शायद ही कभी कोई प्रदान की जाती है।



## प्रार्थना

**मीरदाद:** तुम व्यर्थ में प्रार्थना करते हो जब तुम अपने आपको छोड़ देवताओं को सम्बोधित करते हो।

क्योंकि तुम्हारे अन्दर है आकर्षित करने की शक्ति, जैसे दूर भगाने की शक्ति तुम्हारे अन्दर है।

और तुम्हारे अन्दर हैं वे वस्तुएँ जिन्हें तुम आकर्षित करना चाहते हो, जैसे वे वस्तुएँ जिन्हें तुम दूर भगाना चाहते हो तुम्हारे अन्दर हैं।

क्योंकि किसी वस्तु को लेने का सामर्थ्य रखना उसे देने का सामर्थ्य रखना भी है।

जहाँ भूख है, वहाँ भोजन है। जहाँ भोजन है, वहाँ भूख भी अवश्य होगी। भूख की पीड़ा से व्यथित होना तृप्त होने का आनन्द लेने का सामर्थ्य रखना है।

हाँ, आवश्यकता में ही आवश्यकता की पूर्ति है।

क्या चाबी ताले के प्रयोग का अधिकार नहीं देती? क्या ताला चाबी के प्रयोग का अधिकार नहीं देता? क्या ताला और चाबी दोनों दरवाजे के प्रयोग का अधिकार नहीं देते?

जब भी तुम चाबी गँवा बैठो या उसे कहीं रखकर भूल जाओ, तो लोहार से आग्रह करने के लिये उतावले मत होओ। लोहार ने अपना काम कर दिया है, और अच्छी तरह से कर दिया है; उसे वही काम बार-बार करने के लिये मत कहो। तुम अपना काम करो और लोहार को अकेला छोड़ दो; क्योंकि जब एक बार वह तुमसे निपट चुका है, उसे और भी काम करने हैं। अपनी स्मृति में से दुर्गन्ध और कचरा निकाल फेंको, और चाबी तुम्हें निश्चय ही मिल जायेगी।

अकथ प्रभु ने उच्चारण द्वारा जब तुम्हें रचा तो तुम्हारे रूप में उसने अपनी ही रचना की। इस प्रकार तुम भी अकथ हो।

प्रभु ने तुम्हें अपना कोई अंश प्रदान नहीं किया—क्योंकि वह अंशों में नहीं बँट सकता; उसने तो अपना समग्र, अविभाज्य, अकथ ईश्वरत्व ही तुम सबको प्रदान कर दिया। इससे बड़ी किस विरासत की कामना कर सकते हो तुम? और तुम्हारी अपनी कायरता या अन्धेपन के सिवाय और कौन, या क्या, तुम्हें इसे पाने से रोक सकता है?

फिर भी, कुछ लोग—अन्धे कृतघ्न लोग—अपनी विरासत के लिये कृतज्ञ होने के बजाय, उसे प्राप्त करने की राह खोजने के बजाय, प्रभु को एक प्रकार का कूड़ाघर बना देना चाहते हैं जिसमें वे अपने दाँत और पेट के दर्द, व्यापार में अपने घाटे, अपने झगड़े, अपनी बदले की भावनाएँ तथा अपनी निद्राहीन रातें ले जाकर फेंक सकें।

कुछ अन्य लोग प्रभु को अपना निजी कोषागार बना लेना चाहते हैं जहाँ से वे जब चाहें संसार की चमकदार निकम्मी वस्तुओं में से हर ऐसी वस्तु को पाने की आशा रखते हैं जिसके लिए वे तरस रहे हैं।

और फिर कुछ अन्य लोग प्रभु को एक प्रकार का निजी मुनीम बना लेना चाहते हैं, जो केवल यह हिसाब ही न रखे कि वे किन चीजों के लिये दूसरों के कर्जदार हैं और दूसरे किन चीजों के लिये उनके कर्जदार हैं, बल्कि उनके दिये कर्ज को वसूल भी करे और उनके खाते में हमेशा एक बड़ी रकम जमा दिखाये।

हाँ, अनेक तथा नाना प्रकार के हैं वे काम जो मनुष्य प्रभु को सौंप देता है। फिर भी बहुत थोड़े लोग ऐसे होंगे जो सोचते हों कि यदि सचमुच इतने सारे काम करने की ज़िम्मेदारी प्रभु पर है तो वह अकेला ही उनको निपटा लेगा, और उसे यह आवश्यकता नहीं होगी कि कोई उसे प्रेरित करता रहे या अपने कामों की याद दिलाता रहे।

क्या प्रभु को तुम उन घड़ियों की याद दिलाते हो जब सूर्य को उदित होना है और जब चन्द्र को अस्त?

क्या उसे तुम दूर के खेत में पड़े अनाज के उस दाने की याद दिलाते हो जिसमें जीवन फूट रहा है?

क्या उसे तुम उस मकड़ी की याद दिलाते हो जो रेशे से अपना कौशल-पूर्ण विश्राम-गृह बना रही है ?

क्या उसे तुम घोंसले में पड़े गौरैया के छोटे-छोटे बच्चों की याद दिलाते हो ?

क्या उसे तुम उन अनगिनत वस्तुओं की याद दिलाते हो जिनसे यह असीम ब्रह्माण्ड भरा हुआ है ?

तुम अपने तुच्छ व्यक्तित्व को अपनी समस्त अर्थहीन आवश्यकताओं सहित बार-बार उसकी स्मृति पर क्यों लादते हो ? क्या तुम उसकी दृष्टि में गौरैया, अनाज और मकड़ी की तुलना में कम कृपा के पात्र हो ? तुम उनकी तरह अपने उपहार स्वीकार क्यों नहीं करते और बिना शोर मचाये, बिना घुटने टेके, बिना हाथ फैलाये और बिना चिन्ता-पूर्वक भविष्य में झाँके अपना-अपना काम क्यों नहीं करते ?

और प्रभु दूर कहाँ है कि उसके कानों तक अपनी सनकों और मिथ्याभिमानों को, अपनी स्तुतियों और अपनी फ़रियादों को पहुँचाने के लिये तुम्हें चिल्लाना पड़े ? क्या वह तुम्हारे अन्दर और तुम्हारे चारों ओर नहीं है ? जितनी तुम्हारी जिह्वा तुम्हारे तालू के निकट है, क्या उसका कान तुम्हारे मुँह के उससे कहीं अधिक निकट नहीं है ?

प्रभु के लिये तो उसका ईश्वरत्व ही काफी है जिसका बीज उसने तुम्हारे अन्दर रख दिया है ।

यदि अपने ईश्वरत्व का बीज तुम्हें देकर तुम्हारे बजाय प्रभु को ही उसका ध्यान रखना होता तो तुममें क्या खूबी होती ? और जीवन में तुम्हारे करने के लिये क्या होता ? और यदि तुम्हारे करने को कुछ भी नहीं है, बल्कि प्रभु को ही तुम्हारी खातिर सब करना है, तो तुम्हारे जीवन का क्या महत्त्व है ? तुम्हारी सारी प्रार्थना से क्या लाभ है ?

अपनी अनगिनत चिन्ताएँ और आशाएँ प्रभु के पास मत ले जाओ । जिन दरवाज़ों की चाबियाँ उसने तुम्हें सौंप दी हैं, उन्हें तुम्हारी खातिर खोलने के लिये उसकी मिन्नतें मत करो । बल्कि अपने हृदय की विशालता में खोजो । क्योंकि हृदय की विशालता में मिलती है हर दरवाज़े की चाबी ।



और हृदय की विशालता में मौजूद हैं वे सब चीजें जिनकी तुम्हें भूख और प्यास है, चाहे उनका सम्बन्ध बुराई से है या भलाई से।

तुम्हारे छोटे से छोटे आदेश का पालन करने को तैयार एक विशाल सेना तुम्हारे इशारे पर काम करने के लिये तैनात कर दी गयी है। यदि वह अच्छी तरह से सज्जित हो, उसे कुशलतापूर्वक शिक्षण दिया गया हो और निडरतापूर्वक उसका संचालन किया गया हो, तो उसके लिये कुछ भी करना असम्भव नहीं, और कोई भी बाधा उसे अपनी मंजिल पर पहुँचने से रोक नहीं सकती। और यदि वह पूरी तरह सज्जित न हो, उसे उचित शिक्षण न दिया गया हो और उसका संचालन साहसहीन हो, तो वह दिशाहीन भटकती रहती है, या छोटी से छोटी बाधा के सामने मोरचा छोड़ देती है, और उसके पीछे-पीछे चली आती है शर्मनाक पराजय।

वह सेना और कोई नहीं, साधुओ, इस समय तुम्हारी रगों में चुपचाप चक्कर लगा रही सूक्ष्म लाल रक्त-कणिकाएँ हैं; उनमें से हरएक शक्ति का चमत्कार, हरएक तुम्हारे समूचे जीवन का और समस्त जीवन का—उनकी अन्तरतम सूक्ष्मताओं सहित—पूरा और सच्चा विवरण।

हृदय में एकत्रित होती है यह सेना; हृदय में से ही बाहर निकलकर यह मोरचा लगाती है। इसी कारण हृदय को इतनी ख्याति और इतना सम्मान प्राप्त है। तुम्हारे सुख और दुःख के आँसू इसी में से फूटकर बाहर निकलते हैं। तुम्हारे जीवन और मृत्यु के भय दौड़कर इसी के अन्दर घुसते हैं।

तुम्हारी लालसाएँ और कामनाएँ इस सेना के उपकरण हैं। तुम्हारी बुद्धि इसे अनुशासन में रखती है। तुम्हारा संकल्प इससे क्रवायद करवाता है और इसकी बागडोर सँभालता है।

जब तुम अपने रक्त को एक प्रमुख कामना से सज्जित कर लो जो सब कामनाओं को चुप करा देती है और उन पर छा जाती है; और अनुशासन एक प्रमुख विचार को सौंप दो; और क्रवायद करवाने और कमान देने की ज़िम्मेदारी एक प्रमुख संकल्प के सुपुर्द कर दो, तब तुम विश्वास कर सकते हो कि तुम्हारी वह कामना पूरी होगी।

कोई सन्त भला सन्त कैसे हो सकता है जब तक वह अपने मन की वृत्ति को सन्त-पद के अयोग्य हर कामना से तथा हर विचार से मुक्त न कर दे, और फिर एक अडिग संकल्प के द्वारा उसे अन्य सभी लक्ष्यों को छोड़ केवल सन्त-पद की प्राप्ति के लिये यत्नशील रहने का निर्देश न दे?

मैं कहता हूँ कि आदम के समय से लेकर आज तक की हर पवित्र कामना, हर पवित्र विचार, हर पवित्र संकल्प उस मनुष्य की सहायता के लिये चला आयेगा जिसने सन्त-पद प्राप्त करने का ऐसा दृढ़ निश्चय कर लिया हो। क्योंकि सदा ऐसा होता आया है कि पानी, चाहे वह कहीं भी हो, समुद्र की खोज करता है जैसे प्रकाश की किरणें सूर्य को खोजती हैं।

कोई हत्यारा अपनी योजनाएँ कैसे पूरी करता है? वह केवल अपने रक्त को उत्तेजित करके उसमें हत्या के लिये एक उन्माद-भरी प्यास पैदा करता है, उसके कण-कण को हत्यापूर्ण विचारों के कोड़ों की मार से एकत्र करता है, और फिर निष्ठुर संकल्प से उसे घातक वार करने का आदेश देता है।

मैं तुमसे कहता हूँ कि केन\* से लेकर आज तक का हर हत्यारा बिना बुलाये उस मनुष्य की भुजा को सबल और स्थिर बनाने के लिये दौड़ा आयेगा जिस पर हत्या का ऐसा नशा सवार हो। क्योंकि सदा ऐसा होता आया है कि कौए, कौओं का साथ देते हैं और लकड़बग्घे लकड़बग्घों का।

इसलिये प्रार्थना करना अपने अन्दर एक ही प्रमुख कामना का, एक ही प्रमुख विचार का, एक ही प्रमुख संकल्प का संचार करना है। यह अपने आपको इस तरह सुर में करना है कि जिस वस्तु के लिये भी तुम प्रार्थना करो, उसके साथ पूरी तरह एक-सुर, एक-ताल हो जाओ।

इस ग्रह का वातावरण, जो अपने सम्पूर्ण रूप में तुम्हारे हृदय में प्रतिबिम्बित है, उन सब बातों की आवारा स्मृतियों से तरंगित है जिन्हें उसने अपने जन्म से देखा है।

---

\* आदम का एक पुत्र जिसने अपने भाई एबल की हत्या कर दी थी।



कोई वचन या कर्म; कोई इच्छा या निःश्वास; कोई क्षणिक विचार या अस्थायी सपना; मनुष्य या पशु का कोई श्वास; कोई परछाई; कोई भ्रम ऐसा नहीं जो आज के दिन तक अपने-अपने रहस्यमय रास्ते पर न चलता रहा हो, और जिसे समय के अन्त तक इसी प्रकार उस पर चलते न रहना हो। इनमें से किसी एक के साथ भी तुम अपने हृदय का सुर मिला लो, और वह निश्चय ही उसके तारों पर धुन बजाने के लिये तेज़ी से दौड़ा आयेगा।

प्रार्थना करने के लिये तुम्हें किसी होंठ या जिह्वा की आवश्यकता नहीं। बल्कि आवश्यकता है एक मौन, सचेत हृदय की, एक प्रमुख कामना की, एक प्रमुख विचार की, और सबसे बढ़कर, एक प्रमुख संकल्प की जो न सन्देह करता है न संकोच। क्योंकि शब्द व्यर्थ हैं यदि प्रत्येक अक्षर में हृदय अपनी पूर्ण जागरूकता के साथ उपस्थित न हो। और जब हृदय उपस्थित और सजग है, तो जिह्वा के लिये यह बेहतर होगा कि वह सो जाये, या मुहरबन्द होंठों के पीछे छिप जाये।

न ही प्रार्थना करने के लिये तुम्हें मन्दिरों की आवश्यकता है।

जो कोई अपने हृदय में मन्दिर को नहीं पा सकता, वह किसी भी मन्दिर में अपने हृदय को नहीं पा सकता।

फिर भी मैं तुमसे यह सब कहता हूँ, और जो तुम जैसे हैं उनसे भी, किन्तु प्रत्येक मनुष्य से नहीं, क्योंकि अधिकाँश लोग अभी भ्रम में हैं। वे प्रार्थना की ज़रूरत तो महसूस करते हैं, लेकिन प्रार्थना करने का ढंग नहीं जानते। वे शब्दों के बिना प्रार्थना कर नहीं सकते, और शब्द उन्हें मिलते नहीं जब तक शब्द उनके मुँह में न डाल दिये जायें। और जब उन्हें अपने हृदय की विशालता में विचरण करना पड़ता है तो वे खो जाते हैं, और भयभीत हो जाते हैं; परन्तु मन्दिरों की दीवारों के अन्दर और अपने जैसे प्राणियों के झुण्डों के बीच उन्हें सान्त्वना और सुख मिलता है।

कर लेने दो उन्हें अपने मन्दिरों का निर्माण। कर लेने दो उन्हें अपनी प्रार्थनाएँ।



किन्तु तुम्हें तथा प्रत्येक मनुष्य को मैं दिव्य ज्ञान के लिये प्रार्थना करने का आदेश देता हूँ। उसके सिवाय अन्य किसी वस्तु की चाह रखने का अर्थ है कभी तृप्त न होना।

याद रखो, जीवन की कुंजी 'सिरजनहार शब्द' है। 'सिरजनहार शब्द' की कुंजी प्रेम है। प्रेम की कुंजी दिव्य ज्ञान है। अपने हृदय को इनसे भर लो, और बचा लो अपनी जिह्वा को अनेक शब्दों की पीड़ा से, और रक्षा कर लो अपनी बुद्धि की अनेक प्रार्थनाओं के बोझ से, और मुक्त कर लो अपने हृदय को सब देवताओं की दासता से जो तुम्हें उपहार देकर अपना दास बना लेना चाहते हैं; जो तुम्हें एक हाथ से केवल इसलिये सहलाते हैं कि दूसरे हाथ से तुम पर वार कर सकें; जो तुम्हारे द्वारा प्रशंसा किये जाने पर सन्तुष्ट और कृपालु होते हैं, किन्तु तुम्हारे द्वारा कोसे जाने पर क्रोध और बदले की भावना से भर जाते हैं; जो तब तक तुम्हारी बात नहीं सुनते जब तक तुम उन्हें पुकारते नहीं; और तब तक तुम्हें कुछ नहीं देते जब तक तुम उनके आगे हाथ नहीं पसारते; और जो तुम्हें देकर बहुधा देने पर पछताते हैं; जिनके लिये तुम्हारे आँसू अगरबत्ती हैं, जिनकी शान तुम्हारी दयनीयता में है।

हाँ, अपने हृदय को इन सब देवताओं से मुक्त कर लो, ताकि तुम्हें उसमें वह एकमात्र प्रभु मिल सके जो तुम्हें अपने आपसे भर देता है और चाहता है कि तुम सदैव भरे रहो।

**बैनून:** कभी तुम मनुष्य को सर्वशक्तिमान् कहते हो तो कभी उसे लावारिस कहकर तुच्छ बताते हो। लगता है तुम हमें धुन्ध में लाकर छोड़ रहे हो।

## मनुष्य के काल-मुक्त जन्म पर दो प्रमुख देवदूतों का संवाद और दो प्रमुख यमदूतों का संवाद

**मीरदाद:** मनुष्य के काल-मुक्त जन्म पर ब्रह्माण्ड के ऊपरी छोर पर दो प्रमुख देवदूतों के बीच निम्नलिखित बातचीत हुई:

पहले देवदूत ने कहा:

एक विलक्षण बालक को जन्म दिया है धरती ने; और धरती प्रकाश से जगमगा रही है।

दूसरा देवदूत बोला:

एक गौरवशाली राजा को जन्म दिया है स्वर्ग ने; और स्वर्ग हर्ष-विभोर है।

**पहला:** बालक स्वर्ग और धरती के मिलन का फल है।

**दूसरा:** यह शाश्वत मिलन है—पिता, माता तथा बालक।

**पहला:** इस बालक से धरती की महिमा बढ़ी है।

**दूसरा:** इससे स्वर्ग सार्थक हुआ है।

**पहला:** दिन इसकी आँखों में सो रहा है।

**दूसरा:** रात इसके हृदय में जाग रही है।

**पहला:** इसका वक्ष तूफानों का नीड़ है।

**दूसरा:** इसका कण्ठ गीत का सरगम है।

**पहला:** इसकी भुजाएँ पर्वतों का आलिंगन करती हैं।

**दूसरा:** इसकी उँगलियाँ सितारे चुनती हैं।

**पहला:** सागर गरज रहे हैं इसकी हड्डियों में।

दूसरा: सूर्य दौड़ रहे हैं इसकी रगों में।

पहला: भट्ठी और साँचा है इसका मुख।

दूसरा: हथौड़ा और अहरन है इसकी जिह्वा।

पहला: इसके पैरों में आनेवाले कल की बेड़ियाँ हैं।

दूसरा: इसके हृदय में उन बेड़ियों की कुंजी है।

पहला: फिर भी मिट्टी के पालने में पड़ा है यह शिशु।

दूसरा: किन्तु कल्पों के पोतड़ों में लिपटा है यह।

पहला: प्रभु की तरह ज्ञाता है यह अंकों के हर रहस्य का। प्रभु की तरह जानता है यह शब्दों के मर्म को।

दूसरा: सब अंकों को जानता है यह, सिवाय पवित्र एक के, जो प्रथम और अन्तिम है। सब शब्दों को जानता है यह, सिवाय उस 'सिरजनहार शब्द' के, जो प्रथम और अन्तिम है।

पहला: फिर भी जान लेगा यह उस अंक को और उस शब्द को।

दूसरा: तब तक नहीं जब तक स्थान के पथ-विहीन वीरानों में चलते-चलते इसके पाँव घिस न जायें; तब तक नहीं जब तक समय के भयानक भूमिगृहों को देखते-देखते इसकी आँखें पथरा न जायें।

पहला: ओह, विलक्षण, अति विलक्षण है धरती का यह बालक।

दूसरा: ओह, गौरवशाली, अत्यन्त गौरवशाली है स्वर्ग का यह राजा।

पहला: अनामी ने इसका नाम मनुष्य रखा है।

दूसरा: और इसने अनामी को प्रभु नाम दिया है।

पहला: मनुष्य प्रभु का शब्द है।

दूसरा: प्रभु मनुष्य का शब्द है।

पहला: धन्य है वह जिसका शब्द मनुष्य है।

दूसरा: धन्य है वह जिसका शब्द प्रभु है।

पहला: अब और सदा के लिये।

दूसरा: यहाँ और हर स्थान पर।

यों बातचीत हुई मनुष्य के काल-मुक्त जन्म पर ब्रह्माण्ड के ऊपरी छोर पर दो प्रमुख देवदूतों के बीच।



उसी समय ब्रह्माण्ड के निचले छोर पर दो प्रमुख यमदूतों के बीच निम्नलिखित बातचीत चल रही थी:

पहले यमदूत ने कहा:

एक वीर योद्धा हमारे वर्ग में आ मिला है। इसकी सहायता से हम विजय प्राप्त कर लेंगे।

दूसरा यमदूत बोला:

बल्कि चिड़चिड़ा और पाखण्डी कायर कहो इसे। और विश्वासघात ने इसके माथे पर डेरा डाल रखा है। लेकिन भयंकर है यह अपनी कायरता और विश्वासघात में।

पहला: निडर और निरंकुश है इसकी दृष्टि।

दूसरा: अश्रुपूर्ण और दुर्बल है इसका हृदय। किन्तु भयानक है यह अपनी दुर्बलता और आँसुओं में।

पहला: पैनी और प्रयत्नशील है इसकी बुद्धि।

दूसरा: आलसी और मन्द है इसका कान। किन्तु खतरनाक है यह अपने आलस्य और मन्दता में।

पहला: फुर्तीला और निश्चित है इसका हाथ।

दूसरा: हिचकिचाता और सुस्त है इसका पैर। परन्तु भयानक है इसकी सुस्ती और डरावनी है इसकी हिचकिचाहट।

पहला: हमारा भोजन इसकी नाड़ियों के लिये फ़ौलाद होगा। हमारी शराब इसके लहू के लिये आग होगी।

दूसरा: हमारे भोजन के डिब्बों से यह हमें मारेगा। हमारे शराब के मटके यह हमारे सिर पर तोड़ेगा।

पहला: हमारे भोजन के लिये इसकी भूख और हमारी शराब के लिये इसकी प्यास लड़ाई में इसका रथ बनेंगे।

दूसरा: अन्तहीन भूख और अमिट प्यास इसे अजेय बना देंगी और हमारे शिविर में यह विद्रोह पैदा कर देगा।

पहला: परन्तु मृत्यु इसका सारथी होगी।

दूसरा: मृत्यु इसका सारथी होगी तो यह अमर हो जायेगा।

पहला: मृत्यु क्या इसे मृत्यु के सिवाय कहीं और ले जायेगी ?

दूसरा: हाँ, इतनी तंग आ जायेगी मृत्यु इसकी निरन्तर शिकायतों से कि वह आखिर इसे जीवन के शिविर में ले जायेगी।

पहला: मृत्यु क्या मृत्यु के साथ विश्वासघात करेगी ?

दूसरा: नहीं, जीवन जीवन के साथ वफ़ादारी करेगा।

पहला: इसकी जिह्वा को हम दुर्लभ और स्वादिष्ट फलों से परेशान करेंगे।

दूसरा: फिर भी यह तरसेगा उन फलों के लिये जो इस छोर पर नहीं उगते।

पहला: इसकी आँखों और नाक को हम सुन्दर और सुगन्धमय फूलों से लुभायेंगे।

दूसरा: फिर भी दूँढ़ेगी इसकी आँख अन्य फूल और इसकी नाक अन्य सुगन्ध।

पहला: और हम इसे निरन्तर मधुर किन्तु दूर का संगीत सुनायेंगे।

दूसरा: फिर भी इसका कान किसी अन्य संगीत की ओर रहेगा।

पहला: भय इसे हमारा दास बना देगा।

दूसरा: आशा भय से इसकी रक्षा करेगी।

पहला: पीड़ा इसे हमारे अधीन कर देगी।

दूसरा: विश्वास इसे पीड़ा से मुक्त कर देगा।

पहला: हम इसकी निद्रा पर उलझनों से भरे सपनों की चादर डाल देंगे, और इसके जागरण में पहेलियों से भरी परछाइयाँ बिखेर देंगे।

दूसरा: इसकी कल्पना उलझनों को सुलझा लेगी और परछाइयों को मिटा देगी।

पहला: यह सब होते हुए भी हम इसे अपने में से एक मान सकते हैं।

दूसरा: मान लो इसे हमारे साथ यदि तुम चाहो तो; किन्तु इसे हमारे विरुद्ध भी मानो।

पहला: क्या यह एक ही समय में हमारे साथ और हमारे विरुद्ध हो सकता है ?

दूसरा: रणभूमि में यह एकाकी योद्धा है। इसका एकमात्र शत्रु इसकी परछाई है। जैसे परछाई का स्थान बदलता है, वैसे ही युद्ध का स्थान भी बदल जाता है। यह हमारे साथ है जब इसकी परछाई इसके आगे है। यह हमारे विरुद्ध है जब इसकी परछाई इसके पीछे है।

पहला: तो क्या हम इसको इस तरह से न रखें कि इसकी पीठ हमेशा सूर्य की ओर रहे?

दूसरा: परन्तु सूर्य को हमेशा इसकी पीठ के पीछे कौन रखेगा?

पहला: एक पहेली है यह योद्धा।

दूसरा: एक पहेली है यह परछाई।

पहला: स्वागत है इस एकाकी शूरवीर का।

दूसरा: स्वागत है इस एकाकी परछाई का।

पहला: स्वागत है इसका जब यह हमारे साथ है।

दूसरा: स्वागत है इसका जब यह हमारे विरुद्ध है।

पहला: आज और हमेशा।

दूसरा: यहाँ और हर जगह।

यों बातचीत हुई ब्रह्माण्ड के निचले सिरे पर दो प्रमुख यमदूतों के बीच मनुष्य के काल-मुक्त जन्म पर।



## शमदाम मीरदाद को नौका से बाहर निकाल देने का प्रयत्न करता है

मुर्शिद अपमान करने, अपमानित होने और संसार को  
दिव्यज्ञान द्वारा अपनाने के बारे में बात करता है

नरौंदा: मुर्शिद ने अभी अपनी बात पूरी की ही थी कि मुखिया की भारी-भरकम देह नीड़ के द्वार पर दिखाई दी, और ऐसा लगा जैसे उसने हवा और रोशनी की राह बन्द कर दी हो। और उस एक क्षण के लिये मेरे मन में विचार कौंधा कि द्वार पर दिखाई दे रही आकृति कोई और नहीं है, केवल उन दो प्रमुख यमदूतों में से एक है जिनके बारे में मुर्शिद ने हमें अभी-अभी बताया था।

मुखिया की आँखों से आग बरस रही थी, और उसका चेहरा क्रोध से तमतमा रहा था। वह मुर्शिद की ओर बढ़ा और एकाएक उन्हें बाँह से पकड़ लिया। स्पष्ट था कि वह उन्हें घसीटकर बाहर निकालने का यत्न कर रहा था।

शमदाम: मैंने अभी-अभी तुम्हारे दुष्ट मन के अत्यन्त भयानक उद्गार सुने हैं। तुम्हारा मुँह विष का फ़व्वारा है। तुम्हारी उपस्थिति एक अपशकुन है। इस नौका का मुखिया होने के नाते मैं तुम्हें इसी क्षण यहाँ से चले जाने का आदेश देता हूँ।

नरौंदा: मुर्शिद इकहरे शरीर के थे तो भी शान्तिपूर्वक अपनी जगह डटे रहे, मानो वे विशालकाय हों और शमदाम केवल एक शिशु। उनकी अविचलित शान्ति आश्चर्यजनक थी। उन्होंने शमदाम की ओर देखा और कहा:

**मीरदाद:** चले जाने का आदेश देने का अधिकार केवल उसी को है जिसे आने का आदेश देने का अधिकार है। मुझे नौका में आने का आदेश क्या तुमने दिया था, शमदाम?

**शमदाम:** वह तुम्हारी दुर्दशा थी जिसे देखकर मेरे हृदय में दया उमड़ आई थी, और मैंने तुम्हें आने की अनुमति दे दी थी।

**मीरदाद:** यह मेरा प्रेम है, शमदाम, जो तुम्हारी दुर्दशा को देखकर उमड़ आया था। और देखो, मैं यहाँ हूँ और मेरे साथ है मेरा प्रेम। परन्तु अफ़सोस, तुम न यहाँ हो न वहाँ। केवल तुम्हारी परछाई इधर-उधर भटक रही है। और मैं सब परछाइयों को बटोरने और उन्हें सूर्य के ताप में जलाने आया हूँ।

**शमदाम:** जब तुम्हारी साँस ने वायु को दूषित करना शुरू किया उससे बहुत पहले मैं इस नौका का मुखिया था। तुम्हारी नीच जिह्वा कैसे कहती है कि मैं यहाँ नहीं हूँ?

**मीरदाद:** मैं इन पर्वतों से पहले था, और इनके चूर-चूर होकर मिट्टी में मिल जाने के बाद भी रहूँगा।

मैं नौका हूँ, वेदी हूँ और अग्नि भी। जब तक तुम मेरी शरण में नहीं आओगे, तुम तूफ़ान का शिकार बने रहोगे। जब तक तुम मेरे सामने अपने आपको मिटा नहीं दोगे, तुम मृत्यु के अनगिनत क्रसाइयों की निरन्तर सान दी जा रही छुरियों से बच नहीं पाओगे। और यदि मेरी कोमल अग्नि तुम्हें जलाकर राख नहीं कर देगी, तुम नरक की क्रूर अग्नि का ईंधन बन जाओगे।

**शमदाम:** क्या तुम सबने सुना? सुना नहीं क्या तुमने? मेरा साथ दो, साथियो। आओ, इस प्रभु-निन्दक पाखण्डी को हम नीचे खड्ड में फेंक दें।

**नरौंदा:** शमदाम फिर तेज़ी से मुर्शिद की ओर बढ़ा और घसीटकर उन्हें बाहर निकाल देने के इरादे से उसने एकाएक उन्हें बाँह से पकड़ लिया। परन्तु मुर्शिद न विचलित हुए न अपनी जगह से हटे; न ही कोई साथी तनिक भी हिला। एक बेचैन ख़ामोशी के बाद शमदाम का सिर उसकी छाती पर झुक गया और मन्द स्वर में मानो अपने आपसे कहते हुए वह

नीड़ से निकल गया, “मैं इस नौका का मुखिया हूँ, मैं अपने प्रभु-प्रदत्त अधिकार पर डटा रहूँगा।”

मुर्शिद बहुत देर तक सोचते रहे, पर कुछ बोले नहीं। किन्तु ज़मोरा चुप न रह सका।

ज़मोरा: शमदाम ने हमारे मुर्शिद का अपमान किया है। मुर्शिद, बतायें हम उसके साथ क्या करें? हुक्म दें, और हम पालन करेंगे।

मीरदाद: शमदाम के लिये प्रार्थना करो, मेरे साथियो। मैं चाहता हूँ कि उसके साथ तुम केवल इतना ही करो। प्रार्थना करो कि उसकी आँखों पर से पर्दा उठ जाये और उसकी परछाई मिट जाये।

अच्छाई को आकृष्ट करना उतना ही आसान है जितना बुराई को। प्रेम के साथ सुर मिलाना उतना ही आसान है जितना घृणा के साथ।

अनन्त आकाश में से, अपने हृदय की विशालता में से शुभ कामना लेकर संसार को दो। क्योंकि हर वस्तु जो संसार के लिये वरदान है तुम्हारे लिये भी वरदान है।

सभी जीवों के हित के लिये प्रार्थना करो। क्योंकि हर जीव का हर हित तुम्हारा भी हित है। इसी प्रकार हर जीव का अहित तुम्हारा भी अहित है।

क्या तुम सब अस्तित्व की अनन्त सीढ़ी की गतिमान पौड़ी के समान नहीं हो? जो पवित्र स्वतन्त्रता के ऊँचे मण्डल पर चढ़ना चाहते हैं, उन्हें विवश होकर दूसरों के चढ़ने के लिये सीढ़ी की पौड़ी बनाना पड़ता है।

तुम्हारे अस्तित्व की सीढ़ी में शमदाम एक पाँवरी के अतिरिक्त और क्या है? क्या तुम नहीं चाहते कि तुम्हारी सीढ़ी मज़बूत और सुरक्षित हो? तो उसकी हर पाँवरी का ध्यान रखो, और उसे सुरक्षित तथा मज़बूत बनाये रखो।

तुम्हारे जीवन की नींव में शमदाम एक पत्थर के अतिरिक्त और क्या है? और तुम उसके और प्रत्येक प्राणी के जीवन की इमारत में लगे पत्थरों के अतिरिक्त और क्या हो? यदि तुम चाहते हो कि तुम्हारी इमारत पूर्णतया दोष-रहित हो, तो ध्यान रखो कि शमदाम एक दोष-रहित पत्थर हो। तुम स्वयं भी दोष-रहित रहो, ताकि जिन लोगों के जीवन की इमारतों में तुम पत्थर बनकर लगे उनकी इमारतों में कोई दोष न हो।



क्या तुम सोचते हो कि तुम्हारे पास दो से अधिक आँखें नहीं हैं? मैं कहता हूँ कि देख रही हर आँख, चाहे वह धरती पर हो, उससे ऊपर हो, या उसके नीचे, तुम्हारी आँख का ही भाग है। जिस हद तक तुम्हारे पड़ोसी की नज़र साफ़ है, उस हद तक तुम्हारी नज़र भी साफ़ है। जिस हद तक तुम्हारे पड़ोसी की नज़र धुँधली हो गई है, उसी हद तक तुम्हारी नज़र भी धुँधली हो गई है।

यदि एक मनुष्य आँखों से अन्धा है तो तुम एक जोड़ी आँखों से वंचित हो जो तुम्हारी आँखों की ज्योति को और बढ़ाती। अपने पड़ोसी की आँखों की ज्योति को सँभालकर रखो, ताकि तुम अधिक स्पष्ट देख सको। अपनी दृष्टि को सँभालकर रखो, ताकि तुम्हारा पड़ोसी ठोकर न खा जाये और कहीं तुम्हारे द्वार को ही न रोक ले।

ज़मोरा सोचता है शमदाम ने मेरा अपमान किया है। शमदाम का अज्ञान मेरे ज्ञान को अस्त-व्यस्त कैसे कर सकता है?

एक कीचड़-भरा नाला दूसरे नाले को आसानी के साथ कीचड़ से भर सकता है। परन्तु क्या कोई कीचड़-भरा नाला समुद्र को कीचड़ से भर सकता है? समुद्र कीचड़ को सहर्ष ग्रहण कर लेगा तथा उसे अपनी तह में बिछा लेगा, और बदले में नाले को देगा स्वच्छ जल।

तुम धरती के एक वर्ग फ़ुट को—शायद एक मील को—गन्दा, या रोगाणु-मुक्त कर सकते हो। धरती को कौन गन्दा या रोगाणु-मुक्त कर सकता है? धरती हर मनुष्य तथा पशु की गन्दगी को स्वीकार कर लेती है और बदले में उन्हें देती है मीठे फल तथा सुगन्धित फूल, प्रचुर मात्रा में अनाज तथा घास।

तलवार शरीर को निश्चय ही घायल कर सकती है। किन्तु क्या वह हवा को घायल कर सकती है, चाहे उसकी धार कितनी ही तेज़ और उसे चलाने वाली भुजा कितनी ही बलशाली क्यों न हो?

अन्धे और लोभी अज्ञान से उत्पन्न हुआ अहंकार नीच और संकीर्ण आपे का अहंकार होता है जो अपमान कर सकता है और करवा सकता है, जो अपमान का बदला अपमान से लेना चाहता है और गन्दगी को गन्दगी से धोना चाहता है।

अहंकार के घोड़े पर सवार तथा आपे के नशे में चूर संसार तुम्हारे साथ ढेरों अन्याय करेगा। वह अपने जर्जरित नियमों, दुर्गन्ध-भरे सिद्धान्तों और घिसे-पिटे सम्मानों के रक्त-पिपासु कुत्ते तुम पर छोड़ देगा। वह तुम्हें व्यवस्था का शत्रु और अव्यवस्था तथा विनाश का कारिन्दा घोषित करेगा। वह तुम्हारी राहों में जाल बिछायेगा और तुम्हारी सेजों को बिच्छू-बूटी से सजायेगा। वह तुम्हारे कानों में गालियाँ बोयेगा और तिरस्कारपूर्वक तुम्हारे चेहरों पर थूकेगा।

अपने हृदय को दुर्बल न होने दो। बल्कि सागर की तरह विशाल और गहरे बनो, और उसे आशीर्वाद दो जो तुम्हें केवल शाप देता है।

और धरती की तरह उदार तथा शान्त बनो और मनुष्यों के हृदय के मैल को स्वास्थ्य और सौन्दर्य में बदल दो।

और हवा की तरह स्वतन्त्र और लचीले बनो। जो तलवार तुम्हें घायल करना चाहेगी वह अन्त में अपनी चमक खो बैठेगी और उसे जंग लग जायेगा। जो भुजा तुम्हारा अहित करना चाहेगी वह अन्त में थककर रुक जायेगी।

संसार तुम्हें अपना नहीं सकता, क्योंकि वह तुम्हें नहीं जानता। इसलिये वह तुम्हारा स्वागत क्रुद्ध गुराहट के साथ करेगा। परन्तु तुम संसार को अपना सकते हो, क्योंकि तुम संसार को जानते हो। अतएव तुम्हें उसके क्रोध को सहृदयता द्वारा शान्त करना होगा, और उसके द्वेष-भरे आरोपों को प्रेमपूर्ण दिव्य ज्ञान में डुबाना होगा।

और जीत अन्त में दिव्य ज्ञान की ही होगी।

यही शिक्षा थी मेरी नूह को।

यही शिक्षा है मेरी तुम्हें।

नरौंदा: इस पर सातों साथी चुपचाप चले आये, क्योंकि हम समझ गये थे कि जब भी मुर्शिद अपनी बात “यही शिक्षा थी मेरी नूह को” कह कर समाप्त करते हैं तो यह संकेत होता है कि वे और कुछ नहीं कहना चाहते।

## लेनदार और देनदार

धन क्या है ?

रस्तिदियन को नौका के ऋण से मुक्त किया जाता है

नरौंदा: एक दिन जब सातों साथी और मुर्शिद नीड़ से नौका की ओर लौट रहे थे तो उन्होंने द्वार पर खड़े शमदाम को अपने पैरों में गिरे एक व्यक्ति के सामने क्रागज़ का एक टुकड़ा हिलाते हुए क्रुद्ध स्वर में कहते सुना: “तुम्हारी लापरवाही ने मेरे धैर्य को समाप्त कर दिया है। अब मैं और नरमी नहीं बरत सकता। अपना ऋण अभी चुकाओ, नहीं तो जेल में सड़ो।”

हम उस व्यक्ति को पहचान गये, उसका नाम रस्तिदियन था। वह नौका के अनेक काश्तकारों में से एक था, जो कुछ रकम के लिये नौका का ऋणी था। वह चिथड़ों के बोझ से उतना ही झुका हुआ था जितना कि आयु के बोझ से। उसने ब्याज चुकाने के लिये यह कहते हुए मुखिया से विनयपूर्वक समय माँगा कि इन्हीं दिनों मैंने अपना एकमात्र पुत्र खो दिया है और इसी सप्ताह अपनी गाय भी, और इस शोक के फलस्वरूप मेरी बूढ़ी पत्नी को लकवा हो गया है। किन्तु शमदाम का हृदय नहीं पिघला।

मुर्शिद रस्तिदियन की ओर गये और कोमलतापूर्वक उसकी बाँह थामते हुए बोले:

मीरदाद: उठो, मेरे रस्तिदियन। तुम भी प्रभु का रूप हो, और प्रभु के रूप को किसी परछाई के सामने झुकने के लिये विवश नहीं किया जाना चाहिये।



फिर शमदाम की ओर मुड़ते हुए वे बोले:

मुझे ऋण-आलेख दिखाओ।

नरौंदा: शमदाम ने, जो केवल एक पल पहले क्रोधाकुल हो रहा था, हम सबको चकित कर दिया जब उसने मेमने से भी अधिक आज्ञाकारी होकर अपने हाथ का कागज़ चुपचाप मुर्शिद के हाथ में दे दिया। मुर्शिद ने कागज़ ले लिया और देर तक उसकी जाँच की, जब कि शमदाम स्तब्ध, बिना कुछ कहे देखता रहा, मानो उस पर कोई जादू कर दिया गया हो।

**मीरदाद:** कोई साहूकार नहीं था इस नौका का संस्थापक। क्या उसने धन विरासत के रूप में तुम्हारे लिये इस उद्देश्य से छोड़ा था कि तुम उसे उधार देकर सूदखोरी करो? क्या उसने चल-सम्पत्ति तुम्हारे लिये इस उद्देश्य से छोड़ी थी कि तुम उसे व्यापार में लगा दो, या ज़मीनें इस उद्देश्य से कि तुम उन्हें काश्तकारों को देकर अनाज की जमाखोरी करो? क्या उसने तुम्हारे भाइयों का खून-पसीना तुम्हें सौंपते हुए कारागार उन लोगों को बन्दी बनाने के उद्देश्य से छोड़े थे जिनका सारा पसीना तुमने बहा दिया है और जिनका खून तुमने आखिरी बूँद तक चूस लिया है?

एक नौका, एक वेदी, और एक ज्योति सौंपी थी उसने तुम्हें—इससे अधिक कुछ नहीं। नौका जो उसका जीवित शरीर है। वेदी जो उसका निर्भीक हृदय है। ज्योति जो उसका ज्वलन्त विश्वास है। और उसने तुम्हें आदेश दिया था कि इन तीनों को इस संसार में सदा सुरक्षित और पवित्र रखना; इस संसार में जो विश्वास के अभाव के कारण मृत्यु के ताल पर नाच रहा है और अन्याय की दलदल में लोट रहा है।

और तुम्हारे शरीर की चिन्ताएँ कहीं तुम्हारे ध्यान को इस लक्ष्य से हटा न दें, इसलिये तुम्हें श्रद्धालुओं के दान पर निर्वाह करने की अनुमति दी गई थी। और जब से नौका की स्थापना हुई है दान की कभी कमी नहीं रही।

किन्तु देखो! इस दान को तुमने अब एक अभिशाप बना लिया है, अपने और दानियों दोनों के लिये। क्योंकि दानियों द्वारा दिये गये उपहारों से ही तुम उन्हें अपने अधीन करते हो। जो सूत वे तुम्हारे लिये कातते हैं उसी

से तुम उन पर कोड़े बरसाते हो। जो कपड़ा वे तुम्हारे लिये बुनते हैं उसी से तुम उन्हें नंगा करते हो। जो रोटी वे तुम्हारे लिये पकाते हैं उसी से तुम उन्हें भूखों मारते हो। जिन पत्थरों को वे तुम्हारे लिये काटते और तराशते हैं उन्हीं से तुम उनके लिये बन्दीगृह बनाते हो। जो लकड़ी वे तुम्हें गरमाहट के लिये देते हैं उसी से तुम उनके लिये जुए और ताबूत बनाते हो। उनका अपना खून-पसीना ही तुम उन्हें वापस उधार दे देते हो ब्याज पर।

क्योंकि और क्या है पैसा सिवाय लोगों के खून-पसीने के जिसे धूर्तों ने छोटे-बड़े सिक्कों में ढाल लिया है, ताकि उनसे वे लोगों को बन्दी बना लें? और क्या है धन-दौलत सिवाय लोगों के खून-पसीने के जिसे उन धूर्त व्यक्तियों ने बटोरा है जो सबसे कम खून-पसीना बहाते हैं, ताकि वे इससे उन्हीं लोगों को पीस डालें जो सबसे अधिक खून-पसीना बहाते हैं?

धिक्कार है, बार-बार धिक्कार है उनको जो धन-दौलत इकट्ठी करने में अपने हृदय और बुद्धि को खपा देते हैं, अपने दिनों और रातों का खून कर देते हैं क्योंकि वे नहीं जानते कि वे क्या इकट्ठा कर रहे हैं।

वेश्याओं, हत्यारों और चोरों का पसीना; तपेदिक, कोढ़ और लकवे के रोगियों का पसीना; अन्धों का पसीना, लंगड़ों तथा लूलों का पसीना; और साथ ही पसीना किसान और उसके बैल का, चरवाहे तथा उसकी भेड़ का, फ़सल को काटने तथा बीननेवाले का—ये सब, और कितने ही और पसीने इकट्ठे कर लेते हैं धन-दौलत के जमाखोर।

अनाथों और दुष्टों का खून; तानाशाहों और शहीदों का खून; दुराचारियों और न्यायवानों का खून, लुटेरों और लूटेजानेवालों का खून; जल्लादों और उनके हाथों मरनेवालों का खून; शोषकों और ठगों तथा उनके द्वारा शोषित किये जानेवालों और ठगे जानेवालों का खून—ये सब और कितने ही और खून इकट्ठे कर लेते हैं धन-दौलत के जमाखोर।

हाँ, धिक्कार है, बार-बार धिक्कार है उनको जिनकी धन-दौलत और जिनके व्यापार का माल लोगों का खून और पसीना है! क्योंकि खून और पसीना तो आखिर अपनी क़ीमत वसूल करेंगे ही। और भीषण होगी वह क़ीमत, भयंकर उसकी वसूली।

उधार देना, और वह भी ब्याज पर! यह सचमुच कृतघ्नता है, इतनी निर्लज्ज कि इसे क्षमा नहीं किया जा सकता।

क्योंकि उधार देने के लिये तुम्हारे पास है क्या? क्या तुम्हारा जीवन ही एक उपहार नहीं है? यदि परमात्मा को तुम्हें दिये अपने छोटे से छोटे उपहार का भी ब्याज लेना हो, तो तुम उसे किस चीज़ से चुकाओगे?

क्या यह संसार एक संयुक्त कोष नहीं जिसमें हर मनुष्य, हर पदार्थ सबके भरण-पोषण के लिये अपना सब-कुछ जमा कर देता है?

क्या बुलबुल अपना गीत और झरना अपना उज्ज्वल जल तुम्हें उधार देते हैं?

क्या बरगद अपनी छाया और खजूर अपने शहद-से मीठे फल ऋज पर देते हैं?

क्या भेड़ अपना ऊन और गाय अपना दूध तुम्हें ब्याज पर देती हैं?

क्या बादल अपनी वर्षा और सूर्य अपनी गर्मी तथा प्रकाश तुम्हें मोल देते हैं?

इन वस्तुओं तथा अन्य हजारों वस्तुओं के बिना तुम्हारा जीवन कैसा होता? और तुममें से कौन बता सकता है कि संसार के कोष में किस मनुष्य, किस वस्तु ने सबसे अधिक और किसने सबसे कम जमा किया है?

शमदाम, क्या तुम नौका के कोष में रस्तिदियन के योगदान का हिसाब लगा सकते हो? फिर भी तुम उसी के योगदान को—शायद उसके योगदान के केवल एक तुच्छ अंश को—उसे ऋण के रूप में वापस देते हो और साथ ही उस पर ब्याज भी माँगते हो? फिर भी तुम उसे जेल भेजना चाहते हो और सड़ने के लिये वहाँ छोड़ देना चाहते हो?

क्या ब्याज माँगते हो तुम रस्तिदियन से? क्या तुम देख नहीं सकते कि तुम्हारे ऋण ने उसे कितना लाभ पहुँचाया है? मृत पुत्र, मृत गाय और पक्षाघात से पीड़ित पत्नी—इससे अधिक अच्छा भुगतान तुम क्या चाहते हो? इतनी झुकी हुई पीठ पर ये इतने गन्दे चिथड़े—इससे अधिक और क्या ब्याज वसूल कर सकते हो तुम?



आह, अपनी आँखें मलो, शमदाम! जागो, इससे पहले कि तुम्हें भी ब्याज सहित अपना ऋण चुकाने के लिये कहा जाये, और भुगतान न कर पाने की सूरत में तुम्हें भी घसीटकर जेल में डाल दिया जाये और वहीं सड़ने को छोड़ दिया जाये।

यही बात मैं तुम सबसे कहता हूँ, साथियो। अपनी आँखें मलो, और जागो।

जब दे सको, और जितना दे सको, दो। लेकिन ऋण कभी मत दो, कहीं ऐसा न हो कि जो कुछ तुम्हारे पास है, तुम्हारा जीवन भी, एक ऋण बनकर रह जाये और वह ऋण लौटाने का समय तुरन्त ही आ जाये, और तुम दिवालिया पाये जाओ और तुम्हें जेल में डाल दिया जाये।

नरौंदा: मुर्शिद ने तब हाथ में थामे कागज़ पर फिर से नज़र डाली और कुछ सोचकर उसे टुकड़े-टुकड़े कर दिया, और उन टुकड़ों को हवा में बिखेर दिया। फिर हिम्बल की ओर मुड़ते हुए, जो नौका का कोषाध्यक्ष था, वे बोले:

**मीरदाद:** रस्तिदियन को इतना धन दे दो कि वह दो गायें खरीद सके और जीवन के अन्त तक अपनी और अपनी पत्नी की देख-भाल कर सके।

और तुम, रस्तिदियन, शान्त मन से जाओ। तुम अपने ऋण से मुक्त हुए। ध्यान रखना कि तुम कभी लेनदार न बनो। क्योंकि लेनदार का ऋण देनदार के ऋण से कहीं अधिक बड़ा और भारी होता है।

## मीरदाद के विरुद्ध अपने संघर्ष में शमदाम रिश्वत का सहारा लेता है

नरौंदा: कई दिन तक रस्तिदियन का मामला नौका में चर्चा का मुख्य विषय बना रहा। मिकेयन, मिकास्तर तथा ज़मोरा ने जोश के साथ मुर्शिद की सराहना की; ज़मोरा ने तो कहा कि उसे धन को देखने और छूने तक से घृणा है। बैनून तथा अबिमार ने दबे स्वर में सहमति और असहमति प्रकट की। लेकिन हिम्बल ने यह कहते हुए स्पष्ट विरोध किया कि धन के बिना संसार का काम कभी नहीं चल सकता और कम-खर्ची और परिश्रम के लिये धन-सम्पत्ति परमात्मा का उचित पुरस्कार है, जैसे आलस्य और फुजूल-खर्ची के लिये ग़रीबी परमात्मा का प्रत्यक्ष दण्ड है। उसने यह भी कहा कि लेनदार और देनदार तो समय के अन्त तक संसार में रहेंगे ही।

इस दौरान शमदाम मुखिया के रूप में अपनी प्रतिष्ठा को सुधारने में व्यस्त था। उसने एक बार मुझे अपने पास बुलाया और अपने कमरे के एकान्त में मुझसे कहा:

“तुम इस नौका के लेखक और इतिहासकार हो; और तुम एक निर्धन व्यक्ति के पुत्र हो। तुम्हारे पिता के पास कोई ज़मीन नहीं, परन्तु उसके सात बच्चे और पत्नी हैं जिनके लिये उसे परिश्रम करना पड़ता है और जिनकी न्यूनतम आवश्यकताएँ उसे पूरी करनी पड़ती हैं। इस दुःखद घटना का एक भी शब्द मत लिखना, कहीं ऐसा न हो कि हमारे बाद आनेवाले लोग शमदाम को हास्य का पात्र बना लें। तुम इस पतित मीरदाद का साथ छोड़ दो, और मैं तुम्हारे पिता को भूमि-पति बना दूँगा, और उसका कोठार तथा तिजोरी पूरी तरह भर दूँगा।”

मैंने उत्तर दिया कि परमात्मा मेरे पिता तथा उसके परिवार का शमदाम की अपेक्षा कहीं अधिक अच्छा ध्यान रखेगा। जहाँ तक मीरदाद का सम्बन्ध है, उसे मैंने अपना मुर्शिद और मुक्तिदाता स्वीकार कर लिया है, और उसका साथ छोड़ने से पहले मैं अपने प्राण त्याग दूँगा। रही नौका के इतिहास की बात, वह मैं ईमानदारी के साथ तथा अपनी पूरी समझ और योग्यता के अनुसार लिखूँगा।

बाद में मुझे पता चला कि शमदाम ने ऐसे ही प्रस्ताव हरएक साथी के सामने रखे थे, किन्तु वे कितने सफल रहे यह मैं नहीं कह सकता। हाँ, इतना अवश्य देखने में आया कि हिम्बल पहले की तरह नियमित रूप से नीड़ में उपस्थित नहीं होता था।



हिम्बल के पिता की मृत्यु तथा  
जिन परिस्थितियों में उसकी मृत्यु हुई  
उन्हें मीरदाद दिव्य शक्ति के द्वारा जान लेता है  
वह मृत्यु की बात करता है

समय सबसे बड़ा मदारी है  
समय का चक्र, उसकी हाल और उसकी धुरी

नरौंदा: एक लम्बे समय के बाद, जब बहुत-सा जल पहाड़ों से नीचे बहता हुआ समुद्र में जा मिला था, हिम्बल के सिवाय बाक़ी सब साथी एक बार फिर नीड़ में मुर्शिद के चारों ओर इकट्ठे हुए।

मुर्शिद प्रभु-इच्छा पर चर्चा कर रहे थे। किन्तु अकस्मात् वे रुक गये और बोले:

मीरदाद: हिम्बल संकट में है और वह सहायता के लिये हमारे पास आना चाहता है, किन्तु संकोच के कारण उसके पैर इस ओर उठ नहीं पा रहे हैं। जाओ अबिमार, उसकी सहायता करो।

नरौंदा: अबिमार बाहर गया और शीघ्र ही हिम्बल को साथ लेकर लौट आया। हिम्बल की हिचकियाँ बँधी हुई थीं और चेहरा उदास था।

मीरदाद: मेरे पास आओ, हिम्बल।

ओह, हिम्बल, हिम्बल। तुम्हारे पिता की मृत्यु हो गई इसलिये तुम इतने असहाय हो गये कि दुःख ने तुम्हारे हृदय को बेध दिया और तुम्हारे रक्त को आँसुओं में बदल दिया। जब तुम्हारे परिवार के सब लोगों की मृत्यु हो जायेगी तब तुम क्या करोगे ? क्या करोगे तुम जब इस संसार के

सब पिता और माताएँ, और सब बहनें और भाई तुम्हारे हाथों और आँखों की पहुँच से परे चले जायेंगे ?

हिम्बल: हाँ, मुर्शिद। मेरे पिता की मृत्यु हिंसापूर्ण हुई है। एक बैल ने, जिसे उन्होंने हाल ही में खरीदा था, कल शाम उनके पेट में सींग भोंक दिया और उनका सिर कुचल डाला। मुझे अभी-अभी एक सन्देशवाहक ने यह सूचना दी है। हाय, अफ़सोस !

मीरदाद: और उनकी मृत्यु, जान पड़ता है, ठीक उस समय हुई जब उनका भाग्योदय होनेवाला था।

हिम्बल: ऐसा ही हुआ, मुर्शिद। ठीक ऐसा ही हुआ है।

मीरदाद: और उनकी मृत्यु तुम्हें इसलिये और भी अधिक दुःख दे रही है कि वह बैल उन्हीं पैसों से खरीदा गया था जो तुमने भेजे थे।

हिम्बल: यह सच है, मुर्शिद। ठीक ऐसा ही हुआ है। लगता है आप सब-कुछ जानते हैं।

मीरदाद: और वे पैसे मीरदाद के प्रति तुम्हारे प्रेम की क्रीमत थे।

नरौंदा: हिम्बल आगे कुछ न बोल सका, क्योंकि आँसुओं से उसका गला रुंध गया था।

मीरदाद: तुम्हारे पिता मरे नहीं हैं, हिम्बल। न ही उनका स्वरूप और परछाई अभी नष्ट हुए हैं। पर वास्तव में तुम्हारे पिता के बदले हुए स्वरूप और परछाई को देखने में तुम्हारी इन्द्रियाँ असमर्थ हैं। क्योंकि कुछ स्वरूप इतने सूक्ष्म होते हैं, और उनकी परछाइयाँ इतनी क्षीण कि मनुष्य की स्थूल आँख उन्हें देख नहीं सकती।

जंगल में किसी देवदार की परछाई वैसी नहीं होती जैसी परछाई उसी देवदार से बने जहाज़ के मस्तूल, या मन्दिर के स्तम्भ, या फाँसी के तख्ते की होती है। न ही उस देवदार की परछाई धूप में वैसी होती है जैसी चाँद या सितारों के प्रकाश में, या भोर की सिन्दूरी धुन्ध में होती है।

किन्तु वह देवदार, चाहे वह कितना ही बदल गया हो, देवदार के रूप में जीवित रहता है, यद्यपि जंगल के देवदार अब पहचान नहीं पाते कि वह बीते दिनों में उनका भाई था।

पत्ते पर बैठा रेशम का कीड़ा क्या रेशमी खोल में पल रहे कीड़े में अपने भाई की कल्पना कर सकता है? या खोल में पल रहा कीड़ा उड़ते हुए रेशम के पतंगों में अपना भाई देख सकता है?

क्या धरती के अन्दर पड़ा गेहूँ का दाना धरती के ऊपर खड़े गेहूँ के डण्ठल से अपना नाता समझ सकता है?

क्या हवा में उड़ती भाप या सागर का जल पर्वत की दरार में लटक रहे हिमलम्बों को भाई-बहनों के रूप में स्वीकार कर सकता है?

क्या धरती अन्तरिक्ष की गहराइयों में से अपनी ओर फेंके गए टूटे तारे में एक भाई तारा देख सकती है?

क्या बरगद का वृक्ष अपने बीज के अन्दर अपने आपको देख सकता है?

क्योंकि तुम्हारे पिता अब एक ऐसे प्रकाश में हैं जिसे देखने की तुम्हारी आँख अभ्यस्त नहीं है, और ऐसे रूप में हैं जिसे तुम पहचान नहीं सकते, तुम कहते हो कि तुम्हारे पिता अब नहीं हैं। किन्तु मनुष्य का भौतिक अस्तित्व, चाहे वह कहीं भी पहुँच गया हो, कितना ही बदल गया हो, एक परछाईं जरूर फेंकेगा जब तक वह मनुष्य के ईश्वरीय प्रकाश में पूरी तरह विलीन नहीं हो जाता।

लकड़ी का एक टुकड़ा, चाहे वह आज पेड़ की हरी शाखा हो और कल दीवार में गड़ी खूँटी, लकड़ी ही रहता है और अपना रूप तथा परछाईं बदलता रहता है जब तक वह अपने अन्दर छिपी आग में जलकर भस्म नहीं हो जाता। इसी तरह मनुष्य, जीते हुए और मरकर भी, मनुष्य ही रहेगा जब तक उसके अन्दर का प्रभु उसे पूरी तरह अपने में समा न ले; अर्थात् जब तक वह उस एक के साथ अपने एकत्व का अनुभव न कर ले। परन्तु ऐसा आँख के उस एक निमेष में नहीं हो जाता जिसे मनुष्य जीवन-काल का नाम देता है।

सम्पूर्ण समय जीवन-काल है, मेरे साथियो।

समय में कोई आरम्भ या पड़ाव नहीं हैं। न ही उसमें कोई सराय हैं जहाँ यात्री जल-पान और विश्राम के लिये रुक सकें।



समय एक निरन्तरता है जो अपने आपमें सिमटती जाती है। इसका पिछला छोर इसके अगले छोर के साथ जुड़ा है। समय में कुछ भी समाप्त और विसर्जित नहीं होता; कुछ भी आरम्भ तथा पूर्ण नहीं होता।

समय इन्द्रियों के द्वारा रचित एक चक्र है, और इन्द्रियों के द्वारा ही उसे स्थान के शून्यों में घुमा दिया जाता है।

तुम ऋतुओं के चकरा देनेवाले परिवर्तन का अनुभव करते हो, और इसलिये विश्वास करते हो कि सबकुछ परिवर्तन की जकड़ में है। परन्तु साथ ही तुम यह भी मानते हो कि ऋतुओं को प्रकट और विलीन करनेवाली शक्ति एक रहती है, सदैव वही रहती है।

तुम वस्तुओं के विकास तथा क्षय को देखते हो, और निराशापूर्वक घोषणा करते हो कि सभी विकासशील वस्तुओं का अन्त क्षय होता है। परन्तु साथ ही तुम यह भी स्वीकार करते हो कि विकसित और क्षीण करनेवाली शक्ति स्वयं न विकसित होती है न क्षीण।

तुम बयार की तुलना में वायु के वेग का अनुभव करते हो, और कह देते हो कि दोनों में से वायु अधिक वेगवान् है। किन्तु इसके बावजूद तुम स्वीकार करते हो कि वायु को गति देनेवाला और बयार को गति देनेवाला एक ही है, और वह न तो वायु के साथ वेग से दौड़ता है और न ही बयार के साथ ठुमकता है।

कितनी आसानी से विश्वास कर लेते हो तुम! कितनी आसानी से तुम इन्द्रियों के हर धोखे में आ जाते हो! कहाँ है तुम्हारी कल्पना? क्योंकि उसी के द्वारा तुम यह देख सकते हो कि जो परिवर्तन तुम्हें चकरा देते हैं, वे केवल हाथ की सफ़ाई हैं।

वायु बयार से तेज़ कैसे हो सकती है? क्या बयार ही वायु को जन्म नहीं देती? क्या वायु बयार को अपने साथ लिये नहीं फिरती?

ऐ धरती पर चलनेवालो, तुम अपने पैरों द्वारा तय की गई दूरियों को क़दमों और कोसों में क्यों नापते हो? तुम चाहे धीरे-धीरे टहलो या सरपट दौड़ो, क्या धरती की गति तुम्हें उन अन्तरिक्षों और मण्डलों में नहीं ले जाती जहाँ स्वयं धरती को ले जाया जाता है? इसलिये तुम्हारी चाल क्या

वही नहीं जो धरती की चाल है? और फिर, क्या धरती को अन्य पिण्ड अपने साथ नहीं ले जाते, और उसकी गति को अपनी गति के बराबर नहीं कर लेते?

हाँ, धीमा ही वेगवान् को जन्म देता है। वेगवान् धीमे का वाहक है। धीमे और वेगवान् को समय और स्थान के किसी भी बिन्दु पर एक-दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता।

तुम यह कैसे कहते हो कि विकास विकास है और क्षय क्षय है, और वे एक दूसरे के बैरी हैं? क्या कभी किसी वस्तु का उद्गम क्षीण हो चुकी किसी वस्तु के अतिरिक्त और कहीं से हुआ है?

और क्या कभी किसी वस्तु में क्षय का आगमन विकसित हो रही किसी वस्तु के अतिरिक्त और कहीं से हुआ है?

क्या तुम निरन्तर क्षीण होकर ही विकसित नहीं हो रहे हो? क्या तुम निरन्तर विकसित होकर ही क्षीण नहीं हो रहे हो?

जो जीवित हैं, मृतक क्या उनके लिये मिट्टी की निचली परत नहीं हैं? और जो मृतक हैं, जीवित क्या उनके लिये अनाज के गोदाम नहीं हैं?

यदि विकास क्षय की सन्तान है और क्षय विकास की; यदि जीवन मृत्यु की जननी है, और मृत्यु जीवन की, तो वास्तव में वे समय और स्थान के प्रत्येक बिन्दु पर एक ही हैं। और जीने तथा विकसित होने पर तुम्हारी प्रसन्नता वास्तव में उतनी ही बड़ी मूर्खता है जितनी मरने और क्षीण होने पर तुम्हारा शोक।

तुम यह कैसे कहते हो कि पतझड़ ही अंगूर की ऋतु है? मैं कहता हूँ कि अंगूर शीत ऋतु में भी पका होता है जब वह बेल के अन्दर अदृश्य रूप में स्पन्दित हो रहा और सपने देख रहा केवल सुप्त रस होता है; और वह पका होता है बसन्त ऋतु में भी, जब वह हरे रंग के छोटे-छोटे मनकों के कोमल गुच्छों के रूप में प्रकट होता है; और ग्रीष्म ऋतु में भी, जब गुच्छे फैल जाते हैं, मनके फूल उठते हैं और उनके गाल सूर्य के स्वर्ण में रँग जाते हैं।



यदि हर ऋतु अपने भीतर अन्य तीनों ऋतुओं को धारण किये हुए है, तो निःसन्देह सब ऋतुएँ समय और स्थान के प्रत्येक बिन्दु पर एक ही हैं।

हाँ, समय सबसे बड़ा मदारी है, और मनुष्य धोखे का सबसे बड़ा शिकार है।

पहिये की हाल पर दौड़ती गिलहरी की तरह ही मनुष्य, जिसने स्वयं ही समय के पहिये को गति दी है, पहिये की गति पर इतना मोहित है, उससे इतना प्रभावित है कि अब उसे विश्वास नहीं होता कि उसे घुमानेवाला वह स्वयं है, न ही वह समय की गति को रोकने के लिये 'समय निकाल पाता' है।

और उस बिल्ली की तरह ही जो इस विश्वास में कि जो रक्त वह चाट रही है वह पत्थर में से रिस रहा है सान को चाटने में अपनी जीभ घिसा देती है, मनुष्य भी इस विश्वास में कि यह समय का रक्त और मांस है समय की हाल पर गिरा अपना ही रक्त चाटता जाता है और समय के आरों द्वारा चीर डाला गया अपना ही मांस चबाये जाता है।

समय का पहिया स्थान के शून्य में घूमता है। इसकी हाल पर ही वे सब वस्तुएँ हैं जिनका इन्द्रियाँ अनुभव कर सकती हैं, लेकिन वे केवल समय और स्थान की सीमा के अन्दर ही किसी वस्तु का अनुभव कर सकती हैं। इसलिये वस्तुएँ प्रकट और लुप्त होती रहती हैं। जो वस्तु एक के लिये समय और स्थान के एक बिन्दु पर लुप्त होती है, वह दूसरे के लिये किसी दूसरे बिन्दु पर प्रकट हो जाती है। जो एक के लिये ऊपर हो, वह दूसरे के लिये नीचे है। जो एक के लिये दिन हो, वह दूसरे के लिये रात है, और यह निर्भर करता है देखने वाले के 'कब' और 'कहाँ' पर।

समय के पहिये की हाल पर जीवन और मृत्यु का रास्ता एक ही है, साधुओं। क्योंकि गोलाई में हो रही गति कभी किसी अन्त पर नहीं पहुँच सकती, न ही वह कभी खत्म होकर रुक सकती है। और संसार में हो रही प्रत्येक गति गोलाई में हो रही गति है।

तो क्या मनुष्य अपने आपको समय के अन्तहीन चक्र से कभी मुक्त नहीं करेगा?



करेगा, अवश्य करेगा, क्योंकि मनुष्य प्रभु की दिव्य स्वतन्त्रता का उत्तराधिकारी है।

समय का पहिया घूमता है, किन्तु इसकी धुरी सदा स्थिर है।

प्रभु समय के पहिये की धुरी है। यद्यपि सब वस्तुएँ समय और स्थान में प्रभु के चारों ओर घूमती हैं, फिर भी प्रभु सदैव समय-मुक्त, स्थान-मुक्त और स्थिर है। यद्यपि सब वस्तुएँ उसके शब्द से उत्पन्न होती हैं, फिर भी उसका शब्द उतना ही समय-मुक्त और स्थान-मुक्त है जितना वह स्वयं।

धुरी में शान्ति ही शान्ति है, हाल पर अशान्ति ही अशान्ति है। तुम कहाँ रहना पसन्द करोगे?

मैं तुमसे कहता हूँ, तुम समय की हाल पर से सरककर उसकी धुरी पर आ जाओ और अपने आपको गति की बेचैनी से बचा लो। समय को अपने चारों ओर घूमने दो; पर समय के साथ खुद मत घूमो।

## तर्क और विश्वास

अहं को नकारना अहं को उभारना है  
समय के पहिये को कैसे रोका जाये  
रोना और हँसना

बैनून: क्षमा करें, मुर्शिद। आपका तर्क अपनी तर्कहीनता से मुझे उलझन में डाल देता है।

मीरदाद: हैरानी की बात नहीं, बैनून, कि तुम्हें 'न्यायाधीश' कहा गया है। किसी मामले के तर्क-संगत होने का विश्वास हो जाने पर ही तुम उस पर निर्णय दे सकते हो। तुम इतने समय तक न्यायाधीश रहे हो, तो भी क्या तुम अब तक यह नहीं जान पाये कि तर्क का एकमात्र उपयोग मनुष्य को तर्क से छुटकारा दिलाना और उसको विश्वास की ओर प्रेरित करना है जो दिव्य ज्ञान की ओर ले जाता है।

तर्क अपरिपक्वता है जो ज्ञान के विशालकाय पशु को फँसाने के इरादे से अपने बारीक जाल बुनता रहता है। जब तर्क वयस्क हो जाता है तो अपने ही जाल में अपना दम घोंट लेता है, और फिर बदल जाता है विश्वास में जो वास्तव में गहरा ज्ञान है।

तर्क अपाहिजों के लिये बैसाखी है; किन्तु तेज़ पैरवालों के लिये एक बोझ है, और पंखवालों के लिये तो और भी बड़ा बोझ।

तर्क सठिया गया विश्वास है। विश्वास वयस्क हो गया तर्क है। जब तुम्हारा तर्क वयस्क हो जायेगा, बैनून, और वयस्क वह जल्दी ही होगा, तब तुम कभी तर्क की बात नहीं करोगे।

बैनून: समय की हाल से उसकी धुरी पर आने के लिये हमें अपने आपको नकारना होगा। क्या मनुष्य अपने अस्तित्व को नकार सकता है ?

मीरदाद: बेशक ! इसके लिये तुम्हें उस अहं को नकारना होगा जो समय के हाथों में एक खिलौना है और इस तरह उस अहं को उभारना होगा जिस पर समय के जादू का असर नहीं होता।

बैनून: क्या एक अहं को नकारना दूसरे अहं को उभारना हो सकता है ?

मीरदाद: हाँ, अहं को नकारना ही अहं को उभारना है। जब कोई परिवर्तन के लिये मर जाता है तो वह परिवर्तन-रहित हो जाता है। अधिकांश लोग मरने के लिये जीते हैं। भाग्यशाली हैं वे जो जीने के लिये मरते हैं।

बैनून: परन्तु मनुष्य को अपनी अलग पहचान बड़ी प्रिय है। यह कैसे सम्भव है कि वह प्रभु में लीन हो जाये और फिर भी उसे अपनी अलग पहचान का बोध रहे ?

मीरदाद: क्या किसी नदी-नाले के लिये सागर में समा जाना और इस प्रकार अपने आपको सागर के रूप में पहचानने लगना घाटे का सौदा है ? अपनी अलग पहचान को प्रभु के अस्तित्व में लीन कर देना वास्तव में मनुष्य का अपनी परछाई को खो देना है और अपने अस्तित्व का परछाई-रहित सार पा लेना है।

मिकास्तर: मनुष्य, जो समय का जीव है, समय की जकड़ से कैसे छूट सकता है ?

मीरदाद: जिस प्रकार मृत्यु तुम्हें मृत्यु से छुटकारा दिलायेगी और जीवन जीवन से, उसी प्रकार समय तुम्हें समय से मुक्ति दिलायेगा।

मनुष्य परिवर्तन से इतना ऊब जायेगा कि उसका पूरा अस्तित्व परिवर्तन से अधिक शक्तिशाली वस्तु के लिये तरसेगा, कभी मन्द न पड़ने वाली तीव्रता के साथ तरसेगा। और निश्चय ही वह उसे अपने अन्दर प्राप्त करेगा।

भाग्यशाली हैं वे जो तरसते हैं, क्योंकि वे स्वतन्त्रता की देहरी पर पहुँच चुके हैं। उन्हीं की मुझे तलाश है, और उन्हीं के लिये मैं उपदेश देता हूँ। क्या तुम्हारी व्याकुल पुकार सुनकर ही मैंने तुम्हें नहीं चुना है ?



पर अभागे हैं वे जो समय के चक्र के साथ घूमते हैं और उसी में अपनी स्वतन्त्रता और अपनी शान्ति ढूँढ़ने की कोशिश करते हैं। वे अभी जन्म पर मुस्कराते ही हैं कि उन्हें मृत्यु पर रोना पड़ जाता है। वे अभी भरते ही हैं कि उन्हें खाली कर दिया जाता है। वे अभी शान्ति के कपोत को पकड़ते ही हैं कि उनके हाथों में ही उसे युद्ध के गिद्ध में बदल दिया जाता है। अपनी समझ में वे जितना अधिक जानते हैं, वास्तव में वे उतना ही कम जानते हैं। जितना वे आगे बढ़ते हैं, उतनी ही पीछे हट जाते हैं। जितने वे ऊपर उठते हैं, उतना ही नीचे गिर जाते हैं।

उनके लिये मेरे शब्द केवल एक अस्पष्ट और उत्तेजक फुसफुसाहट होंगे; पागलखाने में की गई प्रार्थना के समान होंगे, और होंगे अन्धों के सामने जलाई गई मशाल के समान। जब तक वे भी स्वतन्त्रता के लिये तरसने नहीं लगेंगे, मेरे शब्दों की ओर ध्यान नहीं देंगे।

**हिम्बल:** (रोते हुए) आपने केवल मेरे कान ही नहीं खोल दिये, मुर्शिद, बल्कि मेरे हृदय के द्वार भी खोल दिये हैं। कल के बहरे और अन्धे हिम्बल को क्षमा करें।

**मीरदाद:** अपने आँसुओं को रोको, हिम्बल। समय और स्थान की सीमाओं से परे के क्षितिजों को खोजनेवाली आँख में आँसू शोभा नहीं देते।

जो समय की चालाक अंगुलियों द्वारा गुदगुदाये जाने पर हँसते हैं, उन्हें समय के नाखूनों द्वारा अपनी चमड़ी के तार-तार किये जाने पर रोने दो।

जो यौवन की कान्ति के आगमन पर नाचते और गाते हैं, उन्हें बुढ़ापे की झुर्रियों के आगमन पर लड़खड़ाने और कराहने दो।

समय के उत्सवों में आनन्द मनानेवालों को समय की अन्त्येष्टियों में अपने सिर पर राख डालने दो।

किन्तु तुम सदा शान्त रहो। परिवर्तन के बहुरूपदर्शी दर्पण में केवल परिवर्तन-मुक्त को खोजो।

समय में कोई वस्तु इस योग्य नहीं कि उसके लिये आँसू बहाये जायें। कोई वस्तु इस योग्य नहीं कि उसके लिये मुस्कराया जाये। हँसता हुआ चेहरा और रोता हुआ चेहरा समान रूप से अशोभनीय और विकृत होते हैं।

क्या तुम आँसुओं के खारेपन से बचना चाहते हो? तो फिर हँसी की कुरूपता से बचो।

आँसू जब भाप बनकर उड़ता है तो हँसी का रूप धारण कर लेता है; हँसी जब सिमटती है तो आँसू बन जाती है।

ऐसे बनो कि तुम न हर्ष में फैलकर खो जाओ, और न शोक में सिमटकर अपने अन्दर घुट जाओ। बल्कि दोनों में तुम समान रहो, शान्त रहो।

## मरने के बाद हम कहाँ जाते हैं ?

### पश्चात्ताप

मिकास्तर: मुर्शिद, मरने के बाद हम कहाँ जाते हैं ?

मीरदाद: इस समय तुम कहाँ हो, मिकास्तर ?

मिकास्तर: नीड़ में।

मीरदाद: तुम समझते हो कि यह नीड़ तुम्हें अपने अन्दर रखने के लिये काफी बड़ा है ? तुम समझते हो कि यह धरती मनुष्य का एकमात्र घर है ?

तुम्हारा शरीर, चाहे वह समय और स्थान की सीमा में बँधा हुआ है, समय और स्थान में विद्यमान हर पदार्थ में से लिया जाता है। तुम्हारा जो अंश सूर्य में से आता है, वह सूर्य में जीता है। तुम्हारा जो अंश धरती में से आता है, वह धरती में जीता है। और ऐसा ही अन्य सभी ग्रहों और उनके बीच के पथहीन शून्यों के साथ भी है।

केवल मूर्ख ही यह सोचना पसन्द करते हैं कि मनुष्य का एकमात्र आवास धरती है तथा आकाश में तैरते असंख्य पिण्ड सिर्फ मनुष्य के आवास की सजावट के लिये हैं, उसकी दृष्टि को भरमाने के लिये हैं।

प्रभात-तारा, आकाश-गंगा, कृत्तिका मनुष्य के लिये इस धरती से कम घर नहीं है। जब-जब वे उसकी आँख में किरण डालते हैं, वे उसे अपनी ओर उठाते हैं। जब-जब वह उनके नीचे से गुज़रता है, वह उनको अपनी ओर खींचता है।

सब वस्तुएँ मनुष्य में समाई हुई हैं, और मनुष्य सब वस्तुओं में। यह ब्रह्माण्ड केवल एक ही पिण्ड है। इसके सूक्ष्म से सूक्ष्म कण के साथ सम्पर्क कर लो, और तुम्हारा सभी के साथ सम्पर्क हो जायेगा।



और जिस प्रकार तुम जीते हुए मरते जाते हो, उसी प्रकार मरकर तुम जीते रहते हो; यदि इस शरीर में नहीं, तो किसी अन्य रूप वाले शरीर में। परन्तु तुम शरीर में निरन्तर रहते हो जब तक परमात्मा में विलीन नहीं हो जाते; दूसरे शब्दों में, जब तक तुम हर प्रकार के परिवर्तन पर विजय नहीं पा लेते।

**मिकास्तर:** एक शरीर से दूसरे शरीर में जाते हुए क्या हम वापस इस धरती पर आते हैं ?

**मीरदाद:** समय का नियम पुनरावृत्ति है। समय में जो एक बार घट गया, उसका बार-बार घटना अनिवार्य है; जहाँ तक मनुष्य का सम्बन्ध है, अन्तराल लम्बे या छोटे हो सकते हैं, और यह निर्भर करता है पुनरावृत्ति के लिये प्रत्येक मनुष्य की इच्छा और संकल्प की प्रबलता पर।

जब तुम जीवन कहलानेवाले चक्र में से निकलकर मृत्यु कहलानेवाले चक्र में प्रवेश करोगे, और अपने साथ ले जाओगे धरती के लिये अनबुझी प्यास तथा उसके भोगों के लिये अतृप्त कामनाएँ, तब धरती का चुम्बक तुम्हें वापस उसके वक्ष की ओर खींच लेगा। तब धरती तुम्हें अपना दूध पिलायेगी, और समय तुम्हारा दूध छुड़वायेगा—एक के बाद दूसरे जीवन में और एक के बाद दूसरी मौत तक, और यह क्रम तब तक चलता रहेगा जब तक तुम स्वयं अपनी ही इच्छा और संकल्प से धरती का दूध सदा के लिये त्याग नहीं दोगे।

**अबिमार:** हमारी धरती का प्रभुत्व क्या आप पर भी है, मुर्शिद ? क्योंकि आप हम जैसे ही दिखाई देते हैं।

**मीरदाद:** मैं जब चाहता हूँ आता हूँ, और जब चाहता हूँ चला जाता हूँ। मैं इस धरती के वासियों को धरती की दासता से मुक्त करवाने आता हूँ।

**मिकेयन:** मैं सदा के लिये धरती से अलग होना चाहता हूँ। यह मैं कैसे कर सकता हूँ, मुर्शिद ?

**मीरदाद:** धरती तथा उसके सब बच्चों से प्रेम करके। जब धरती के साथ तुम्हारे खाते में केवल प्रेम ही बाक़ी रह जायेगा, तब धरती तुम्हें अपने ऋण से मुक्त कर देगी।

मिकेयन: परन्तु प्रेम मोह है, और मोह एक बन्धन है।

मीरदाद: नहीं, केवल प्रेम ही मोह से मुक्ति है। तुम जब हर वस्तु से प्रेम करते हो, तुम्हारा किसी भी वस्तु के प्रति मोह नहीं रहता।

ज़मोरा: क्या प्रेम के द्वारा कोई प्रेम के प्रति किये गए अपने पापों को दोहराने से बच सकता है और क्या इस तरह समय के चक्र को रोक सकता है ?

मीरदाद: यह तुम पश्चात्ताप के द्वारा कर सकते हो। तुम्हारी जिह्वा से निकले दुर्वचन जब लौटकर तुम्हारी जिह्वा को प्रेमपूर्ण शुभ कामनाओं से लिप्त पायेंगे तो अपने लिये कोई और ठिकाना ढूँढ़ेंगे। इस प्रकार प्रेम उन दुर्वचनों की पुनरावृत्ति को रोक देगा।

कामपूर्ण दृष्टि जब लौटकर उस आँख को, जिसमें से वह निकली है, प्रेमपूर्ण चितवनों से छलकती हुई पायेगी तो कोई दूसरी कामपूर्ण आँख ढूँढ़ेगी। इस प्रकार प्रेम उस कामातुर चितवन की पुनरावृत्ति पर रोक लगा देगा।

दुष्ट हृदय से निकली दुष्ट इच्छा जब लौटकर उस हृदय को प्रेमपूर्ण कामनाओं से छलकता हुआ पायेगी, तो कहीं और घोंसला ढूँढ़ेगी। इस प्रकार प्रेम उस दुष्ट इच्छा के फिर से जन्म लेने के प्रयास को निष्फल कर देगा।

यही है पश्चात्ताप।

जब तुम्हारे पास केवल प्रेम ही बाक़ी रह जाता है तो समय तुम्हारे लिये प्रेम के सिवाय और कुछ नहीं दोहरा सकता। जब हर जगह और वक़्त पर एक चीज़ दोहराई जाती है तो वह एक नित्यता बन जाती है जो सम्पूर्ण समय और स्थान में व्याप्त हो जाती है और इस प्रकार इन दोनों के अस्तित्व को ही मिटा देती है।

हिम्बल: फिर भी एक और बात मेरे हृदय को बेचैन और मेरी बुद्धि को धुँधला करती है, मुर्शिद। मेरे पिता ऐसी मौत क्यों मरे, किसी और मौत क्यों नहीं ?

## पवित्र प्रभु-इच्छा

घटनाएँ जैसे और जब घटती हैं  
वैसे और तब क्यों घटती हैं ?

**मीरदाद:** कैसी विचित्र बात है कि तुम, जो समय और स्थान के बालक हो, अभी तक यह नहीं जानते कि समय स्थान की शिलाओं पर अंकित की हुई ब्रह्माण्ड की स्मृति है।

यदि इन्द्रियों द्वारा सीमित होने के बावजूद तुम अपने जन्म और मृत्यु के बीच की कुछ विशेष बातों को याद रख सकते हो तो समय, जो तुम्हारे जन्म से पहले भी था और तुम्हारी मृत्यु के बाद भी सदा रहेगा, कितनी अधिक बातों को याद रख सकता है ?

मैं तुमसे कहता हूँ, समय हर छोटी से छोटी बात को याद रखता है—केवल उन बातों को ही नहीं जो तुम्हें स्पष्ट याद हैं, बल्कि उनको भी जिनसे तुम पूरी तरह अनजान हो।

क्योंकि समय कुछ भी नहीं भूलता; छोटी से छोटी चेष्टा, श्वास-निःश्वास, या मन की तरंग तक को नहीं। और वह सबकुछ जो समय की स्मृति में अंकित होता है स्थान में मौजूद पदार्थों पर गहरा खोद दिया जाता है।

वही धरती जिस पर तुम चलते हो, वही हवा जिसमें तुम साँस लेते हो, वही मकान जिनमें तुम रहते हो, तुम्हारे अतीत, वर्तमान तथा भावी जीवन की सूक्ष्मतम बातों को सहज ही तुम्हारे सामने प्रकट कर सकते हैं, यदि तुममें केवल पढ़ने की शक्ति और अर्थ को ग्रहण करने की उत्सुकता हो।



जैसे जीवन में वैसे ही मृत्यु में, जैसे धरती पर वैसे ही धरती के परे, तुम कभी अकेले नहीं हो, बल्कि उन पदार्थों और जीवों की निरन्तर संगति में हो जो तुम्हारे जीवन और मृत्यु में भागीदार हैं, वैसे ही जैसे उनके जीवन और मृत्यु में तुम भागीदार हो। जैसे तुम उनसे कुछ लेते हो, वैसे ही वे तुमसे कुछ लेते हैं, और जैसे तुम उन्हें ढूँढ़ते हो, वैसे ही वे तुम्हें ढूँढ़ते हैं।

हर पदार्थ में मनुष्य की इच्छा शामिल है और मनुष्य में शामिल है हर पदार्थ की इच्छा। यह परस्पर विनिमय निरन्तर चलता रहता है। परन्तु मनुष्य की दुर्बल स्मृति एक बहुत ही घटिया मुनीम है। समय की अचूक स्मृति का यह हाल नहीं है; वह मनुष्य के अपने साथी मनुष्यों के साथ तथा ब्रह्माण्ड के अन्य सब जीवों के साथ सम्बन्धों का पूरा-पूरा हिसाब रखती है, और मनुष्य को हर जीवन तथा हर मृत्यु में प्रतिक्षण अपना हिसाब चुकाने पर विवश करती है।

बिजली कभी किसी मकान पर नहीं गिरती जब तक वह मकान उसे अपनी ओर न खींचे। अपनी बरबादी के लिये यह मकान उतना ही ज़िम्मेदार होता है जितनी बिजली।

साँड़ कभी किसी मनुष्य को सींग नहीं मारता जब तक वह मनुष्य उसे सींग मारने के लिये निमन्त्रण न दे। और वास्तव में वह मनुष्य इस रक्त-पात के लिये साँड़ से अधिक उत्तरदायी होता है।

मारा जानेवाला मारनेवाले के छुरे को सान देता है और घातक वार दोनों करते हैं।

लुटनेवाला लूटनेवाले की चेष्टाओं को निर्देश देता है, और डाका दोनों डालते हैं।

हाँ, मनुष्य अपनी विपत्तियों को निमन्त्रण देता है और फिर इन दुःखदायी अतिथियों के प्रति विरोध प्रकट करता है, क्योंकि वह भूल जाता है कि उसने कैसे, कब और कहाँ उन्हें निमन्त्रण-पत्र लिखे तथा भेजे थे। परन्तु समय नहीं भूलता; समय उचित अवसर पर हर निमन्त्रण-पत्र ठीक पते पर दे देता है, और समय ही हर अतिथि को मेज़बान के घर पहुँचाता है।

मैं तुमसे कहता हूँ, किसी अतिथि का विरोध मत करो, कहीं ऐसा न हो कि बहुत ज्यादा देर तक ठहरकर, या जितनी बार वह अन्यथा आवश्यक समझता उससे अधिक बार आकर, वह अपने स्वाभिमान को लगी ठेस का बदला ले।

अपने सभी अतिथियों का प्रेमपूर्वक सत्कार करो, चाहे उनकी चाल-ढाल और उनका व्यवहार कैसा भी हो, क्योंकि वे वास्तव में केवल तुम्हारे लेनदार हैं। खासकर अप्रिय अतिथियों का जितना चाहिये उससे भी अधिक सत्कार करो ताकि वे सन्तुष्ट और आभारी होकर जायें, और यदि दोबारा तुम्हारे घर आयें तो मित्र बनकर आयें, लेनदार बनकर नहीं।

प्रत्येक अतिथि की ऐसी आवभगत करो मानो वह तुम्हारा विशेष सम्मानित अतिथि हो, ताकि तुम उसका विश्वास प्राप्त कर सको और उसके आने के गुप्त उद्देश्यों को जान सको।

दुर्भाग्य को इस प्रकार स्वीकार करो मानो वह सौभाग्य हो, क्योंकि दुर्भाग्य को यदि एक बार समझ लिया जाये तो वह शीघ्र ही सौभाग्य में बदल जाता है। जब कि सौभाग्य का यदि ग़लत अर्थ लगा लिया जाये तो वह शीघ्र ही दुर्भाग्य बन जाता है।

तुम्हारी अस्थिर स्मृति स्पष्ट दिखाई दे रहे छिद्रों और दरारों से भरा भ्रमों का जाल है; इसके बावजूद अपने जन्म तथा मृत्यु का, उनके समय, स्थान और ढंग का चुनाव भी तुम स्वयं ही करते हो।

बुद्धिमत्ता का दावा करनेवाले घोषणा करते हैं कि अपने जन्म और मृत्यु में मनुष्य का अपना कोई हाथ नहीं होता। आलसी लोग, जो समय और स्थान को अपनी संकीर्ण तथा टेढ़ी नज़र से देखते हैं, समय और स्थान में घटनेवाली अधिकांश घटनाओं को संयोग मानकर उन्हें सहज ही मन से निकाल देते हैं। उनके मिथ्या गर्व और धोखे से सावधान, मेरे साथियो।

समय और स्थान के अन्दर कोई आकस्मिक घटना नहीं होती। सब घटनाएँ प्रभु-इच्छा के आदेश से घटती हैं, जो न किसी बात में ग़लती करती है, न किसी चीज़ को अनदेखा करती है।



जैसे वर्षा की बूँदें अपने आपको झरनों में एकत्र कर लेती हैं, झरने, नालों और छोटी नदियों में इकट्ठे होने के लिये बहते हैं, छोटी नदियाँ तथा नाले अपने आपको सहायक नदियों के रूप में बड़ी नदियों को अर्पित कर देते हैं, महानदियाँ अपने जल को सागर तक पहुँचा देती हैं, और सागर महासागर में इकट्ठे हो जाते हैं, वैसे ही हर सृष्ट पदार्थ या जीव की हर इच्छा एक सहायक नदी के रूप में बहकर प्रभु-इच्छा में जा मिलती है।

मैं तुमसे कहता हूँ कि हर पदार्थ की अपनी इच्छा होती है। यहाँ तक कि पत्थर भी, जो देखने में इतना गूँगा, बहरा और बेजान होता है, इच्छा से विहीन नहीं होता। इसके बिना उसका अस्तित्व ही न होता, और न वह किसी चीज़ को प्रभावित करता न कोई चीज़ उसे प्रभावित करती। इच्छा करने का और अस्तित्व का उसका बोध मात्रा में मनुष्य के बोध से भिन्न हो सकता है, परन्तु अपने मूल रूप में नहीं।

एक दिन के जीवन के कितने अंश के बोध का तुम दावा कर सकते हो? निःसन्देह, एक बहुत ही थोड़े अंश के बोध का।

बुद्धि और स्मरण-शक्ति से तथा भावनाओं और विचारों को दर्ज करने के साधनों से सम्पन्न होते हुए भी यदि तुम एक दिन के जीवन के अधिकांश भाग से बेखबर रहते हो, तो फिर यदि पत्थर अपने जीवन और इच्छा से इस तरह बेखबर रहता है तो तुम्हें आश्चर्य क्यों होता है?

और जिस प्रकार जीने और चलने-फिरने का बोध न होते हुए तुम इतना जी लेते हो, चल-फिर लेते हो, उसी प्रकार इच्छा करने का बोध न होते हुए भी तुम इतनी इच्छाएँ कर लेते हो। किन्तु प्रभु-इच्छा को तुम्हारे और ब्रह्माण्ड के हर जीव और पदार्थ की निर्बोधता का ज्ञान है।

समय के प्रत्येक क्षण और स्थान के प्रत्येक बिन्दु पर अपने आपको फिर से बाँटना प्रभु-इच्छा का स्वभाव है। और ऐसा करते हुए प्रभु-इच्छा हर मनुष्य को और हर पदार्थ को वह सब लौटा देती है—न उससे अधिक न कम—जिसकी उसने जानते हुए या अनजाने इच्छा की थी। परन्तु मनुष्य यह बात नहीं जानते, इसलिये प्रभु-इच्छा के थैले में से, जिसमें सबकुछ होता है, उनके हिस्से में जो आता है उससे वह बहुधा निराश हो जाते



हैं। और फिर हताश होकर शिकायत करते हैं और अपनी निराशा के लिये चंचल भाग्य को दोषी ठहराते हैं।

भाग्य चंचल नहीं होता, साधुओ, क्योंकि भाग्य प्रभु-इच्छा का ही दूसरा नाम है। यह तो मनुष्य की इच्छा है जो अभी तक अत्यन्त चपल, अत्यन्त अनियमित तथा अपने मार्ग के बारे में अनिश्चित है। यह आज तेज़ी से पूर्व की ओर दौड़ती है तो कल पश्चिम की ओर। यह किसी चीज़ पर यहाँ अच्छाई की मुहर लगा देती है, तो उसी को वहाँ बुरा कहकर उसकी निन्दा करती है। अभी यह किसी मनुष्य को मित्र के रूप में स्वीकार करती है, तो अगले ही क्षण उसी को शत्रु मानकर उससे युद्ध छेड़ देती है।

तुम्हारी इच्छा को चंचल नहीं होना चाहिये, मेरे साथियो। यह जान लो कि पदार्थों और मनुष्यों के साथ तुम्हारे सम्बन्ध इस बात से तय होते हैं कि तुम उनसे क्या चाहते हो और वे तुमसे क्या चाहते हैं। और जो तुम उनसे चाहते हो, उसी से यह निर्धारित होता है कि वे तुमसे क्या चाहते हैं।

इसीलिये मैंने पहले भी तुमसे कहा था, और अब भी कहता हूँ: ध्यान रखो कि तुम कैसे साँस लेते हो, कैसे बोलते हो, क्या चाहते हो, क्या सोचते, कहते, और करते हो। क्योंकि तुम्हारी इच्छा तुम्हारी हर साँस में, हर चाह में, तुम्हारे हर विचार, वचन और कर्म में छिपी रहती है। और जो तुमसे छिपा है, वह प्रभु-इच्छा के लिये सदा प्रकट है।

किसी मनुष्य से ऐसे सुख की इच्छा न रखो जो उसके लिये दुःख हो; कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारा सुख तुम्हें उस दुःख से अधिक पीड़ा दे।

न ही किसी से ऐसे हित की कामना करो जो उसके लिये अहित हो; कहीं ऐसा न हो कि तुम अपने ही लिये अहित की कामना कर रहे होओ।

बल्कि सब मनुष्यों और सब पदार्थों से उनके प्रेम की इच्छा करो; क्योंकि उसी के द्वारा तुम्हारे पर्दे उठेंगे, तुम्हारे हृदय में ज्ञान प्रकट होगा जो तुम्हारी इच्छा को प्रभु-इच्छा के अद्भुत रहस्यों से परिचित करा देगा।

जब तक तुम्हें सब पदार्थों का बोध नहीं हो जाता, तब तक तुम्हें न अपने अन्दर उनकी इच्छा का बोध हो सकता है और न उनके अन्दर अपनी इच्छा का।

जब तक तुम्हें सभी पदार्थों में अपनी इच्छा तथा अपने अन्दर उनकी इच्छा का बोध नहीं हो जाता, तब तक तुम प्रभु-इच्छा के रहस्यों को नहीं जान सकते।

और जब तक तुम प्रभु-इच्छा के रहस्यों को जान न लो, तुम्हें अपनी इच्छा को उसके विरोध में खड़ा नहीं करना चाहिये; क्योंकि पराजय निःसन्देह तुम्हारी होगी। हर टकराव में तुम्हारा शरीर घायल होगा और तुम्हारा हृदय कटुता से भर जायेगा। तब तुम बदला लेने का प्रयास करोगे, और परिणाम यह होगा कि तुम्हारे घावों में नये घाव जुड़ जायेंगे और तुम्हारी कटुता का प्याला भरकर छलकने लगेगा।

मैं तुमसे कहता हूँ, यदि तुम हार को जीत में बदलना चाहते हो तो प्रभु-इच्छा को स्वीकार करो। बिना किसी आपत्ति के स्वीकार करो उन सब पदार्थों को जो उसके रहस्यपूर्ण थैले में से तुम्हारे लिये निकलें; कृतज्ञता तथा इस विश्वास के साथ स्वीकार करो कि प्रभु-इच्छा में वे तुम्हारा उचित तथा नियत हिस्सा हैं। उनका मूल्य और अर्थ समझने की दृढ़ भावना से उन्हें स्वीकार करो।

और जब एक बार तुम अपनी इच्छा की गुप्त कार्य-प्रणाली को समझ लोगे, तो तुम प्रभु इच्छा को समझ लोगे।

जिस बात को तुम नहीं जानते उसे स्वीकार करो ताकि उसे जानने में वह तुम्हारी सहायता करे। उसके प्रति रोष प्रकट करोगे तो वह एक अनबूझ पहेली बनी रहेगी।

अपनी इच्छा को तब तक प्रभु-इच्छा की दासी बनी रहने दो जब तक दिव्य ज्ञान प्रभु-इच्छा को तुम्हारी इच्छा की दासी न बना दे।

यही शिक्षा थी मेरी नूह को।

यही शिक्षा है मेरी तुम्हें।

मीरदाद ज़मोरा को उसके रहस्य  
के भार से मुक्त करता है और  
पुरुष तथा स्त्री की,  
विवाह की, ब्रह्मचर्य की तथा  
आत्म-विजेता की बात करता है

**मीरदाद:** नरौंदा, मेरी विश्वसनीय स्मृति! क्या कहते हैं तुमसे ये कुमुदिनी के फूल?

**नरौंदा:** ऐसा कुछ नहीं जो मुझे सुनाई देता हो, मेरे मुर्शिद।

**मीरदाद:** मैं इन्हें कहते सुनता हूँ, “हम नरौंदा से प्यार करते हैं, और अपने प्यार के प्रतीक-स्वरूप अपनी सुगन्धित आत्मा उसे प्रसन्नतापूर्वक भेंट करते हैं।” नरौंदा, मेरे स्थिर हृदय! क्या कहता है तुमसे इस सरोवर का पानी?

**नरौंदा:** ऐसा कुछ नहीं जो मुझे सुनाई देता हो, मेरे मुर्शिद।

**मीरदाद:** मैं इसे कहते सुनता हूँ, “मैं नरौंदा से प्यार करता हूँ, इसलिये मैं उसकी प्यास बुझाता हूँ, और उसके प्यारे कुमुदिनी के फूलों की प्यास भी।”

नरौंदा, मेरे सदा जाग्रत नेत्र! क्या कहता है तुमसे यह दिन, उन सब चीजों को अपनी झोली में लिये जिन्हें यह धूप में नहाई अपनी बाँहों में इतनी कोमलता से झुलाता है?

**नरौंदा:** ऐसा कुछ नहीं जो मुझे सुनाई देता हो, मेरे मुर्शिद।

**मीरदाद:** मैं इसे कहते सुनता हूँ, “मैं नरौंदा से प्यार करता हूँ, इसलिये मैं अपने प्रिय परिवार के अन्य सदस्यों सहित उसे धूप में नहाई अपनी बाँहों में इतनी कोमलता से झुलाता हूँ।”



जब प्यार करने के लिये और प्यार पाने के लिये इतना कुछ है तो नरौंदा का जीवन क्या इतना भरपूर नहीं कि सारहीन स्वप्न और विचार उसमें अपना घोंसला न बना सकें, अपने अण्डे न से सकें ?

सचमुच, मनुष्य ब्रह्माण्ड का दुलारा है। सब चीजें उससे बहुत लाड़-प्यार करके प्रसन्न होती हैं। किन्तु इने-गिने हैं ऐसे मनुष्य जो इतने अधिक लाड़-प्यार से बिगड़ते नहीं, तथा और भी कम हैं ऐसे मनुष्य जो लाड़-प्यार करनेवाले हाथों को काट नहीं खाते।

जो बिगड़े हुए नहीं हैं उनके लिये सर्प-दंश भी स्नेहमय चुम्बन होता है। किन्तु बिगड़े हुए लोगों के लिये स्नेहमय चुम्बन भी सर्प-दंश होता है। क्या ऐसा नहीं है, ज़मोरा ?

नरौंदा: ये बातें कह रहे थे मुर्शिद एक सुनहरी दोपहर, जब खिली धूप में ज़मोरा और मैं नौका की फुलवाड़ी में कुछ क्यारियों को सींच रहे थे। ज़मोरा, जो पूरा समय काफ़ी खोया-खोया सा, अनमना और उदास था, मुर्शिद का प्रश्न सुनकर मानो होश में आया और चौंक उठा।

ज़मोरा: जिस बात को मुर्शिद सच कहते हैं वह अवश्य सच होगी।

मीरदाद: क्या तुम्हारे सम्बन्ध में यह सच नहीं है, ज़मोरा ? क्या तुम्हें बहुत-से प्रेमपूर्ण चुम्बनों का विष नहीं चढ़ गया है ? क्या तुम्हें अपने विषैले प्रेम की स्मृतियाँ अब दुःखी नहीं कर रही हैं ?

ज़मोरा: (नेत्रों से अश्रु-धारा बहाते हुए मुर्शिद के पैरों में गिरकर) ओह, मुर्शिद ! किसी भेद को हृदय के सबसे गहरे कोने में रखकर भी आपसे छिपाना मेरे लिये, या किसी के लिये, कैसा बचपना है, कैसा व्यर्थ अभिमान है !

मीरदाद: (ज़मोरा को उठाकर हृदय से लगाते हुए) कैसा बचपना है, कैसा व्यर्थ अभिमान है इन कुमुद-पुष्पों से भी उसे छिपाना !

ज़मोरा: मैं जानता हूँ कि मेरा हृदय अभी पवित्र नहीं है, क्योंकि मेरे गत रात्रि के स्वप्न अपवित्र थे।

मेरे मुर्शिद, आज, मैं अपने हृदय का शोधन कर लूँगा। मैं इसे निर्वस्त्र कर दूँगा, आपके सामने, नरौंदा के सामने, और इन कुमुद-पुष्पों तथा इनकी जड़ों में रेंगते केंचुओं के सामने। कुचल डालनेवाले इस रहस्य के बोझ से

मैं अपनी आत्मा को मुक्त कर लूँगा। आज इस मन्द समीर को मेरे इस रहस्य को उड़ाकर संसार के हर प्राणी, हर वस्तु तक ले जाने दो।

अपनी युवावस्था में मैंने एक युवती से प्रेम किया था। प्रभात के तारे से भी अधिक सुन्दर थी वह। मेरी पलकों के लिये नींद जितनी मीठी थी, मेरी जिह्वा के लिये उससे कहीं अधिक मीठा था उसका नाम। जब आपने हमें प्रार्थना और रक्त के प्रवाह के सम्बन्ध में उपदेश दिया था, तब मैं समझता हूँ, आपके शान्तिप्रद शब्दों के रस का पान सबसे पहले मैंने किया था, क्योंकि मेरे रक्त की बागडोर होगला (यही नाम था उस कन्या का) के प्रेम के हाथ में थी, और मैं जानता था कि एक कुशल संचालक पाकर रक्त क्या कुछ कर सकता है।

होगला का प्रेम मेरा था तो अनन्तकाल मेरा था। उसके प्रेम को मैं विवाह की अँगूठी की तरह पहने हुए था। और स्वयं मृत्यु को मैंने कवच मान लिया था। मैं आयु में अपने आपको हर बीते हुए कल से बड़ा और भविष्य में जन्म लेनेवाले अन्तिम कल से छोटा अनुभव करता था। मेरी भुजाओं ने आकाशों को थाम रखा था, मेरे पैर धरती को गति प्रदान करते थे, जब कि मेरे हृदय में थे अनेक चमकते सूर्य।

परन्तु होगला मर गई, और ज़मोरा, आग में जल रहा अमरपक्षी, राख का ढेर होकर रह गया। अब उस बुझे हुए निर्जीव ढेर में से किसी नये अमरपक्षी को प्रकट नहीं होना था। ज़मोरा, जो एक निडर सिंह था, एक सहमा हुआ खरगोश बनकर रह गया। ज़मोरा, जो आकाश का स्तम्भ था, प्रवाह-हीन पोखर में पड़ा एक शोचनीय खण्डहर बनकर रह गया।

जितने भी ज़मोरा को मैं बचा सका उसे लेकर मैं नौका की ओर चला आया, इस आशा के साथ कि मैं अपने आपको नौका की प्रलयकालीन स्मृतियों और परछाइयों में जीवित दफ़ना दूँगा। मेरा सौभाग्य था कि मैं ठीक उस समय यहाँ पहुँचा जब एक साथी ने संसार से कूच किया ही था, और मुझे उसकी जगह स्वीकार कर लिया गया।

पन्द्रह वर्ष तक इस नौका में साथियों ने ज़मोरा को देखा और सुना है, पर ज़मोरा का रहस्य उन्होंने न देखा न सुना। हो सकता है कि नौका

की पुरातन दीवारें और धुँधले गलियारे इस रहस्य से अपरिचित न हों। हो सकता है कि इस उद्यान के पेड़ों, फूलों और पक्षियों को इसका कुछ आभास हो। परन्तु मेरे रबाब के तार निश्चय ही आपको मेरी होगला के बारे में मुझसे अधिक बता सकते हैं, मुर्शिद।

आपके शब्द ज़मोरा की राख को हिलाकर गर्म करने ही लगे थे और मुझे एक नये ज़मोरा के जन्म का विश्वास हो ही रहा था कि होगला ने मेरे सपनों में आकर मेरे रक्त को उबाल दिया, और मुझे उछाल फेंका आज के यथार्थ के उदास चट्टानी शिखरों पर—एक बुझ चुकी मशाल, एक मृत-जात आनन्द, एक बेजान राख का ढेर।

आह, होगला, होगला!

मुझे क्षमा कर दें, मुर्शिद। मैं अपने आँसुओं को रोक नहीं सकता। शरीर क्या शरीर के सिवाय कुछ और हो सकता है? दया करें मेरे शरीर पर। दया करें ज़मोरा पर।

**मीरदाद:** स्वयं दया को दया की ज़रूरत है। मीरदाद के पास दया नहीं है। लेकिन अपार प्रेम है मीरदाद के पास सब चीज़ों के लिये, शरीर के लिये भी; और उससे भी अधिक आत्मा के लिये जो शरीर का स्थूल रूप केवल इसलिये धारण करती है कि उसे अपनी निराकारता से पिघला दे। मीरदाद का प्रेम ज़मोरा को उसकी राख में से उठा लेगा और उसे आत्म-विजेता बना देगा।

आत्म-विजेता बनने का उपदेश देता हूँ मैं—एक ऐसा मनुष्य बनने का जो एक हो चुका हो, जो स्वयं अपना स्वामी हो।

स्त्री के प्रेम द्वारा बन्दी बनाया गया पुरुष और पुरुष के प्रेम द्वारा बन्दी बनाई गई स्त्री, दोनों स्वतन्त्रता के अनमोल मुकुट को पहनने के अयोग्य हैं। परन्तु ऐसे पुरुष और स्त्री पुरस्कार के अधिकारी हैं जिन्हें प्रेम ने एक कर दिया हो, जिन्हें एक-दूसरे से अलग न किया जा सके, जिनकी अपनी अलग-अलग कोई पहचान ही न रही हो।

वह प्रेम प्रेम नहीं जो प्रेमी को अपने अधीन कर लेता है।

वह प्रेम प्रेम नहीं जो रक्त और मांस पर पलता है।



वह प्रेम प्रेम नहीं जो स्त्री को पुरुष की ओर केवल इसलिये आकर्षित करता है कि और स्त्रियाँ तथा पुरुष पैदा किये जायें और इस प्रकार उनके शारीरिक बन्धन स्थायी हो जायें।

आत्म-विजेता बनने का उपदेश देता हूँ मैं—उस अमरपक्षी जैसा मनुष्य बनने का जो इतना स्वतन्त्र है कि पुरुष नहीं हो सकता, और इतना महान् और निर्मल कि स्त्री नहीं हो सकता।

जिस प्रकार जीवन के स्थूल क्षेत्रों में पुरुष और स्त्री एक हैं, उसी प्रकार जीवन के सूक्ष्म क्षेत्रों में वे एक हैं। स्थूल और सूक्ष्म के बीच का अन्तर नित्यता का केवल एक ऐसा खण्ड है जिस पर द्वैत का भ्रम छाया हुआ है। जो न आगे देख पाते हैं न पीछे, वे नित्यता के इस खण्ड को नित्यता ही मान लेते हैं। यह न जानते हुए कि जीवन का नियम एकता है, वे द्वैत के भ्रम से ऐसे चिपके रहते हैं जैसे वही जीवन का सार हो।

द्वैत समय में आनेवाली एक अवस्था है। द्वैत जिस प्रकार एकता से निकलता है, उसी प्रकार यह एकता की ओर ले जाता है। जितनी जल्दी तुम इस अवस्था को पार कर लोगे, उतनी ही जल्दी अपनी स्वतन्त्रता को गले लगा लोगे।

और पुरुष और स्त्री हैं क्या? एक ही मानव जो अपने एक होने से बेखबर है, और जिसे इसलिये दो टुकड़ों में चीर दिया गया है तथा द्वैत का विष पीने के लिये विवश कर दिया गया है कि वह एकता के अमृत के लिये तड़पे; और तड़पते हुए दृढ़ निश्चय के साथ उसकी तलाश करे; और तलाश करते हुए उसे पा ले, तथा उसका स्वामी बन जाये जिसे उसकी परम स्वतन्त्रता का बोध हो।

घोड़े को घोड़ी के लिये हिनहिनाने दो, हिरनी को हिरन को पुकारने दो। स्वयं प्रकृति उन्हें इसके लिये प्रेरित करती है, उनके इस कर्म को आशीर्वाद देती है और उसकी प्रशंसा करती है, क्योंकि सन्तान को जन्म देने से अधिक ऊँची किसी नियति का उन्हें अभी बोध ही नहीं है।

जो पुरुष और स्त्रियाँ अभी तक घोड़े और घोड़ी से तथा हिरन और हिरनी से भिन्न नहीं हैं, उन्हें काम के अँधेरे एकान्त में एक-दूसरे को खोजने दो। उन्हें शयन-कक्ष की वासना में विवाह-बन्धन की छूट का

मिश्रण करने दो। उन्हें अपनी कटि की जननक्षमता तथा अपनी कोख की उर्वरता में प्रसन्न होने दो। उन्हें अपनी नस्ल को बढ़ाने दो। स्वयं प्रकृति उनकी प्रेरिका तथा धाय बनकर खुश है; प्रकृति उनके लिये फूलों की सेज बिछाती है, पर साथ ही उन्हें काँटों की चुभन देने से भी नहीं चूकती।

लेकिन आत्म-विजय के लिये तड़पनेवाले पुरुषों और स्त्रियों को शरीर में रहते हुए भी अपनी एकता का अनुभव अवश्य करना चाहिये; शारीरिक सम्पर्क के द्वारा नहीं, बल्कि शारीरिक सम्पर्क की भूख और उस भूख द्वारा पूर्ण एकता और दिव्य ज्ञान के रास्ते में खड़ी की गई रुकावटों से मुक्ति पाने के संकल्प द्वारा।

तुम प्रायः लोगों को 'मानव-प्रकृति' के बारे में यों बात करते हुए सुनते हो जैसे वह कोई ठोस तत्त्व हो, जिसे अच्छी तरह नापा-तोला गया है, जिसके निश्चित लक्षण हैं, जिसकी पूरी तरह छान-बीन कर ली गई है और जो किसी ऐसी वस्तु द्वारा चारों ओर से प्रतिबन्धित है जिसे लोग 'काम' कहते हैं।

लोग कहते हैं काम के मनोवेग को सन्तुष्ट करना मनुष्य की प्रकृति है; लेकिन उसके प्रचण्ड प्रवाह को नियन्त्रित करके काम पर विजय पाने के साधन के रूप में उसका उपयोग करना निश्चय ही मानव-स्वभाव के विरुद्ध है और दुःख को न्योता देना है। लोगों की इन अर्थहीन बातों की ओर ध्यान मत दो।

बहुत विशाल है मनुष्य और बहुत अनबूझ है उसकी प्रकृति। अत्यन्त विविध हैं उसकी प्रतिभाएँ और अटूट है उसकी शक्ति। सावधान रहो उन लोगों से जो उसकी सीमाएँ निर्धारित करने का प्रयास करते हैं।

काम-वासना निश्चय ही मनुष्य पर एक भारी कर लगाती है। लेकिन यह कर वह कुछ समय तक ही देता है। तुममें से कौन अनन्तकाल के लिये दास बना रहना चाहेगा? कौन-सा दास अपने राजा का जुआ उतार फेंकने और ऋण-मुक्त होने के सपने नहीं देखता?

मनुष्य दास बनने के लिये पैदा नहीं हुआ था, अपने पुरुषत्व का दास भी नहीं। मनुष्य तो सदैव हर प्रकार की दासता से मुक्त होने के लिये तड़पता है; और यह मुक्ति उसे अवश्य मिलेगी।



जो आत्म-विजय प्राप्त करने की तीव्र इच्छा रखता है, उसके लिये खून के रिश्ते क्या हैं? एक बन्धन जिसे दृढ़ संकल्प द्वारा तोड़ना ज़रूरी है।

आत्म-विजेता हर रक्त के साथ अपने रक्त का सम्बन्ध महसूस करता है। इसलिये वह किसी के साथ बँधा नहीं होता।

जो तड़पते नहीं, उन्हें अपनी नस्ल बढ़ाने दो। जो तड़पते हैं, उन्हें एक और नस्ल बढ़ानी है—आत्म-विजेताओं की नस्ल।

आत्म-विजेताओं की नस्ल कमर और कोख से नहीं निकलती। बल्कि उसका उदय होता है संयमी हृदयों से जिनके रक्त की बागडोर विजय पाने के निर्भीक संकल्प के हाथों में होती है।

मैं जानता हूँ कि तुमने तथा संसार में तुम जैसे अन्य अनेक लोगों ने ब्रह्मचर्य का व्रत ले रखा है। किन्तु अभी बहुत दूर हो तुम ब्रह्मचर्य से, जैसा कि ज़मोरा का गत रात्रि का स्वप्न सिद्ध करता है।

ब्रह्मचारी वे नहीं हैं जो मठ की पोशाक पहनकर अपने आपको मोटी दीवारों और विशाल लौह-द्वारों के पीछे बन्द कर लेते हैं। अनेक साधु और साध्वियाँ अति कामुक लोगों से भी अधिक कामुक होते हैं, चाहे उनके शरीर सौगन्ध खाकर कहें, और पूरी सच्चाई के साथ कहें, कि उन्होंने कभी किसी दूसरे के साथ सम्पर्क नहीं किया। ब्रह्मचारी तो वे हैं जिनके हृदय और मन ब्रह्मचारी हैं, चाहे वे मठों में रहते हों चाहे खुले बाज़ारों में।

स्त्री का आदर करो, मेरे साथियो, और उसे पवित्र मानो। मनुष्य-जाति की जननी के रूप में नहीं, पत्नी या प्रेमिका के रूप में नहीं, बल्कि द्वैतपूर्ण जीवन के लम्बे श्रम और दुःख में क़दम-क़दम पर मनुष्य के प्रतिरूप और बराबर के भागीदार के रूप में। क्योंकि उसके बिना पुरुष द्वैत के खण्ड को पार नहीं कर सकता। स्त्री में ही मिलेगी पुरुष को अपनी एकता और पुरुष में ही मिलेगी स्त्री को द्वैत से अपनी मुक्ति। समय आने पर ये दो मिलकर एक हो जायेंगे—यहाँ तक कि आत्म-विजेता बन जायेंगे जो न नर है न नारी, जो है पूर्ण मानव।

आत्म-विजेता बनने का उपदेश देता हूँ मैं—ऐसा मनुष्य बनने का जो एकता प्राप्त कर चुका हो, जो स्वयं अपना स्वामी हो। और इससे पहले



कि मीरदाद तुम्हारे बीच में से अपने आपको उठा ले, तुममें से प्रत्येक आत्म-विजेता बन जायेगा।

**ज़मोरा:** आपके मुख से हमें छोड़ जाने की बात सुनकर मेरा हृदय दुःखी होता है। यदि वह दिन कभी आ गया जब हम आपको ढूँढ़ें और आप न मिलें, तो ज़मोरा निश्चय ही अपने जीवन का अन्त कर देगा।

**मीरदाद:** अपनी इच्छा-शक्ति से तुम बहुत-कुछ कर सकते हो, ज़मोरा—सबकुछ कर सकते हो। पर एक काम नहीं कर सकते और वह है अपनी इच्छा-शक्ति का अन्त कर देना, जो जीवन की इच्छा है, जो प्रभु-इच्छा है। क्योंकि जीवन, जो अस्तित्व है, अपनी इच्छा शक्ति से अस्तित्व-हीन नहीं हो सकता; न ही अस्तित्व-हीन की कोई इच्छा हो सकती है। नहीं, परमात्मा भी ज़मोरा का अन्त नहीं कर सकता।

जहाँ तक मेरा तुमको छोड़ जाने का प्रश्न है, वह दिन अवश्य आयेगा जब तुम मुझे देह-रूप में ढूँढ़ोगे और मैं नहीं मिलूँगा, क्योंकि इस धरती के अतिरिक्त कहीं और भी मेरे लिये काम है। पर मैं कहीं भी अपने काम को अधूरा नहीं छोड़ता। इसलिये खुश रहो। मीरदाद तब तक तुमसे विदा नहीं लेगा जब तक वह तुम्हें आत्म-विजेता नहीं बना देता—ऐसे मानव जो एकता प्राप्त कर चुके हों, जो पूर्णतया अपने स्वामी बन गये हों।

जब तुम अपने स्वामी बन जाओगे और एकता प्राप्त कर लोगे, तब तुम अपने हृदय में मीरदाद को निवास करता पाओगे, और उसका नाम तुम्हारी स्मृति में कभी धूमिल नहीं होगा।

यही शिक्षा थी मेरी नूह को।

यही शिक्षा है मेरी तुम्हें।

## मीरदाद सिम-सिम को स्वस्थ करता है और बुढ़ापे के बारे में चर्चा करता है

नरौंदा: नौका की पशुशालाओं की सबसे बूढ़ी गाय सिम-सिम पाँच दिन से बीमार थी और चारे या पानी को मुँह नहीं लगा रही थी। इस पर शमदाम ने क़साई को बुलवाया। उसका कहना था कि गाय को मार कर उसके मांस और ख़ाल की बिक्री से लाभ उठाना अधिक समझदारी है, बनिस्बत इसके कि गाय को मरने दिया जाये और वह किसी काम न आये।

जब मुर्शिद ने यह सुना तो गहरे सोच में डूब गये, और तेज़ी से सीधे पशुशाला की ओर चल पड़े तथा सिम-सिम के थान पर जा पहुँचे। उनके पीछे-पीछे सातों साथी भी वहाँ पहुँच गये।

सिम-सिम उदास और हिलने-डुलने में असमर्थ-सी थी। उसका सिर नीचे लटका हुआ था, आँखें अधमुँदी थीं, शरीर के बाल सख़्त और कान्ति-हीन थे। किसी ढीठ मक्खी को उड़ाने के लिये वह कभी-कभी अपने कान को थोड़ा-सा हिला देती है। उसका विशाल दुग्ध-कोष उसकी टाँगों के बीच ढीला और ख़ाली लटक रहा था, क्योंकि वह अपने लम्बे तथा फलपूर्ण जीवन के अन्तिम भाग में मातृत्व की मधुर वेदना से वंचित हो गई थी। उसके कूल्हों की हड्डियाँ उदास और असहाय, कब्र के दो पत्थरों की तरह बाहर निकली हुई थीं। उसकी पसलियाँ और रीढ़ की हड्डियाँ आसानी से गिनी जा सकती थीं। उसकी लम्बी और पतली पूँछ सिरे पर बालों का भारी गुच्छा लिये अकड़ी हुई सीधी लटक रही थी।

मुर्शिद बीमार पशु के निकट गये और उसे आँखों तथा सींगों के बीच और ठोड़ी के नीचे सहलाने लगे। कभी-कभी वे उसकी पीठ और पेट

पर हाथ फेरते। पूरा समय वे उससे इस प्रकार बातें करते रहे जैसे किसी मनुष्य के साथ कर रहे हों:

**मीरदाद:** तुम्हारी जुगाली कहाँ है, मेरी उदार सिम-सिम? इतना दिया है सिम-सिम ने कि अपने लिये थोड़ा-सा जुगाल रखना भी भूल गई। अभी और बहुत देना है सिम-सिम को। उसका बर्फ-सा सफेद दूध आज तक हमारी रगों में गहरा लाल रंग लिये दौड़ रहा है। उसके पुष्ट बछड़े हमारे खेतों में भारी हल खींच रहे हैं और अनेक भूखे जीवों को भोजन देने में हमारी सहायता कर रहे हैं। उसकी सुन्दर बछियाँ अपने बच्चों से हमारी चरागाहों को भर रही हैं। उसका गोबर भी हमारे बाग की रस-भरी सब्जियों और फलोद्यान के स्वादिष्ट फलों में हमारे भोजन की बरकत बना हुआ है।

हमारी घाटियाँ नेक सिम-सिम के खुलकर रँभाने की ध्वनि और प्रतिध्वनि से अभी तक गूँज रही हैं। हमारे झरने उसके सौम्य तथा सुन्दर मुख को अभी तक प्रतिबिम्बित कर रहे हैं। हमारी धरती की मिट्टी उसके खुरों की अमिट छाप को अभी तक छाती से लगाये हुए है और सावधानी के साथ उसकी सँभाल कर रही है।

बहुत प्रसन्न होती है हमारी घास सिम-सिम का भोजन बनकर। बहुत सन्तुष्ट होती है हमारी धूप उसे सहला कर। बहुत आनन्दित होता है हमारा मन्द समीर उसके कोमल और चमकीले रोम-रोम को छूकर। बहुत आभार महसूस करता है मीरदाद उसे वृद्धावस्था के रेगिस्तान को पार करवाते हुए, उसे अन्य सूर्यों तथा समीरों के देश में नयी चरागाहों का मार्ग दिखाते हुए।

बहुत दिया है सिम-सिम ने, और बहुत लिया है; लेकिन सिम-सिम को अभी और भी देना और लेना है।

**मिकास्तर:** क्या सिम-सिम आपके शब्दों को समझ सकती है जो आप उससे ऐसे बातें कर रहे हैं मानो वह मनुष्य की-सी बुद्धि रखती हो?

**मीरदाद:** महत्त्व शब्द का नहीं होता, भले मिकास्तर। महत्त्व उस भावना का होता है जो शब्द के अन्दर गूँजती है; और पशु भी उससे प्रभावित होते हैं। और फिर, मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि बेचारी सिम-सिम की आँखों में से एक स्त्री मेरी ओर देख रही है।



**मिकास्तर:** बूढ़ी और दुर्बल सिम-सिम के साथ इस प्रकार बातें करने का क्या लाभ? क्या आप आशा करते हैं कि इस प्रकार आप बुढ़ापे के प्रकोप को रोककर सिम-सिम की आयु लम्बी कर देंगे?

**मीरदाद:** एक दर्दनाक बोझ है बुढ़ापा मनुष्य के लिये, और पशु के लिये भी। मनुष्यों ने अपनी उपेक्षापूर्ण निर्दयता से इसे और भी दर्दनाक बना दिया है। एक नवजात शिशु पर वे अपना अधिक से अधिक ध्यान और प्यार लुटाते हैं। परन्तु बुढ़ापे के बोझ से दबे मनुष्य के लिये वे अपने ध्यान से अधिक अपनी उदासीनता, और अपनी सहानुभूति से अधिक अपनी उपेक्षा बचाकर रखते हैं। जितने अधीर वे किसी दूधमुँहे बच्चे को जवान होता देखने के लिये होते हैं, उतने ही अधीर होते हैं वे किसी वृद्ध मनुष्य को क़ब्र का ग्रास बनता देखने के लिये।

बच्चे और बूढ़े दोनों ही समान रूप से असहाय होते हैं। किन्तु बच्चों की बेबसी बरबस सबकी प्रेम और त्याग से पूर्ण सहायता प्राप्त कर लेती है; जब कि बूढ़ों की बेबसी किसी-किसी की ही अनिच्छापूर्वक दी गई सहायता को पाने में सफल होती है। वास्तव में बच्चों की तुलना में बूढ़े सहानुभूति के अधिक अधिकारी होते हैं।

जब शब्दों को उस कान में प्रवेश पाने के लिये जो कभी हलकी से हलकी फुसफुसाहट के प्रति भी संवेदनशील और सजग था, देर तक और जोर से खटखटाना पड़ता है;

जब आँखें, जो कभी निर्मल थीं, विचित्र धब्बों और छायाओं के लिये नृत्य-मंच बन जाती हैं;

जब पैर, जिनमें कभी पंख लगे थे, सीसे के ढेले बन जाते हैं, और हाथ, जो जीवन को साँचे में ढालते थे, टूटे साँचों में बदल जाते हैं;

जब घुटनों के जोड़ ढीले हो जाते हैं, और सिर गर्दन पर रखी एक कठपुतली बन जाता है;

जब चक्की के पाट घिस जाते हैं, और स्वयं चक्की-घर सुनसान गुफा हो जाता है;

जब उठने का अर्थ होता है गिर जाने के भय से पसीने-पसीने होना, और बैठने का अर्थ होता है इस दुःखदायी सन्देह के साथ बैठना कि शायद फिर कभी उठा ही न जा सके;

जब खाने-पीने का अर्थ होता है खाने-पीने के परिणाम से डरना, और न खाने-पीने का अर्थ होता है घृणित मृत्यु का दबे-पाँव चले आना;

हाँ, जब बुढ़ापा मनुष्य को दबोच लेता है, तब समय होता है, मेरे साथियो, उसे कान और नेत्र प्रदान करने का, उसे हाथ और पैर देने का, उसकी क्षीण हो रही शक्ति को अपने प्यार के द्वारा पुष्ट करने का, ताकि उसे महसूस हो कि अपने खिलते बचपन और यौवन में वह जीवन को जितना प्यारा था, इस ढलती आयु में उससे रत्ती भर भी कम प्यारा नहीं है।

अस्सी वर्ष अनन्तकाल में चाहे एक पल से अधिक न हों; किन्तु वह मनुष्य जिसने अस्सी वर्षों तक अपने आपको बोया हो, एक पल से कहीं अधिक होता है। वह अनाज होता है उन सबके लिये जो उसके जीवन की फ़सल काटते हैं। और वह कौन-सा जीवन है जिसकी फ़सल सब नहीं काटते?

क्या तुम इस क्षण भी उस प्रत्येक स्त्री और पुरुष के जीवन की फ़सल नहीं काट रहे हो जो कभी इस धरती पर चले थे? तुम्हारी बोली उनकी बोली की फ़सल के सिवाय और क्या है? तुम्हारे विचार उनके विचारों के बीने गये दानों के सिवाय और क्या हैं? तुम्हारे वस्त्र और मकान तक, तुम्हारा भोजन, तुम्हारे उपकरण, तुम्हारे क़ानून, तुम्हारी परम्पराएँ और परिपाटियाँ—ये क्या उन्हीं लोगों के वस्त्र, मकान, भोजन, उपकरण, क़ानून, परम्पराएँ और परिपाटियाँ नहीं हैं जो तुमसे पहले यहाँ आ चुके हैं और यहाँ से जा चुके हैं?

एक समय में तुम एक ही चीज़ की फ़सल नहीं काटते हो, बल्कि सब चीज़ों की फ़सल काटते हो, और हर समय काटते हो। तुम ही बोनेवाले हो, फ़सल हो, लुनेरे हो, खेत हो, और हो खलिहान भी। यदि तुम्हारी फ़सल ख़राब है तो उस बीज की ओर देखो जो तुमने दूसरों के

अन्दर बोया है, और उस बीज की ओर भी जो तुमने उन्हें तुम्हारे अन्दर बोने दिया है। लुनेरे और उसकी दराँती की ओर भी देखो, और देखो खेत और खलिहान की ओर भी।

एक वृद्ध मनुष्य, जिसके जीवन की फ़सल तुमने काटकर अपने कोठारों में भर ली है, निश्चय ही तुम्हारी अधिकतम देख-रेख का अधिकारी है। यदि तुम उसके उन बरसों में जो अभी काटने के लिये बची वस्तुओं से भरपूर हैं अपनी उदासीनता से कड़वाहट घोल दोगे, तो जो कुछ तुमने उससे बटोर कर सँभाल लिया है, और जो कुछ तुम्हें अभी बटोरना है, वह सब निश्चय ही तुम्हारे मुँह को कड़वाहट से भर देगा। अपनी शक्ति खो रहे पशु की उपेक्षा करके भी तुम्हें ऐसी ही कड़वाहट का अनुभव होगा।

यह उचित नहीं कि फ़सल से लाभ उठा लिया जाये, और फिर बीज बोनेवाले को और खेत को कोसा जाये।

हर जाति तथा देश के लोगों के प्रति दयावान बनो, मेरे साथियो। वे प्रभु की ओर तुम्हारी यात्रा में तुम्हारा पाथेय हैं। परन्तु मनुष्य के बुढ़ापे में उसके प्रति विशेष रूप से दयावान् बनो; कहीं ऐसा न हो कि निर्दयता के कारण तुम्हारा पाथेय खराब हो जाये और तुम अपनी मंज़िल पर कभी पहुँच ही न सको।

हर प्रकार के और हर उम्र के पशुओं के प्रति दयावान बनो; यात्रा की लम्बी और कठिन तैयारियों में वे तुम्हारे गूँगे किन्तु बहुत वफ़ादार सहायक हैं। परन्तु पशुओं के बुढ़ापे में उनके प्रति विशेष रूप से दयावान रहो; ऐसा न हो कि तुम्हारे हृदय की कठोरता के कारण उनकी वफ़ादारी बेवफ़ाई में बदल जाये और उनसे मिलनेवाली सहायता बाधा बन जाये।

सिम-सिम के दूध पर पलना और जब उसके पास देने को और न रहे तो उसकी गर्दन पर क़साई की छुरी रख देना चरम कृतघ्नता है।

नरौंदा: मुर्शिद यह बात अभी पूरी कर ही पाये थे कि शमदाम क़साई को साथ लेकर अन्दर चला आया। क़साई सीधा सिम-सिम के पास गया। उसने अभी गाय को देखा ही था कि हमने उसे हर्षपूर्ण उपहास के ऊँचे स्वर में कहते सुना, “तुम कैसे कहते हो कि यह गाय बीमार है और मर



रही है? यह मुझसे अधिक स्वस्थ है, सिवाय इसके कि इसे भूखा रखा गया है—बेचारा पशु—और मैं भूखा नहीं हूँ। इसे खाने को दो।”

और सचमुच हमें बहुत आश्चर्य हुआ जब हमने सिम-सिम की ओर देखा और उसे जुगाली करते पाया। और तो और, शमदाम का हृदय भी पिघल गया, और उसने सिम-सिम के लिये गौओं का बढ़िया से बढ़िया स्वादिष्ट चारा लाने का आदेश दिया। और बड़े स्वाद से खाया सिम-सिम ने।

## खाने के लिये मारना क्या उचित है ?

जब शमदाम और क़साई चले गए तो मिकेयन ने मुर्शिद से पूछा:

मिकेयन: खाने के लिये मारना क्या उचित नहीं है मुर्शिद ?

मीरदाद: मृत्यु से पेट भरना मृत्यु का आहार बनना है। दूसरों की पीड़ा पर जीना पीड़ा का शिकार होना है। यही आदेश है प्रभु-इच्छा का। यह समझ लो और फिर अपना मार्ग चुनो, मिकेयन।

मिकेयन: यदि मैं चुन सकता तो अमर पक्षी की तरह वस्तुओं की सुगन्ध पर जीना पसन्द करता, उसके मांस पर नहीं।

मीरदाद: तुम्हारी पसन्द सचमुच उत्तम है। विश्वास करो, मिकेयन, वह दिन आ रहा है जब मनुष्य वस्तुओं की सुगन्ध पर जियेंगे जो उनकी आत्मा है, उनके रक्त-मांस पर नहीं। और तड़पनेवालों के लिये वह दिन दूर नहीं।

क्योंकि तड़पनेवाले जानते हैं कि देह का जीवन और कुछ नहीं, देह-रहित जीवन तक पहुँचानेवाला पुल-मात्र है।

और तड़पनेवाले जानते हैं कि स्थूल और अक्षम इन्द्रियाँ अत्यन्त सूक्ष्म तथा पूर्ण ज्ञान के संसार के अन्दर झाँकने के लिये झरोखे-मात्र हैं।

और तड़पनेवाले जानते हैं कि जिस भी मांस को वे काटते हैं, उसे देर-सवेर, अनिवार्य रूप से, उन्हें अपने ही मांस से जोड़ना पड़ेगा; और जिस भी हड्डी को वे कुचलते हैं, उसे उन्हें अपनी ही हड्डी से फिर बनाना पड़ेगा; और रक्त की जो भी बूँद वे गिराते हैं, उसकी पूर्ति उन्हें अपने ही रक्त से करनी पड़ेगी। क्योंकि शरीर का यही नियम है।

पर तड़पनेवाले इस नियम की दासता से मुक्त होना चाहते हैं। इसलिये वे अपनी शारीरिक आवश्यकताओं को कम से कम कर लेते हैं और इस

प्रकार कम कर लेते हैं शरीर के प्रति अपने ऋण को जो वास्तव में पीड़ा और मृत्यु के प्रति ऋण है।

तड़पनेवाले पर रोक केवल उसकी अपनी इच्छा और तड़प की होती है, जब कि न तड़पनेवाला दूसरों के द्वारा रोके जाने की प्रतीक्षा करता है। अनेक वस्तुओं को, जिन्हें न तड़पनेवाला उचित समझता है, तड़पनेवाला अपने लिए अनुचित मानता है।

न तड़पनेवाला अपने पेट या जेब में डालकर रखने के लिये अधिक से अधिक चीजें हथियाने का प्रयत्न करता है, जब कि तड़पनेवाला जब अपने मार्ग पर चलता है तो न उसकी कोई जेब होती है और न ही उसके पेट में किसी जीव के रक्त और पीड़ा-भरी ऐंठनों की गन्दगी।

न तड़पनेवाला जो खुशी किसी पदार्थ को बड़ी मात्रा में पाने से प्राप्त करता है—या समझता है कि वह प्राप्त करता है—तड़पनेवाला उसे आत्मा के हलकेपन और दिव्य ज्ञान की मधुरता में प्राप्त करता है।

एक हरे-भरे खेत को देख रहे दो व्यक्तियों में से एक उसकी उपज का अनुमान मन और सेर में लगाता है और उसका मूल्य सोने-चाँदी में आँकता है। दूसरा अपने नेत्रों से खेत की हरियाली का आनन्द लेता है, अपने विचारों से हर पत्ती को चूमता है, और अपनी आत्मा में हर छोटी से छोटी जड़, हर कंकड़ और मिट्टी के हर ढेले के प्रति भ्रातृभाव स्थापित कर लेता है।

मैं तुमसे कहता हूँ, दूसरा व्यक्ति उस खेत का असली मालिक है, भले ही कानून की दृष्टि से पहला व्यक्ति उसका मालिक हो।

एक मकान में बैठे दो व्यक्तियों में से एक उसका मालिक है, दूसरा केवल एक अतिथि। मालिक निर्माण तथा देख-रेख के खर्च की, और पर्दों, गलीचों तथा अन्य साज-सामग्री के मूल्य की विस्तार के साथ चर्चा करता है। जब कि अतिथि मन ही मन नमन करता है उन हाथों को जिन्होंने खोदकर खदान में से पत्थरों को निकाला, उनको तराशा और उनसे निर्माण किया; उन हाथों को जिन्होंने गलीचों तथा पर्दों को बुना; और उन हाथों को जिन्होंने जंगलों में जाकर उन्हें खिड़कियों और दरवाजों का, कुर्सियों



और मेजों का रूप दे दिया। इन वस्तुओं को अस्तित्व में लानेवाले निर्माण-कर्ता हाथ की प्रशंसा करने में उसकी आत्मा का उत्थान होता है।

मैं तुमसे कहता हूँ, वह अतिथि उस घर का स्थायी निवासी है; जब कि वह जिसके नाम वह मकान है केवल एक भारवाहक पशु है जो मकान को पीठ पर ढोता है, उसमें रहता नहीं।

दो व्यक्तियों में से, जो किसी बछड़े के साथ उसकी माँ के दूध के सहभागी हैं, एक बछड़े को इस भावना के साथ देखता है कि बछड़े का कोमल शरीर उसके आगामी जन्म-दिवस पर उसके तथा उसके मित्रों की दावत के लिये उन्हें बढ़िया मांस प्रदान करेगा। दूसरा बछड़े को अपना धाय-जाया भाई समझता है और उसके हृदय में उस नन्हें पशु तथा उसकी माँ के प्रति स्नेह उमड़ता है।

मैं तुमसे कहता हूँ, उस बछड़े के मांस से दूसरे व्यक्ति का सचमुच पोषण होता है; जब कि पहले के लिये वह विष बन जाता है।

हाँ, बहुत-सी ऐसी चीजें पेट में डाल ली जाती हैं जिन्हें हृदय में रखना चाहिये।

बहुत-सी ऐसी चीजें जेब और कोठारों में बन्द कर दी जाती हैं जिनका आनन्द आँख और नाक के द्वारा लेना चाहिये।

बहुत-सी ऐसी चीजें दाँतों द्वारा चबाई जाती हैं जिनका स्वाद बुद्धि द्वारा लेना चाहिये।

जीवित रहने के लिये शरीर की आवश्यकता बहुत कम है। तुम उसे जितना कम दोगे, बदले में वह तुम्हें उतना ही अधिक देगा; जितना अधिक दोगे, बदले में वह उतना ही कम देगा।

वास्तव में तुम्हारे कोठार और पेट से बाहर रहकर चीजें तुम्हारा उससे अधिक पोषण करती हैं जितना कोठार और पेट के अन्दर जाकर करती हैं।

परन्तु अभी तुम वस्तुओं की केवल सुगन्ध पर जीवित नहीं रह सकते, इसलिये धरती के उदार हृदय से अपनी जरूरत के अनुसार निःसंकोच लो, लेकिन जरूरत से ज्यादा नहीं। धरती इतनी उदार और स्नेहपूर्ण है कि उसका दिल अपने बच्चों के लिये सदा खुला रहता है।

धरती इससे भिन्न हो भी कैसे सकती है? और अपने पोषण के लिये अपने आपसे बाहर जा भी कहाँ सकती है? धरती का पोषण धरती को ही करना है, और धरती कोई कंजूस गृहिणी नहीं, उसका भोजन तो सदा परोसा रहता है और सबके लिये पर्याप्त होता है।

जिस प्रकार धरती तुम्हें भोजन पर आमन्त्रित करती है और कोई भी चीज़ तुम्हारी पहुँच से बाहर नहीं रखती, ठीक उसी प्रकार तुम भी धरती को भोजन पर आमन्त्रित करो और अत्यन्त प्यार के साथ तथा सच्चे दिल से उससे कहो:

“मेरी अनुपम माँ! जिस प्रकार तूने अपना हृदय मेरे सामने फैला रखा है ताकि जो कुछ मुझे चाहिये ले लूँ, उसी प्रकार मेरा हृदय तेरे सम्मुख प्रस्तुत है ताकि जो कुछ तुझे चाहिये ले ले।”

यदि धरती के हृदय से आहार प्राप्त करते हुए तुम्हें ऐसी भावना प्रेरित करती है, तो इस बात का कोई महत्त्व नहीं कि तुम क्या खाते हो।

परन्तु यदि वास्तव में यह भावना तुम्हें प्रेरित करती है तो तुम्हारे अन्दर इतना विवेक और प्रेम होना चाहिये कि तुम धरती से उसके किसी बच्चे को न छीनो, विशेष रूप से उन बच्चों में से किसी को जो जीने के आनन्द और मरने की पीड़ा का अनुभव करते हैं—जो द्वैत के खण्ड में पहुँच चुके हैं; क्योंकि उन्हें भी, धीरे-धीरे और परिश्रम के साथ, एकता की ओर जानेवाले मार्ग पर चलना है। और उनका मार्ग तुम्हारे मार्ग से अधिक लम्बा है। यदि तुम उनकी गति में बाधक होते हो तो वे भी तुम्हारी गति में बाधक होंगे।

**अबिमार:** जब मृत्यु सब जीवों की नियति है, चाहे वह एक कारण से हो या किसी दूसरे से, तो किसी पशु की मृत्यु का कारण बनने में मुझे कोई नैतिक संकोच क्यों हो?

**मीरदाद:** यह सच है कि जब जीवों का मरना निश्चित है, फिर भी धिक्कार है उसे जो किसी भी जीव की मृत्यु का कारण बनता है।

जिस प्रकार यह जानते हुए कि मैं नरौंदा से बहुत प्यार करता हूँ और मेरे मन में कोई रक्त-पिपासा नहीं है, तुम मुझे उसे मारने का काम नहीं

सौंपोगे, उसी प्रकार प्रभु-इच्छा किसी मनुष्य को किसी दूसरे मनुष्य या पशु को मारने का काम नहीं सौंपती, जब तक कि वह उस मौत के लिये साधन के रूप में उसका उपयोग करना आवश्यक न समझती हो।

जब तक मनुष्य वैसे रहेंगे जैसे वे हैं, तब तक रहेंगे उनके बीच चोरियाँ और डाके, झूठ, युद्ध और हत्याएँ, तथा इस प्रकार के दूषित और पापपूर्ण मनोवेग।

लेकिन धिक्कार है चोर को और डाकू को, धिक्कार है झूठे को और युद्ध-प्रेमी को, तथा हत्यारे को और हर ऐसे मनुष्य को जो अपने हृदय में दूषित तथा पापपूर्ण मनोवेगों को आश्रय देता है, क्योंकि अनिष्टपूर्ण होने के कारण इन लोगों का उपयोग प्रभु-इच्छा अनिष्ट के सन्देश-वाहकों के रूप में करती है।

परन्तु तुम, मेरे साथियो, अपने हृदय को हर दूषित और पापपूर्ण आवेग से अवश्य मुक्त करो ताकि प्रभु-इच्छा तुम्हें दुःखी संसार में सुखद सन्देश पहुँचाने का अधिकारी समझे—दुःख से मुक्ति का सन्देश, आत्म-विजय का सन्देश, प्रेम और ज्ञान द्वारा मिलनेवाली स्वतन्त्रता का सन्देश।

यही शिक्षा थी मेरी नूह को।

यही शिक्षा है मेरी तुम्हें।



## अंगूर-बेल का दिवस और उसकी तैयारी उससे एक दिन पहले मीरदाद लापता पाया जाता है

नरौंदा: अंगूर-बेल का दिवस निकट आ रहा था और हम नौका के निवासी, जिनमें मुर्शिद भी शामिल थे, बाहर से आये स्वयंसेवी सहायकों की टुकड़ियों के साथ दिन-रात बड़े प्रीतिभोज की तैयारियों में जुटे थे। मुर्शिद अपनी सम्पूर्ण शक्ति से और इतने अधिक उत्साह के साथ काम कर रहे थे कि शमदाम तक ने स्पष्ट रूप से सन्तोष प्रकट करते हुए इस पर टिप्पणी की।

नौका के बड़े-बड़े तहखानों को बुहारना था और उनकी पुताई करनी थी, और शराब के बीसियों बड़े-बड़े मर्तबानों और मटकों को साफ़ करके यथास्थान रखना था ताकि उनमें नई शराब भरी जा सके। उतने ही और मर्तबानों और मटकों को, जिनमें पिछले साल के अंगूरों की फ़सल से बनी शराब रखी थी, सजाकर प्रदर्शित करना था ताकि ग्राहक शराब को आसानी से चख और परख सकें, क्योंकि हर अंगूर-बेल के दिवस पर गत वर्ष की शराब बेचने की प्रथा है।

सप्ताह-भर के आनन्दोत्सव के लिये नौका के खुले आँगनों को भली प्रकार सजाना-सँवारना था; आनेवाले यात्रियों के रहने के लिये सैकड़ों तम्बू लगाने थे और व्यापारियों के सामान के प्रदर्शन के लिये अस्थायी दुकानें बनानी थीं।

अंगूर पेरने के विशाल कोल्हू को ठीक करके तैयार करना था ताकि अंगूरों के वे असंख्य ढेर उसमें डाले जा सकें जिन्हें नौका के बहुत से

काश्तकार तथा हितैषी गधों, टट्टुओं और ऊँटों की पीठ पर लादकर लानेवाले थे। जिनकी रसद कम पड़ जाये, या जो बिना रसद लिये आयें, उनको बेचने के लिये बहुत बड़ी मात्रा में रोटियाँ पकानी थीं और अन्य खाद्य-सामग्री तैयार करनी थी।

अंगूर-बेल का दिवस शुरू-शुरू में आभार-प्रदर्शन का दिन था। परन्तु शमदाम की असाधारण व्यापारिक सूझ-बूझ ने इसे एक सप्ताह तक खींचकर एक प्रकार के मेले का रूप दे दिया जिसमें निकट और दूर से हर व्यवसाय के स्त्री-पुरुष प्रतिवर्ष बढ़ती हुई संख्या में एकत्र होने लगे। राजा और रंक, कृषक और कारीगर, लाभ के इच्छुक, आमोद-प्रमोद तथा अन्य ध्येयों की पूर्ति के चाहवान; शराबी और पूरे परहेज़गार; धर्मात्मा यात्री और अधर्मी आवारागर्द; मन्दिर के भक्त और मधुशाला के दीवाने, और इन सबके साथ लद्दू जानवरों के झुण्ड—ऐसी होती है यह रंग-बिरंगी भीड़ जो पूजा-शिखर के शान्त वातावरण पर धावा बोलती है साल में दो बार, पतझड़ में अंगूर-बेल के दिवस पर और बसन्त में नौका-दिवस पर।

इन दोनों अवसरों में से एक पर भी कोई यात्री नौका में खाली हाथ नहीं आता; सब किसी न किसी प्रकार का उपहार साथ लाते हैं जो अंगूर के गुच्छे या चीड़ के फल से लेकर मोतियों की लड़ियों या हीरे के हारों तक कुछ भी हो सकता है। और सब व्यापारियों से उनकी बिक्री का दस प्रतिशत कर के रूप में लिया जाता है।

यह प्रथा है कि आनन्दोत्सव के पहले दिन अंगूर के गुच्छों से सजाये लता-मण्डप के नीचे एक ऊँचे मंच पर बैठकर मुखिया भीड़ का स्वागत करता है और आशीर्वाद देता है, और उनके उपहार स्वीकार करता है। इसके बाद वह उनके साथ नई अंगूरी शराब का पहला जाम पीता है। वह अपने लिए एक बड़ी, लम्बी खोखली तुम्बी में से प्याले में शराब उड़ेलता है, और फिर एकत्रित जन-समूह में घुमाने के लिये वह तुम्बी किसी भी एक साथी को थमा देता है। तुम्बी जब-जब खाली होती है, उसे फिर से भर दिया जाता है। और जब सब अपने प्याले भर लेते हैं तो मुखिया सबको प्याले ऊँचे उठाकर अपने साथ पवित्र अंगूर-बेल का स्तुति-गीत

गाने का आदेश देता है। कहा जाता है कि यह स्तुति-गीत हज़रत नूह और उनके परिवार ने तब गाया था जब उन्होंने पहली बार अंगूर-बेल का रस चखा था। स्तुति-गीत गा लेने के बाद भीड़ खुशी के नारे लगाती हुई प्याले खाली कर देती है और फिर अपने-अपने व्यापार करने तथा खुशियाँ मनाने के लिये विसर्जित हो जाती है।

और पवित्र अंगूर-बेल का स्तुति-गीत यह है:

नमस्कार इस पुण्य बेल को !  
 नमस्कार उस अद्भुत जड़ को  
 मृदु अंकुर का पोषण जो करती,  
 स्वर्णिम फल में मदिरा भरती।  
 नमस्कार इस पुण्य बेल को।

जल-प्रलय से अनाथ हुए जो,  
 कीचड़ में हैं धँसे हुए जो,  
 आओ, चखो और आशिष दो सब  
 इस दयालु शाखा के रस को।  
 नमस्कार इस पुण्य बेल को।

माटी के सब बन्धक हो तुम,  
 यात्री हो, पर भटक गये तुम;  
 मुक्ति-मूल्य चुका सकते हो,  
 पथ भी अपना पा सकते हो,  
 इसी दिव्य पौधे के रस से,  
 इसी बेल से, इसी बेल से।

उत्सव के आरम्भ से एक दिन पहले प्रातःकाल मुर्शिद लापता हो गये। सातों साथी इतने घबरा गये कि उसका वर्णन नहीं किया जा सकता; उन्होंने तुरन्त पूरी सावधानी के साथ खोज आरम्भ कर दी। पूरा दिन और



पूरी रात, मशालें और लालटेनें लिये वे नौका में और उसके आस-पास खोज करते रहे; किन्तु मुर्शिद का कोई सुराग नहीं पा सके। शमदाम ने इतनी चिन्ता प्रकट की और वह इतना व्याकुल दिखाई दे रहा था कि मुर्शिद के इस प्रकार रहस्यमय ढंग से लापता हो जाने में उसका हाथ होने का किसी को सन्देह नहीं हुआ। परन्तु सबको पूरा विश्वास था कि मुर्शिद किसी कपटपूर्ण चाल का शिकार हो गये हैं।

महान् आनन्दोत्सव चल रहा था, किन्तु सातों साथियों की ज़बान शोक से जड़वत् हो गई थी और वे परछाइयों की तरह घूम रहे थे। जन-समूह स्तुति-गीत गा चुका था और शराब पी चुका था और मुखिया ऊँचे मंच से उतरकर नीचे आ गया था जब भीड़ के शोर-शराबे से बहुत ऊँची एक चीखती आवाज़ सुनाई दी, “हम मीरदाद को देखना चाहते हैं। हम मीरदाद को सुनना चाहते हैं।”

हमने पहचान लिया कि यह आवाज़ रस्तिदियन की थी। मुर्शिद ने जो कुछ उससे कहा था और जो उसके लिये किया था वह सब रस्तिदियन ने दूर-दूर तक लोगों को बता दिया था। जन-समूह ने उसकी पुकार को तुरन्त अपनी पुकार बना लिया। मुर्शिद के लिये की जा रही पुकार चारों ओर फैल कर कानों को बेधने लगी, और हमारी आँखें भर आईं, हमारे गले रुँध गये मानो शिकंजे में जकड़ लिये गए हों।

अचानक कोलाहल शान्त हो गया, और पूरे समुदाय पर एक गहरा सन्नाटा छा गया। बड़ी कठिनाई से हम अपनी आँखों पर विश्वास कर पाये जब हमने नज़र उठाई और मुर्शिद को उस ऊँचे मंच पर जनता को शान्त करने के लिये हाथ हिलाते हुए देखा।

## अंगूर-बेल के दिवस पर आये यात्रियों को मीरदाद प्रभावशाली उपदेश देता है और नौका को कुछ अनावश्यक भार से मुक्त करता है

**मीरदाद:** देखो मीरदाद को—अंगूर की उस बेल को जिसकी फ़सल अभी तक नहीं काटी गई, जिसका रस अभी तक नहीं पिया गया।

अपनी फ़सल से लदा हुआ है मीरदाद। पर, अफ़सोस, लुनेरे दूसरी ही अंगूर-वाटिकाओं में व्यस्त हैं।

और रस की बहुलता से मीरदाद का दम घुट रहा है। लेकिन पीने और पिलानेवाले दूसरी ही शराबों के नशे में चूर हैं।

हल, कुदाल और दराँती चलानेवालो, तुम्हारे हलों, कुदालों और दराँतियों को मैं आशीर्वाद देता हूँ।

आज तक तुमने क्या जोता है, क्या खोदा है, क्या काटा है ?

क्या तुमने अपनी आत्मा के सुनसान बंजरों में हल चलाया है जो हर प्रकार के घास-पात से इतने भरे पड़े हैं कि सचमुच जंगल ही बन गये हैं जिनमें भयंकर पशु और घिनौने सर्प, बिच्छू आदि पनप रहे हैं और उनकी संख्या बढ़ रही है !

क्या तुमने उन घातक जड़ों को उखाड़ फेंका है जो अँधेरे में तुम्हारी जड़ों से लिपटकर उन्हें दबोच रही हैं, और इस प्रकार तुम्हारे फल को कली की अवस्था में ही नोच रही हैं ?

क्या तुमने अपनी उन शाखाओं की छँटाई की है जिन्हें व्यस्त कीड़ों ने खोखला कर दिया है, या परजीवी बेलों के आक्रमण ने सुखा दिया है ?

अपनी लौकिक अंगूर-वाटिकाओं में हल चलाना और उनकी खुदाई तथा छँटाई करना तुमने भली-भाँति सीख लिया है। पर वह अलौकिक अंगूर-वाटिका जो तुम खुद हो बुरी तरह से उजाड़ और उपेक्षित पड़ी है।

कितना निरर्थक है तुम्हारा सब श्रम जब तक तुम वाटिका से पहले वाटिका के स्वामी की ओर ध्यान नहीं देते!

श्रम-जन्य घट्टों से भरे हाथ वाले लोगो! मैं तुम्हारे घट्टों को आशीर्वाद देता हूँ।

लम्बसूत्र और पैमाने के मित्रो; हथौड़े और अहरन के साथियो; छेनी और आरे के हमराहियो, अपने-अपने शिल्प में तुम कितने कुशल और योग्य हो!

तुम्हें मालूम है कि वस्तुओं का स्तर और उनकी गहराई कैसे जानी जाती है; परन्तु अपना स्तर और गहराई कैसे जानी जाती है, इसका तुम्हें पता नहीं।

तुम लोहे के टुकड़े को हथौड़े और अहरन से कुशलतापूर्वक गढ़ते हो, पर नहीं जानते कि ज्ञान की अहरन पर संकल्प के हथौड़े से अनगढ़ मनुष्य को कैसे गढ़ा जाता है। न ही तुमने अहरन से यह अनमोल शिक्षा ली है कि चोट के बदले चोट पहुँचाने का रत्ती भर विचार किये बिना भी चोट कैसे खाई जाती है।

लकड़ी पर आरा और पत्थर पर छेनी चलाने में तुम समान रूप से निपुण हो; पर नहीं जानते कि गँवारू और उलझे हुए मनुष्य को सभ्य और सुलझा हुआ कैसे बनाया जाता है।

कितने निरर्थक हैं तुम्हारे सब शिल्प जब तक पहले तुम शिल्पी पर उनका प्रयोग नहीं करते!

अपनी धरती-माँ के दिये उपहारों और साथी मनुष्यों के हाथों से बनी चीजों की मनुष्य को आवश्यकता होती है, और मनुष्य अपने लाभ के लिये इस आवश्यकता का ही व्यापार कर रहे हैं।

मैं आवश्यकताओं को, उपहारों को, और उत्पादित वस्तुओं को आशीर्वाद देता हूँ, आशीर्वाद देता हूँ व्यापार को भी। किन्तु स्वयं उस लाभ के लिये, जो वास्तव में हानि है, मेरे मुख से शुभकामना नहीं निकलती।



रात के महत्त्वपूर्ण सन्नाटे में जब तुम दिन भर की आय के जमा-खर्च का हिसाब करते हो तो लाभ के खाते में क्या डालते हो और हानि के खाते में क्या? क्या लाभ के खाते में वह धन डालते हो जो तुम्हें तुम्हारी लागत से अधिक प्राप्त हुआ? तो सचमुच बेकार गया वह दिन जिसे बेचकर तुमने वह पूँजी प्राप्त की, चाहे वह पूँजी कितनी ही बड़ी क्यों न रही हो। और उस दिन के सौहार्द, शान्ति और प्रकाश के अन्तहीन खजाने से तुम पूर्णतया वंचित रह गये। उस दिन के द्वारा स्वतन्त्रता के लिये दिये गये निरन्तर आमन्त्रणों का भी तुम लाभ न उठा सके और खो बैठे उन मानव-हृदयों को जिन्हें उसने तुम्हारे लिये उपहार के रूप में अपनी हथेली पर रखा था।

जब तुम्हारी मुख्य रुचि लोगों के बटुओं में है, तब तुम्हें उनके हृदय में प्रवेश का मार्ग कैसे मिल सकता है? और यदि तुम्हें मनुष्य के हृदय में प्रवेश का मार्ग नहीं मिलता तो प्रभु के हृदय तक पहुँचने की आशा कैसे कर सकते हो? और यदि तुम प्रभु के हृदय तक नहीं पहुँचते तो क्या अर्थ है तुम्हारे जीवन का?

जिसे तुम लाभ समझते हो यदि वह हानि हो, तो कितनी अपार होगी वह हानि! निश्चय ही व्यर्थ है तुम्हारा सम्पूर्ण व्यापार जब तक तुम्हारे लाभ के खाते में प्रेम और दिव्य ज्ञान न आये।

राजदण्ड थामनेवाले मुकुटधारियो!

ऐसे हाथों में जो घायल करने में बहुत चुस्त, लेकिन घाव पर मरहम लगाने में बहुत सुस्त हैं राजदण्ड सर्प के समान हैं। जब कि प्रेम का मरहम लगानेवाले हाथों में राजदण्ड एक विद्युत-दण्ड के समान है जो विषाद और विनाश को पास नहीं फटकने देता।

भली प्रकार परखो अपने हाथों को।

मिथ्याभिमान, अज्ञान तथा मनुष्यों पर प्रभुत्व के लोभ से फूले हुए मस्तक पर सजा हीरे, लाल और नीलम से जुड़ा सोने का मुकुट बोझ, उदासी और बेचैनी महसूस करता है। हाँ, ऐसा मुकुट तो अपनी पीठिका का—जिस पर वह रखा है उसका—मर्मभेदी उपहास ही होता है। जब

कि अत्यन्त दुर्लभ और उत्कृष्ट रत्नों से जड़ा मुकुट भी ज्ञान तथा आत्म-विजय से आलोकित मस्तक के अयोग्य होने के कारण लज्जा का अनुभव करता है।

भली प्रकार परखो अपने मस्तकों को।

लोगों पर शासन करना चाहते हो तुम? तो पहले अपने आप पर शासन करना सीखो।

अपने आप पर शासन किये बिना तुम औरों पर शासन कैसे कर सकते हो? वायु से प्रताड़ित, फेन उगलती लहर क्या सागर को शान्ति तथा स्थिरता प्रदान कर सकती है? अश्रु-पूरित आँख क्या किसी अश्रु-पूरित हृदय में आनन्दपूर्ण मुस्कान जाग्रत कर सकती है? भय या क्रोध से काँपता हाथ क्या जहाज़ का सन्तुलन बनाये रख सकता है?

मनुष्यों पर शासन करनेवाले लोग मनुष्यों द्वारा शासित होते हैं। और मनुष्य अशान्ति, अराजकता तथा अव्यवस्था से भरे हुए हैं, क्योंकि वे सागर की तरह आकाश की हर झंझा के प्रहार के सामने बेबस हैं; सागर ही की तरह उनमें ज्वार-भाटा आता है, और कभी-कभी लगता है कि वे अपनी सीमा का उल्लंघन करने ही वाले हैं। लेकिन सागर ही की तरह उनकी गहराइयाँ शान्त और सतह पर होनेवाले झंझाओं के प्रहारों के प्रभाव से मुक्त रहती हैं।

यदि तुम सचमुच लोगों पर शासन करना चाहते हो तो उनकी चरम गहराइयों तक पहुँचो, क्योंकि मनुष्य केवल उफनती लहरें नहीं हैं। परन्तु मनुष्यों की चरम गहराइयों तक पहुँचने के लिये तुम्हें पहले अपनी चरम गहराई तक पहुँचना होगा। और ऐसा करने के लिये तुम्हें राजदण्ड तथा मुकुट को त्यागना होगा ताकि तुम्हारे हाथ महसूस करने के लिये स्वतन्त्र हों, और तुम्हारा मस्तक सोचने तथा परखने के लिये भार-मुक्त हो।

व्यर्थ है तुम्हारा सब शासन, नियमहीन हैं तुम्हारे सब नियम, और अव्यवस्था है तुम्हारी सब व्यवस्था जब तक तुम अपने अन्दर के उस उद्दण्ड मनुष्य पर शासन करना न सीख लो जिसका प्रिय मनोरंजन है राजदण्डों और मुकुटों से खेलना।

धूपदानों और धर्म-पुस्तकों वालो! क्या जलाते हो तुम धूपदानों में? क्या पढ़ते हो तुम धर्म-पुस्तकों में?

क्या तुम वह रस जलाते हो जो कुछ पौधों के सुगन्धपूर्ण हृदय में से रिस-रिस कर जम जाता है? किन्तु वह तो आम बाज़ारों में खरीदा और बेचा जाता है, और दो टके का रस किसी भी देवता को कष्ट देने के लिये काफ़ी है।

क्या तुम समझते हो कि धूप की सुगन्ध घृणा, ईर्ष्या और लोभ की दुर्गन्ध को दबा सकती है? दबा सकती है फ़रेबी आँखों की, झूठ बोलती जिह्वा की और वासनापूर्ण हाथों की दुर्गन्ध को? दबा सकती है विश्वास का नाटक करते अविश्वास की और आनन्दपूर्ण स्वर्ग का ढोल पीटती अधम पार्थिवता की दुर्गन्ध को?

इन सबको भूखों मारकर, एक-एक कर हृदय में जला देने से, और इनकी राख को चारों दिशाओं में बिखेर देने से जो सुगन्ध उठेगी वह तुम्हारे प्रभु की नासिका को कहीं अधिक सुहावनी लगेगी।

क्या जलाते हो तुम धूपदानों में?

अनुनय, प्रशंसा और प्रार्थना?

अच्छा है क्रोधी देवता को अपने क्रोध की अग्नि में झुलसने के लिये छोड़ देना। अच्छा है प्रशंसा के भूखे देवता को प्रशंसा की भूख से तड़पने के लिये छोड़ देना। अच्छा है कठोर-हृदय देवता को अपने ही हृदय की कठोरता के हाथों मरने के लिये छोड़ देना।

किन्तु प्रभु न क्रोधी है, न प्रशंसा का भूखा और न ही कठोर-हृदय। क्रोध से भरे, प्रशंसा के भूखे और कठोर-हृदय तो तुम हो।

प्रभु यह नहीं चाहता कि तुम धूप जलाओ; वह तो चाहता है कि तुम अपने क्रोध को, अहंकार और कठोरता को जला डालो ताकि तुम उसी जैसे स्वतन्त्र और सर्वशक्तिमान हो जाओ। वह चाहता है कि तुम्हारा हृदय ही धूपदान बन जाये।

क्या पढ़ते हो तुम अपनी धर्म-पुस्तकों में?

क्या तुम धर्मादेशों को पढ़ते हो ताकि उन्हें सुनहरे अक्षरों में मन्दिरों की दीवारों और गुम्बदों पर लिख दो? या तुम पढ़ते हो जीवित सत्य को ताकि उसे अपने हृदय पर अंकित कर सको?



क्या तुम सिद्धान्तों को पढ़ते हो ताकि धार्मिक मंचों से उनकी शिक्षा दे सको और तर्क तथा वचन-चातुरी द्वारा, और यदि आवश्यकता पड़े तो तलवार की धार द्वारा, उनकी रक्षा कर सको? या तुम अध्ययन करते हो जीवन का जो कोई सिद्धान्त नहीं है जिसकी शिक्षा दी जाये और रक्षा की जाये, बल्कि एक मार्ग है जिस पर स्वतन्त्रता प्राप्त करने के दृढ़ संकल्प के साथ चलना है, मन्दिर के अन्दर भी वैसे ही जैसे उसके बाहर, रात में भी वैसे ही जैसे दिन में, और निचले पदों पर भी वैसे ही जैसे ऊँचे पदों पर। और जब तक तुम उस मार्ग पर चलते नहीं और तुम्हें उसकी मंज़िल का निश्चित रूप से पता नहीं लग जाता, तब तक तुम औरों को उस मार्ग पर चलने का निमन्त्रण देने का दुःसाहस कैसे कर सकते हो?

क्या तुम अपनी धर्म-पुस्तकों में तालिकाओं, मानचित्रों तथा मूल्य-सूचियों को देखते हो जो मनुष्यों को बताती हैं कि इतनी या इतनी धरती से कितना स्वर्ग खरीदा जा सकता है?

चालबाज़ों और पाप के प्रतिनिधियो! तुम मनुष्यों को स्वर्ग बेचकर उनसे धरती में उनका हिस्सा मोल लेना चाहते हो। तुम धरती को नरक बनाकर मनुष्यों को यहाँ से भाग जाने के लिये प्रेरित करते हो और अपने आपको और भी मज़बूती के साथ यहाँ जमा लेना चाहते हो। तुम मनुष्यों को यह क्यों नहीं समझाते कि वह धरती के कुछ हिस्से के बदले स्वर्ग में अपना हिस्सा बेच दें?

यदि तुम अपनी धर्म-पुस्तकों को अच्छी तरह पढ़ते तो लोगों को दिखाते कि धरती को स्वर्ग कैसे बनाया जाता है, क्योंकि दिव्य-हृदय मनुष्यों के लिये धरती एक स्वर्ग है; जब कि उनके लिये जिनका हृदय संसार में है स्वर्ग एक धरती है।

मनुष्य और उसके साथियों के बीच, मनुष्य और अन्य जीवों के बीच, तथा मनुष्य और प्रभु के बीच खड़ी सब बाधाओं को हटाकर मनुष्य के हृदय में स्वर्ग को प्रकट कर दो। परन्तु इसके लिये तुम्हें स्वयं दिव्य-हृदय बनना होगा।

स्वर्ग कोई खिला हुआ उद्यान नहीं है जिसे खरीदा या किराये पर लिया जा सके। स्वर्ग तो अस्तित्व की एक अवस्था है जिसे धरती पर

उतनी ही आसानी से प्राप्त किया जा सकता है जितनी आसानी से इस असीम ब्रह्माण्ड में कहीं भी। फिर उसे धरती से परे देखने के लिये अपनी गर्दन क्यों तानते हो, अपनी आँखों पर क्यों जोर डालते हो?

न ही नरक कोई दहकती हुई भट्ठी है जिससे प्रार्थनाएँ करके या धूप जलाकर बचा जा सके। नरक तो मन की एक अवस्था है जिसका धरती पर उतनी ही आसानी से अनुभव किया जा सकता है जितनी आसानी से इस अमित विशालता में कहीं भी।

जिस आग का ईंधन मन हो उस आग से भागकर तुम कहाँ जा सकते हो जब तक तुम मन से ही नहीं भाग जाते?

जब तक मनुष्य अपनी ही छाया का बन्दी है तब तक व्यर्थ है स्वर्ग की खोज, और व्यर्थ है नरक से बचने का प्रयास। क्योंकि स्वर्ग और नरक दोनों द्वैत की स्वाभाविक अवस्थाएँ हैं। जब तक मनुष्य की बुद्धि एक न हो, हृदय एक न हो, और शरीर एक न हो; जब तक वह छाया-मुक्त न हो और उसका संकल्प एक न हो, तब तक उसका एक पैर हमेशा स्वर्ग में रहेगा और दूसरा हमेशा नरक में। और यह अवस्था निःसन्देह नरक है।

और यह तो नरक से भी बदतर है कि पंख प्रकाश के हों और पैर सीसे के; कि आशा ऊपर उठाये और निराशा नीचे घसीट ले; कि भय-मुक्त विश्वास बन्धन को खोले और भयपूर्ण संशय बन्धन में जकड़ ले।

स्वर्ग नहीं है वह स्वर्ग जो दूसरों के लिये नरक हो। नरक नहीं है वह नरक जो दूसरों के लिये स्वर्ग हो। और क्योंकि एक का नरक प्रायः दूसरे का स्वर्ग होता है, और एक का स्वर्ग प्रायः दूसरे का नरक, इसलिये स्वर्ग और नरक कोई स्थायी और परस्पर विरोधी अवस्थाएँ नहीं, बल्कि पड़ाव हैं जिन्हें स्वर्ग और नरक दोनों से स्वतन्त्रता प्राप्त करने की लम्बी यात्रा में पार करना होता है।

पवित्र अंगूर-बेल के यात्रियो!

सदाचारी बनने के इच्छुक व्यक्तियों को बेचने या प्रदान करने के लिये मीरदाद के पास कोई स्वर्ग नहीं है; न ही उसके पास कोई नरक है जिसे वह दुराचारी बनने के इच्छुक लोगों के लिये हौआ बना कर खड़ा कर दे।



जब तक कि तुम्हारी सदाचारिता खुद ही स्वर्ग नहीं बन जाती, वह एक दिन के लिये खिलेगी और फिर मुरझा जायेगी।

जब तक कि तुम्हारी दुराचारिता खुद ही हौआ नहीं बन जाती है, वह एक दिन के लिये दबी रहेगी पर अनुकूल अवसर पाते ही खिल उठेगी।

तुम्हें देने के लिये मीरदाद के पास कोई स्वर्ग या नरक नहीं है, परन्तु है दिव्य ज्ञान जो तुम्हें किसी भी नरक की आग और किसी भी स्वर्ग के ऐश्वर्य से बहुत ऊपर उठा देगा। हाथ से नहीं, हृदय से स्वीकार करना होगा तुम्हें यह उपहार। इसके लिये तुम्हें अपने हृदय को ज्ञान-प्राप्ति की इच्छा और संकल्प के अतिरिक्त अन्य हर इच्छा और संकल्प के बोझ से मुक्त करना होगा।

तुम धरती के लिये कोई अजनबी नहीं हो, न ही धरती तुम्हारे लिये सौतेली माँ है। तुम तो उसके हृदय का ही सारभूत अंश हो, और उसके मेरुदण्ड का ही बल हो। अपनी सबल, चौड़ी और सुदृढ़ पीठ पर तुम्हें उठाने में उसे खुशी होती है; तुम क्यों अपने दुर्बल और क्षीण वक्षःस्थल पर उसे उठाने का हठ करते हो, और परिणामस्वरूप कराहते, हाँफते और साँस के लिये छटपटाते हो?

दूध और शहद बहते हैं धरती के थनों से। लोभ के कारण अपनी आवश्यकता से अधिक मात्रा में इन्हें लेकर तुम इन दोनों को खट्टा क्यों करते हो?

शान्त और सुन्दर है धरती का मुखड़ा। तुम दुःखद कलह और भय से उसे अशान्त और कुरूप क्यों बनाना चाहते हो?

एक पूर्ण इकाई है धरती। तुम तलवारों और सीमा-चिह्नों से क्यों इसको टुकड़े-टुकड़े कर देने पर तुले हो?

आज्ञाकारिणी और निश्चिन्त है धरती। तुम क्यों इतने चिन्ताग्रस्त और अवज्ञाकारी हो?

फिर भी तुम धरती से, सूर्य से, तथा आकाश के सभी ग्रहों से अधिक स्थायी हो। सब नष्ट हो जायेंगे, पर तुम नहीं। फिर तुम क्यों हवा में पत्तों की तरह काँपते हो?



यदि अन्य कोई वस्तु तुम्हें ब्रह्माण्ड के साथ तुम्हारी एकता का अनुभव नहीं करवा सकती तो अकेली धरती से ही तुम्हें इसका अनुभव प्राप्त हो जाना चाहिये। परन्तु धरती स्वयं केवल दर्पण है जिसमें तुम्हारी परछाइयाँ प्रतिबिम्बित होती हैं। क्या दर्पण प्रतिबिम्बित वस्तु से अधिक महत्त्वपूर्ण है? क्या मनुष्य की परछाई मनुष्य से अधिक महत्त्वपूर्ण है?

आँखें मलो और जागो। क्योंकि तुम केवल मिट्टी नहीं हो। तुम्हारी नियति केवल जीना और मरना तथा मृत्यु के भूखे जबड़ों के लिये आहार बनकर रह जाना नहीं है। तुम्हारी नियति है मुक्त होना—जीवन और मृत्यु से; स्वर्ग और नरक से; और परस्पर संघर्ष-रत सभी विरोधी तत्त्वों से जो द्वैत पर निर्भर हैं। तुम्हारी नियति है प्रभु की सतत फलदायिनी अंगूर-वाटिका की फलवती अंगूर-बेल बनना।

जिस प्रकार किसी अंगूर-बेल की जीवित शाखा धरती में दबा दिये जाने पर जड़ पकड़ लेती है और अन्त में अपनी माता की ही तरह, जिसके साथ वह जुड़ी रहती है, अंगूर देनेवाली स्वतन्त्र बेल बन जाती है, उसी प्रकार मनुष्य, जो दिव्य लता की जीवित शाखा है, अपनी दिव्यता की मिट्टी में दबा दिये जाने पर परमात्मा का रूप बन जायेगा और सदा परमात्मा के साथ एक-रूप रहेगा।

क्या मनुष्य को जीवित दफना दिया जाये ताकि वह जीवन पा ले?

हाँ, निःसन्देह हाँ। जब तक तुम जीवन और मृत्यु के द्वैत के प्रति दफन नहीं हो जाते, तुम अस्तित्व के एकत्व को नहीं पाओगे।

जब तक तुम दिव्य प्रेम के अंगूरों से पोषित नहीं होते, तुम दिव्य ज्ञान की मदिरा से भरे नहीं जाओगे।

और जब तक तुम दिव्य ज्ञान की मदिरा के नशे में बेहोश नहीं हो जाते, तुम स्वतन्त्रता के चुम्बन से होश में नहीं आओगे।

प्रेम का आहार नहीं करते हो तुम जब पृथ्वी की अंगूर-बेल के फल खाते हो। तुम एक छोटी भूख को शान्त करने के लिये एक बड़ी भूख को आहार बनाते हो।

ज्ञान का पान नहीं करते हो तुम जब पृथ्वी की अंगूर-बेल का रस पीते हो। तुम केवल पीड़ा की एक क्षणिक विस्मृति का पान करते हो जो अपना

प्रभाव समाप्त होते ही तुम्हारी पीड़ा की तीव्रता को दुगुना कर देती है। तुम एक दुःखदायी अहं से दूर भागते हो और वही अहं तुम्हें अगले मोड़ पर खड़ा मिलता है।

जो अंगूर तुम्हें मीरदाद पेश करता है उन्हें न फफूँदी लगती है न वे सड़ते हैं। उनसे एक बार तृप्त हो जाना सदा के लिये तृप्त रहना है। जो मदिरा उसने तुम्हारे लिये तैयार की है वह उन ओंठों के लिये बहुत तीखी है जो जलने से डरते हैं; लेकिन वह जान डाल देती है उन हृदयों में जो अनन्तकाल तक आत्म-विस्मृति के नशे में डूबे रहना चाहते हैं।

क्या तुममें ऐसे मनुष्य हैं जो मेरे अंगूरों के भूखे हैं? वे अपनी टोकरियाँ लेकर आगे आ जायें।

क्या कोई ऐसे हैं जो मेरे रस के प्यासे हैं? वे अपने प्याले लेकर आ जायें।

क्योंकि मीरदाद अपनी फ़सल से लदा है, और रस की बहुलता से उसकी साँस रुक रही है।

पवित्र अंगूर-बेल का दिवस आत्म-विस्मृति का दिन था—प्रेम की मदिरा से उन्मत और ज्ञान की आभा से स्नात दिन, स्वतन्त्रता के पंखों के संगीत से आनन्द-विभोर दिन, बाधाओं को हटाकर एक को सबमें और सबको एक में विलीन कर देने का दिन। पर देखो, आज यह क्या बन गया है!

एक सप्ताह बन गया है यह रोगी अहं के दावे का; घृणित लोभ का जो घृणित लोभ का ही व्यापार कर रहा है; दासता का जो दासता के साथ ही क्रीड़ा कर रही है; अज्ञानता का जो अज्ञानता को ही दूषित कर रही है।

जो नौका कभी विश्वास, प्रेम और स्वतन्त्रता की मदिरा बनाने का केन्द्र थी, उसी को अब शराब की एक विशाल भट्ठी तथा घृणित व्यापार-मण्डी में बदल दिया गया है। वह तुम्हारी अंगूर-वाटिकाओं की उपज लेती है और उसे मति-भ्रष्ट करनेवाली मदिरा के रूप में वापस तुम्हें ही बेच देती है। तुम्हारे हाथों के श्रम की वह तुम्हारे ही हाथों के लिये हथकड़ियाँ गढ़ देती है। तुम्हारे श्रम के पसीने को वह जलते हुए अंगार बना देती है तुम्हारे ही मस्तक को दागने के लिये।

दूर, बहुत दूर भटक गई है नौका अपने नियत मार्ग से। किन्तु अब इसकी पतवार को ठीक दिशा दे दी गई है। अब इसे सारे अनावश्यक भार से मुक्त कर दिया जायेगा ताकि यह अपने मार्ग पर सुविधापूर्वक और सुरक्षित चल सके।

इसलिये सब उपहार उन्हीं को, जिन्होंने दिये थे, लौटा दिये जायेंगे और सब कर्जदारों को माफ़ कर दिये जायेंगे। नौका सिवाय प्रभु के किसी को दाता स्वीकार नहीं करती, और प्रभु चाहता है कि कोई भी कर्जदार न रहे—उसका अपना कर्जदार भी नहीं।

यही शिक्षा थी मेरी नूह को।

यही शिक्षा है मेरी तुम्हें।



**सत्य का उपदेश क्या सबको दिया जाना चाहिये  
या कुछ चुने हुए व्यक्तियों को ?**

**अंगूर-बेल के दिवस से एक दिन पहले  
मीरदाद अपने लुप्त होने का भेद प्रकट करता है  
और झूठी सत्ता की चर्चा करता है**

नरौंदा: प्रीति-भोज जब स्मृति-मात्र रह गया था, उसके काफी समय बाद एक दिन सातों साथी पर्वतीय नीड़ में मुर्शिद के पास इकट्ठे हुए थे। उस दिन की स्मरणीय घटनाओं पर जब साथी विचार कर रहे थे तो मुर्शिद चुप रहे। कुछ साथियों ने उत्साह के उस महान् उद्वेग पर आश्चर्य प्रकट किया जिसके साथ जनसमूह ने मुर्शिद के वचनों का स्वागत किया था। कुछ और ने शमदाम के उस समय के विचित्र तथा रहस्यपूर्ण व्यवहार पर टिप्पणी की जब सैकड़ों ऋण-आलेख नौका के कोषागार से निकालकर सबके सामने नष्ट कर दिये गए थे, शराब के सैकड़ों मर्तबान और मटके तहखानों में से निकालकर दे दिये गए थे और अनेक मूल्यवान उपहार लौटा दिये गए थे, क्योंकि उस समय शमदाम ने किसी प्रकार का विरोध—जिसका हमें डर था—नहीं किया था, बल्कि चुपचाप, बिना हिले-डुले, आँखों से आँसुओं की धारा बहाते हुए सबकुछ देखता रहा था।

बैनून ने कहा कि यद्यपि जय-जयकार करते-करते लोगों के गले बैठ गये थे, उनकी सराहना मुर्शिद के वचनों के लिये नहीं बल्कि माफ़ कर दिये गए ऋणों और लौटा दिये गए उपहारों के लिये थी। उसने तो मुर्शिद की हलकी-सी आलोचना भी की कि उन्होंने ऐसी भीड़ पर समय नष्ट किया

जिसे खाने-पीने तथा आनन्द मनाने से बढ़कर किसी खुशी की तलाश नहीं थी। बैनून ने विचार प्रकट किया कि सत्य का उपदेश बिना सोच-विचार के सबको नहीं, कुछ चुने हुए व्यक्तियों को ही दिया जाना चाहिये।

इस पर मुर्शिद ने अपना मौन तोड़ा और कहा:

**मीरदाद:** हवा में छोड़ा तुम्हारा श्वास निश्चय ही किसी के फेफड़ों में प्रवेश करेगा। मत पूछो कि फेफड़े किसके हैं। केवल इतना ध्यान रखो कि तुम्हारा श्वास पवित्र हो।

तुम्हारा शब्द कोई कान खोजेगा और निश्चय ही उसे पा लेगा। मत पूछो कि कान किसका है। केवल इतना ध्यान रखो कि तुम्हारा शब्द स्वतन्त्रता का सच्चा सन्देश-वाहक हो।

तुम्हारा मूक विचार निश्चय ही किसी जिह्वा को बोलने के लिये प्रेरित करेगा। मत पूछो कि जिह्वा किसकी है। केवल इतना ध्यान रखो कि तुम्हारा विचार प्रेमपूर्ण ज्ञान से आलोकित हो।

किसी भी प्रयत्न को व्यर्थ गया मत समझो। कुछ बीज वर्षों धरती में दबे पड़े रहते हैं, परन्तु जब पहली अनुकूल ऋतु का श्वास उनमें प्राण फूँकता है, वे तुरन्त सजीव हो उठते हैं।

सत्य का बीज प्रत्येक मनुष्य और वस्तु के अन्दर मौजूद है। तुम्हारा काम सत्य को बोना नहीं, बल्कि उसके अंकुरित होने के लिये अनुकूल ऋतु तैयार करना है।

अनन्तकाल में सबकुछ सम्भव है। इसलिये किसी भी मनुष्य की स्वतन्त्रता के विषय में निराश न होओ, बल्कि मुक्ति का सन्देश समान विश्वास तथा उत्साह के साथ सब तक पहुँचाओ—जैसे तड़पनेवालों तक वैसे ही न तड़पनेवालों तक भी। क्योंकि न तड़पनेवाले कभी अवश्य तड़पेंगे, और आज जिनके पंख नहीं हैं वे किसी दिन धूप में चोंच से अपने पंखों को सँवारेंगे और अपनी उड़ानों से आकाश की दूरतम तथा अगम ऊँचाइयों को चीर डालेंगे।

**मिकास्तर:** हमें बहुत दुःख है कि आज तक, हमारे बार-बार पूछने पर भी, मुर्शिद ने अंगूर-बेल के दिवस से एक दिन पहले अपने रहस्यपूर्ण

ढंग से गायब हो जाने का भेद हम पर प्रकट नहीं किया। क्या हम उनके विश्वास के योग्य नहीं हैं ?

**मीरदाद:** जो भी मेरे प्यार के योग्य है, निःसन्देह मेरे विश्वास के योग्य भी है। विश्वास क्या प्रेम से बड़ा है, मिकास्तर ? क्या मैं तुम्हें दिल खोलकर प्रेम नहीं दे रहा हूँ ?

मैंने यदि उस अप्रिय घटना की चर्चा नहीं की तो इसलिये कि मैं शमदाम को प्रायश्चित्त करने के लिये समय देना चाहता था, क्योंकि वही था जिसने दो अजनबियों की सहायता से उस शाम मुझे बलपूर्वक इस नीड़ में से निकालकर काले खड्डे में डाल दिया था। अभाग शमदाम ! उसने स्वप्न में भी नहीं सोचा था कि काला खड्ड कोमल हाथों से मीरदाद का स्वागत करेगा और उसके शिखर तक पहुँचने के लिये जादू की सीढ़ियाँ लगा देगा।

**नरौंदा:** यह सुनकर हम सब भय तथा आश्चर्य से अवाक् रह गये। किसी को भी मुर्शिद से यह पूछने का साहस नहीं हुआ कि उस जगह से, जहाँ मृत्यु सबको निश्चित लगती थी, वे सकुशल कैसे निकल आये। कुछ देर तक सब मौन रहे।

**हिम्बल:** जब हमारे मुर्शिद शमदाम को प्यार करते हैं तो वह उन्हें क्यों सताता है ?

**मीरदाद:** शमदाम मुझे नहीं सताता। शमदाम शमदाम को ही सताता है।

अन्धों के हाथ में नाममात्र की भी सत्ता दे दो तो वे उन सब लोगों की आँखें निकाल देंगे जो देख सकते हैं; उनकी भी जो उन्हें देखने की शक्ति प्रदान करने के लिये स्वयं कठोर परिश्रम करते हैं।

गुलाम को केवल एक दिन के लिये अपनी मनमानी करने की छूट दे दो, और वह संसार को गुलामों के संसार में बदल देगा। सबसे पहले वह उन पर डण्डे बरसायेगा और उन्हें बेड़ियाँ पहनायेगा जो उसे स्वतन्त्र कराने के लिये निरन्तर परिश्रम कर रहे हैं।

संसार की प्रत्येक सत्ता, उसका आधार चाहे कुछ भी हो, झूठी है। इसलिये वह अपनी एड़ें खनकाती है, तलवार घुमाती है, तथा कोलाहलपूर्ण



ठाट-बाट और चमक-दमक के साथ सवारी करती है ताकि कोई उसके कपटी हृदय के अन्दर झाँकने का साहस न कर सके। अपने डोलते सिंहासन को वह बन्दूकों और भालों के सहारे स्थिर रखती है। मिथ्याभिमान की लपेट में आई अपनी आत्मा को वह डरावने तावीजों और अन्ध-विश्वासों की आड़ में छिपाती है ताकि कुतूहली लोगों की आँखें उसकी घिनौनी निर्धनता को न देख सकें।

ऐसी सत्ता उसका प्रयोग करने को उत्सुक व्यक्ति की आँखों पर पर्दा भी डालती है और उसके लिये अभिशाप भी होती है। वह हर मूल्य पर अपने आपको बनाये रखना चाहती है, चाहे बनाये रखने का भयंकर मूल्य चुकाने के लिये उसे स्वयं सत्ताधारी को और उसके समर्थकों को ही नष्ट करना पड़े, और साथ ही उनको भी जो उसका विरोध करते हैं।

सत्ता की भूख के कारण मनुष्य निरन्तर व्याकुल रहते हैं। जिनके पास सत्ता है वे उसे बनाये रखने के लिये सदा लड़ते रहते हैं, जिनके पास नहीं है वे सत्ताधारियों के हाथों से सत्ता छीनने के लिये सदा संघर्षरत रहते हैं; जब कि मनुष्य को, उसमें छिपे प्रभु को, पैरों और खुरों तले रौंदकर युद्ध-भूमि में छोड़ दिया जाता है—उपेक्षित, असहाय और प्रेम से वंचित।

इतना भयंकर है यह युद्ध, और रक्त-पात के ऐसे दीवाने हैं यह योद्धा कि नकली दुलहिन के चेहरे पर से रंगा हुआ मुखौटा कोई नहीं हटाता, उसकी राक्षसी कुरूपता सबके सामने प्रकट करने के लिये कोई नहीं रुकता; अफ़सोस, कोई नहीं।

विश्वास करो, साधुओ, किसी भी सत्ता का रत्ती भर मूल्य नहीं है, सिवाय दिव्य ज्ञान की सत्ता के जो अनमोल है। उसे पाने के लिये कोई त्याग बड़ा नहीं। एक बार उस सत्ता को पा लो तो समय के अन्त तक वह तुम्हारे पास रहेगी। वह तुम्हारे शब्दों में इतनी शक्ति भर देगी जितनी संसार की सारी सेनाओं के हाथ में भी कभी नहीं आ सकती; अपने आशीर्वाद से वह तुम्हारे कार्यों में इतना उपकार भर देगी जितना संसार की सब सत्ताएँ मिलकर भी कभी संसार की झोली में डालने का स्वप्न तक नहीं देख सकतीं।

क्योंकि दिव्य ज्ञान स्वयं अपनी ढाल है; इसकी शक्तिशाली भुजा प्रेम है। यह न सताता है न अत्याचार करता है, यह तो हृदयों पर ओस की तरह गिरता है; और जो इसे स्वीकार नहीं करते उन्हें भी यह उसी प्रकार राहत देता है जिस प्रकार इसका पान करनेवालों को। क्योंकि इसे अपनी आन्तरिक शक्ति पर बहुत गहरा विश्वास है, यह किसी बाहरी शक्ति का सहारा नहीं लेता। क्योंकि यह नितान्त भय-रहित है, यह किसी भी व्यक्ति पर अपने आपको थोपने के लिये भय को साधन नहीं बनाता।

संसार दिव्य ज्ञान की दृष्टि से निर्धन है—अफ़सोस, अति निर्धन! इसलिये वह अपनी निर्धनता को झूठी सत्ता के पर्दे के पीछे छिपाने का प्रयास करता है। झूठी सत्ता झूठी शक्ति के साथ रक्षात्मक तथा आक्रामक सन्धियाँ करती है, और दोनों अपना नेतृत्व भय को सौंप देते हैं। और भय दोनों को नष्ट कर देता है।

क्या सदा ऐसा नहीं होता आया है कि दुर्बल अपनी दुर्बलता की रक्षा के लिये संगठित हो जाते हैं? इस प्रकार संसार की सत्ता तथा संसार की पाशविक शक्ति दोनों, हाथ में हाथ डाले, भय के नियन्त्रण में चलते हैं और अज्ञानता को युद्ध, रक्त तथा आँसुओं के रूप में उसका दैनिक कर देते हैं। और अज्ञानता मन्द-मन्द मुस्कराती है और सबको कहती है, 'शाबाश!'

मीरदाद को खड्ड के हवाले करके शमदाम ने शमदाम से कहा, 'शाबाश!' परन्तु शमदाम ने यह नहीं सोचा कि मुझे खड्ड में फेंककर उसने मुझे नहीं अपने आपको फेंका था। क्योंकि खड्ड किसी मीरदाद को रोककर नहीं रख सकता; जब कि किसी शमदाम को उसकी काली और फिसलन-भरी दीवारों पर चढ़ने के लिये देर तक कठिन परिश्रम करना पड़ता है।

संसार की प्रत्येक सत्ता केवल नक़ली आभूषण है। जो दिव्य ज्ञान की दृष्टि से अभी शिशु हैं, उन्हें इससे अपना मन बहलाने दो। किन्तु तुम स्वयं अपने आपको कभी किसी पर मत थोपो; क्योंकि जो बलपूर्वक थोपा जाता है उसे देर-सवेर बलपूर्वक हटा भी दिया जाता है।

मनुष्यों के जीवन पर किसी प्रकार का प्रभुत्व जमाने का प्रयत्न न करो; वह प्रभु-इच्छा के अधीन है। न ही मनुष्यों की सम्पत्ति पर अधिकार जमाने का प्रयत्न करो; क्योंकि मनुष्य अपनी सम्पत्ति से उतना ही बँधा हुआ है जितना अपने जीवन से, और उसकी जंजीरों को छेड़नेवालों को वह सन्देह और घृणा की दृष्टि से देखता है। लेकिन प्रेम और दिव्य ज्ञान के द्वारा लोगों के हृदय में स्थान पाने का मार्ग खोजो; एक बार वहाँ स्थान पा लेने पर तुम लोगों को उनकी जंजीरों से छुटकारा दिलवाने के लिये अधिक कुशलतापूर्वक कार्य कर सकोगे।

क्योंकि तब प्रेम तुम्हें मार्ग दिखायेगा और दिव्य ज्ञान होगा तुम्हारा दीप-वाहक।



## बेसार का सुलतान शमदाम के साथ नीड़ में आता है

युद्ध और शान्ति के विषय में  
सुलतान और मीरदाद में वार्तालाप  
शमदाम मीरदाद को जाल में फँसाता है

नरौंदा: मुर्शिद ने अपनी बात समाप्त की ही थी और हम उनके शब्दों पर विचार कर रहे थे, तभी बाहर भारी पदचाप और उसके साथ दबे स्वर में कुछ अस्पष्ट बातचीत सुनाई दी। शीघ्र ही दो विशालकाय सिपाही, जो एड़ी से चोटी तक शस्त्रों से सज्जित थे, द्वार पर आये और उसके दोनों ओर खड़े हो गये। उनके हाथों में नंगी तलवारें थी जो धूप में चमक रही थीं। उनके बाद राजचिह्नों से सज्जित एक युवा सुलतान आया जिसके पीछे-पीछे शमदाम सकुचाया-सा चला आ रहा था, और शमदाम के पीछे थे दो और सिपाही।

सुलतान दूधिया पर्वत-माला के सबसे अधिक शक्तिशाली और दूर तक विख्यात शासकों में से एक था। वह क्षण भर के लिये द्वार पर रुका और उसने अन्दर एकत्रित व्यक्तियों के चेहरों को ध्यानपूर्वक देखा। फिर अपनी बड़ी-बड़ी चमकती हुई आँखें मुर्शिद पर टिकाते हुए उसने बहुत नीचे तक मस्तक झुकाया और कहा:

सुलतान: प्रणाम, महात्मन्। हम उस महान् मीरदाद का अभिवादन करने आये हैं जिसकी प्रसिद्धि इन पर्वतों में दूर-दूर तक फैलती हुई हमारी दूरस्थ राजधानी में भी पहुँच गई है।

**मीरदाद:** प्रसिद्धि विदेश में द्रुतगामी रथ पर सवारी करती है; जब कि घर में वह बैसाखियों के सहारे लड़खड़ाती हुई चलती है। इस बात में मुखिया मेरे गवाह हैं। प्रसिद्धि की चंचलता पर विश्वास न करो, सुलतान।

**सुलतान:** फिर भी मधुर होती है प्रसिद्धि की चंचलता, और सुखद होता है लोगों के ओंठों पर अपना नाम अंकित करना।

**मीरदाद:** लोगों के ओंठों पर अंकित करना वैसा ही है जैसा समुद्र-तट की रेत पर नाम अंकित करना। हवाएँ और लहरें उसे रेत पर से बहा ले जायेंगी। ओंठों पर से तो उसे एक छींक ही उड़ा देगी। यदि तुम नहीं चाहते कि लोगों की छींके तुम्हें उड़ा दें तो अपना नाम उनके ओंठों पर मत छापो, बल्कि उनके हृदयों पर अंकित कर दो।

**सुलतान:** किन्तु लोगों का हृदय तो अनेक तालों में बन्द है।

**मीरदाद:** ताले चाहे अनेक हों, पर चाबी एक है।

**सुलतान:** क्या आपके पास है वह चाबी? क्योंकि मुझे उसकी बहुत सख्त ज़रूरत है।

**मीरदाद:** वह तुम्हारे पास भी है।

**सुलतान:** अफ़सोस! आप मेरा मूल्य मेरी योग्यता से कहीं अधिक लगा रहे हैं। मैं लम्बे समय से खोज रहा हूँ वह चाबी जिससे अपने पड़ोसी के हृदय में प्रवेश पा सकूँ, परन्तु वह मुझे कहीं नहीं मिली। वह एक शक्तिशाली सुलतान है और मुझसे युद्ध करने पर उतारू है। अपने शान्ति-प्रिय स्वभाव के बावजूद मैं उसके विरुद्ध हथियार उठाने के लिये विवश हूँ। मुर्शिद, मेरे मुकुट और मोतियों-जड़े वस्त्रों के धोखे में न आयें। जिस चाबी की मुझे तलाश है वह मुझे इनमें नहीं मिल रही है।

**मीरदाद:** ये वस्तुएँ चाबी को छिपा तो देती हैं, पर उसे अपने पास नहीं रखतीं। ये तुम्हारे द्वारा उठाये गए कदम को जकड़ देती हैं, तुम्हारे हाथ को रोक लेती हैं, तुम्हारी दृष्टि को लक्ष्य-भ्रष्ट कर देती हैं, और इस प्रकार तुम्हारी तलाश को विफल कर देती हैं।

**सुलतान:** इससे मुर्शिद का क्या अभिप्राय है? मुझे अपने मुकुट और राजसी वस्त्रों को फेंक देना होगा ताकि मुझे अपने पड़ोसी के हृदय में प्रवेश पाने की चाबी मिल जाये?

**मीरदाद:** इन्हें रखना है तो तुम्हें अपने पड़ोसी को खोना होगा; अपने पड़ोसी को रखना है तो तुम्हें इन्हें खोना होगा। और अपने पड़ोसी को खोना अपने आपको खो देना है।

**सुलतान:** मैं अपने पड़ोसी की मित्रता इतनी बड़ी कीमत पर नहीं खरीदना चाहता।

**मीरदाद:** क्या तुम इस ज़रा-सी कीमत पर भी अपने आपको नहीं खरीदना चाहते?

**सुलतान:** अपने आपको खरीदूँ? मैं कोई कैदी नहीं हूँ कि रिहाई की कीमत दूँ। और इसके अतिरिक्त मेरी रक्षा के लिये मेरे पास सेना है जिसे अच्छा वेतन दिया जाता है और जिसके पास पर्याप्त युद्ध-सामग्री है। मेरा पड़ोसी अपने पास इससे उत्तम सेना होने का दावा नहीं कर सकता।

**मीरदाद:** एक व्यक्ति या वस्तु का बन्दी होना ही असहनीय कारावास है। मनुष्यों की एक विशाल सेना, और कई वस्तुओं के समूह का बन्दी होना तो अन्तहीन देश-निकाला है। क्योंकि किसी वस्तु पर निर्भर होना उस वस्तु का बन्दी बनना है। इसलिए केवल प्रभु पर निर्भर रहो, क्योंकि प्रभु का बन्दी होना निःसन्देह स्वतन्त्र होना है।

**सुलतान:** तो क्या मैं अपने आपको, अपने सिंहासन को, अपनी प्रजा को असुरक्षित छोड़ दूँ?

**मीरदाद:** अपने आपको असुरक्षित न छोड़ो।

**सुलतान:** इसी लिये तो मैं सेना रखता हूँ।

**मीरदाद:** इसी लिये तो तुम्हें अपनी सेना को भंग कर देना चाहिये।

**सुलतान:** परन्तु तब मेरा पड़ोसी तुरन्त मेरे राज्य को रौंद डालेगा।

**मीरदाद:** तुम्हारे राज्य को वह रौंद सकता है, लेकिन तुम्हें कोई नहीं निगल सकता। दो कारागार मिलकर एक हो जायें तो भी वे स्वतन्त्रता के लिये एक छोटा-सा घर नहीं बन जाते। यदि कोई मनुष्य तुम्हें तुम्हारे कारागार में से निकाल दे तो खुशी मनाओ; परन्तु उस व्यक्ति से ईर्ष्या न करो जो खुद तुम्हारे कारागार में बन्द होने के लिये आ जाये।



**सुलतान:** मैं एक ऐसे कुल की सन्तान हूँ जो रण-भूमि में अपनी वीरता के लिये विख्यात है। हम दूसरों को युद्ध के लिये कभी विवश नहीं करते। किन्तु जब हमें युद्ध के लिये विवश किया जाता है तो हम कभी पीछे नहीं हटते, और शत्रु की लाशों पर ऊँची विजय-पताकाएँ लहराये बिना रण-भूमि से विदा नहीं लेते। आपकी सलाह कि मैं अपने पड़ोसी को मनमानी करने दूँ, उचित सलाह नहीं है।

**मीरदाद:** क्या तुमने कहा नहीं था कि तुम शान्ति चाहते हो?

**सुलतान:** हाँ शान्ति तो मैं चाहता हूँ।

**मीरदाद:** तो युद्ध मत करो।

**सुलतान:** पर मेरा पड़ोसी मुझसे युद्ध करने पर तुला हुआ है; और मुझे उससे युद्ध करना ही पड़ेगा ताकि हमारे बीच शान्ति स्थापित हो सके।

**मीरदाद:** तुम अपने पड़ोसी को इसलिये मार डालना चाहते हो कि उसके साथ शान्तिपूर्वक जी सको! कैसी विचित्र बात है! मुर्दों के साथ शान्तिपूर्वक जीने में कोई खूबी नहीं; खूबी तो है उनके साथ शान्तिपूर्वक जीने में जो ज़िन्दा है। यदि तुम्हें किसी ऐसे ज़िन्दा मनुष्य या वस्तु से युद्ध करना ही है जिसकी रुचि और हित तुम्हारी रुचि और हित से कभी-कभी टकराते हैं, तो युद्ध करो उस प्रभु से जो इनको अस्तित्व में लाया है। और युद्ध करो संसार से; क्योंकि उसके अन्दर ऐसी अनगिनत वस्तुएँ हैं जो तुम्हारे मन को व्याकुल करती हैं, तुम्हारे हृदय को पीड़ा पहुँचाती हैं, और अपने आपको ज़बरदस्ती तुम्हारे जीवन पर थोपती हैं।

**सुलतान:** यदि मैं अपने पड़ोसी के साथ शान्तिपूर्वक रहना चाहूँ पर वह युद्ध करना चाहे, तो मैं क्या करूँ?

**मीरदाद:** युद्ध करो।

**सुलतान:** अब आप मुझे ठीक सलाह दे रहे हैं।

**मीरदाद:** हाँ, युद्ध करो, परन्तु अपने पड़ोसी से नहीं। युद्ध करो उन सब वस्तुओं से जो तुम्हें और तुम्हारे पड़ोसी को आपस में लड़ाती हैं।

तुम्हारा पड़ोसी तुमसे क्यों लड़ना चाहता है? क्या इसलिये कि तुम्हारी आँखें नीली हैं और उसकी भूरी? क्या इसलिये कि तुम फ़रिश्तों के सपने

देखते हो और वह शैतान के ? या इसलिये कि तुम उससे ऐसे प्यार करते हो मानो तुममें और उसमें कोई भेद नहीं, और जो कुछ तुम्हारा है वह तुम उसी का समझते हो ?

सुलतान, तुम्हारा पड़ोसी तुमसे लड़ना चाहता है तुम्हारे राजसी वस्त्रों के लिये, तुम्हारे सिंहासन, तुम्हारी सम्पत्ति और तुम्हारे प्रताप के लिये, और उन सब वस्तुओं के लिये जिनके तुम बन्दी हो।

क्या तुम उसके विरुद्ध शस्त्र उठाये बिना उसे पराजित करना चाहोगे ? तो इससे पहले कि वह तुमसे युद्ध छेड़े, तुम स्वयं ही इन सब वस्तुओं के विरुद्ध युद्ध की घोषणा कर दो। जब तुम अपनी आत्मा को इनके शिकंजे से छुड़ाकर इन पर विजय पा लोगे; जब तुम इन्हें बाहर कूड़े के ढेर पर फेंक दोगे, सम्भव है कि तब तुम्हारा पड़ोसी अपने क्रदम थाम ले, और अपनी तलवार वापस म्यान में रख ले और अपने आपसे कहे, “यदि ये वस्तुएँ इस योग्य होतीं कि इनके लिये युद्ध किया जाये, तो मेरा पड़ोसी इन्हें कूड़े के ढेर पर न फेंक देता।”

यदि तुम्हारा पड़ोसी अपना पागलपन न छोड़े और उस कूड़े के ढेर को उठाकर ले जाये, तो ऐसे घृणित बोझ से अपनी मुक्ति पर खुशी मनाओ, लेकिन अपने पड़ोसी के दुर्भाग्य पर अफ़सोस करो।

**सुलतान:** मेरे मान का, मेरी इज्जत का क्या होगा जो मेरी सारी सम्पत्ति से कहीं अधिक मूल्यवान है ?

**मीरदाद:** मनुष्य का मान केवल मनुष्य बना रहने में है—मनुष्य जो कि प्रभु का जीता-जागता प्रतिबिम्ब और प्रतिरूप है। बाक़ी सब मान तो अपमान ही है।

मनुष्यों द्वारा प्रदान किये गए सम्मान को मनुष्य आसानी से छीन लेते हैं। तलवार से लिखे गए मान को तलवार आसानी से मिटा देती है। कोई भी मान इस लायक नहीं कि उसके लिये जंग लगा तीर भी चलाया जाये, तप्त आँसू बहाना या रक्त की एक भी बूँद गिराना तो दूर रहा।

**सुलतान:** और स्वतन्त्रता, मेरी और मेरी प्रजा की स्वतन्त्रता, क्या बड़े से बड़े बलिदान के लायक नहीं ?



**मीरदाद:** सच्ची स्वतन्त्रता तो इस लायक है कि उसके लिये अपने अहं की बलि दे दी जाये। तुम्हारे पड़ोसी के हथियार उस स्वतन्त्रता को छीन नहीं सकते; तुम्हारे अपने हथियार उसे प्राप्त नहीं कर सकते, उसकी रक्षा नहीं कर सकते। और युद्ध का मैदान तो सच्ची स्वतन्त्रता के लिये एक क़ब्र है।

सच्ची स्वतन्त्रता हृदय में ही पाई और खोई जाती है।

क्या युद्ध चाहते हो तुम? तो अपने हृदय में अपने ही हृदय से युद्ध करो। दूर करो अपने हृदय से हर आशा को, हर भय और खोखली कामना को जो तुम्हारे संसार को एक घुटन-भरा बाड़ा बनाये हुए हैं, और तुम इसे ब्रह्माण्ड से भी अधिक विशाल पाओगो। इस ब्रह्माण्ड में तुम स्वेच्छा से विचरण करोगे, और कोई भी वस्तु बाधा नहीं बनेगी तुम्हारे मार्ग में।

केवल यही एक युद्ध है जो छेड़ने योग्य है। जुट जाओ इस युद्ध में और तब तुम्हें अन्य किसी युद्ध के लिये समय ही नहीं मिलेगा। और तब युद्ध तुम्हें घृणित पशुता तथा आसुरी दाँव-पेंच प्रतीत होने लगेंगे जिनका काम होगा तुम्हारे मन को भटकाना और तुम्हारी शक्ति को सोखना, और इस प्रकार अपने आपके विरुद्ध तुम्हारे महायुद्ध में, जो वास्तव में धर्म-युद्ध है, तुम्हारी पराजय का कारण बनना। इस युद्ध को जीतने का अर्थ है अनन्त जीवन को पाना, किन्तु अन्य किसी भी युद्ध में विजय पूर्ण पराजय से भी बुरी होती है। और मनुष्य के हर युद्ध का भयानक पक्ष यही है कि विजेता और पराजित दोनों के पल्ले पराजय ही पड़ती है।

क्या शान्ति चाहते हो तुम? तो मत खोजो उसे दस्तावेजों के शब्द-जाल में; और मत प्रयत्न करो उसे चट्टानों पर अंकित करने में।

क्योंकि जो लेखनी आसानी से शान्ति लिखती है, वह उतनी ही आसानी से युद्ध भी लिख सकती है; और जो छेनी “आओ, शान्ति स्थापित करें” खोदती है, वह उतनी ही आसानी से “आओ, युद्ध करें” भी खोद सकती है। और इसके अतिरिक्त, कागज़ और चट्टान, लेखनी और छेनी जल्दी ही कीड़े, गलन, जंग और प्रकृति के परिवर्तन लानेवाले तत्त्वों का शिकार हो जाते हैं। किन्तु मनुष्य के काल-मुक्त हृदय की बात अलग है। वह तो दिव्य ज्ञान के बैठने का सिंहासन है।



जब एक बार दिव्य ज्ञान का प्रकाश हो जाता है, तो युद्ध तुरन्त जीत लिया जाता है और हृदय में स्थायी शान्ति स्थापित हो जाती है। ज्ञानवान् हृदय युद्ध-त्रस्त संसार में रहते हुए भी सदा शान्त रहता है।

अज्ञानी हृदय द्वैतपूर्ण होता है। द्वैतपूर्ण हृदय का परिणाम होता है विभाजित संसार, और विभाजित संसार जन्म देता है निरन्तर संघर्ष और युद्ध को।

ज्ञानवान् हृदय एकतापूर्ण होता है। एकतापूर्ण हृदय का परिणाम होता है एक संसार, और एक संसार शान्तिपूर्ण संसार होता है, क्योंकि लड़ने के लिये दो की जरूरत होती है।

इसलिये मैं तुम्हें सलाह देता हूँ कि अपने हृदय को एकतापूर्ण बनाने के लिये उसी के विरुद्ध युद्ध करो। विजय का पुरस्कार होगा स्थायी शान्ति।

ऐ सुलतान, जब तुम हर शिला में सिंहासन देख सकोगे, और हर गुफा में दुर्ग पा सकोगे, तब सूर्य तुम्हारा सिंहासन और तारामण्डल तुम्हारे दुर्ग बनकर बहुत प्रसन्न होंगे।

जब खेत में उगा डेज़ी का हर नन्हा फूल तुम्हारे लिए पदक बनने योग्य होगा; और हर कीड़ा तुम्हारा शिक्षक बनने के योग्य, तब सितारे तुम्हारे वक्ष पर सुशोभित होकर प्रसन्न होंगे, और धरती तुम्हारा उपदेश-मंच बनने के लिये तैयार होगी।

जब तुम अपने हृदय पर शासन कर सकोगे, तब इससे तुम्हें क्या फ़र्क़ पड़ेगा कि तुम्हारे शरीर पर किसका शासन है? जब सारा ब्रह्माण्ड तुम्हारा होगा, तो इससे तुम्हें क्या फ़र्क़ पड़ेगा कि धरती के किसी टुकड़े पर किसका प्रभुत्व है?

सुलतान: आपके शब्द काफ़ी लुभावने हैं। फिर भी मुझे लगता है कि युद्ध प्रकृति का नियम है। क्या समुद्र की मछलियाँ भी निरन्तर लड़ती नहीं रहती? क्या दुर्बल बलवान् का शिकार नहीं होता? पर मैं किसी का शिकार नहीं बनना चाहता।

मीरदाद: जो तुम्हें युद्ध प्रतीत होता है वह अपना पेट भरने और, अपना विस्तार करने का प्रकृति का केवल एक ढंग है। बलवान् को उसी

प्रकार दुर्बल के लिये आहार बनाया गया है जिस प्रकार दुर्बल को बलवान् के लिये। और फिर, प्रकृति में कौन बलवान् है और कौन दुर्बल?

केवल प्रकृति ही बलवान् है; अन्य सभी तो निर्बल जीव हैं जो प्रकृति की इच्छा का पालन करते हैं और चुपचाप मृत्यु की धारा में बहे चले जाते हैं।

केवल मृत्यु से मुक्त जीवों को बलवान् का दर्जा दिया जा सकता है। और मनुष्य, ऐ सुलतान, मृत्यु-मुक्त है। हाँ, प्रकृति से अधिक शक्तिशाली है मनुष्य। वह केवल इसलिये समृद्ध प्रकृति का शोषण करता है कि अपने अभावों की पूर्ति कर सके। वह केवल इसलिये सन्तान के माध्यम से अपना विस्तार करता है कि अपने आपको ऐसे विस्तार से ऊपर उठा सके।

जो मनुष्य पशु की स्वच्छ मूल-प्रवृत्तियों का उल्लेख करके अपनी दूषित कामनाओं को उचित सिद्ध करना चाहते हैं, उन्हें अपने आपको जंगली सूअर, या भेड़िये या गीदड़ या और कुछ भी कह लेने दो; परन्तु उन्हें मनुष्य के श्रेष्ठ नाम को दूषित मत करने दो।

मीरदाद पर विश्वास करो सुलतान, और शान्ति प्राप्त करो।

**सुलतान:** मुखिया ने मुझे बताया है कि मीरदाद जादू-टोने के रहस्यों का अच्छा ज्ञाता है, और मैं चाहता हूँ कि वह अपनी कुछ शक्तियों का प्रदर्शन करे ताकि मैं उन पर विश्वास कर सकूँ।

**मीरदाद:** यदि मनुष्य के अन्दर प्रभु को प्रकट करना जादू-टोना है तो मीरदाद जादूगर है। क्या तुम मेरे जादू का कोई प्रमाण और कोई प्रदर्शन चाहते हो?

तो देखो, मैं ही प्रमाण और प्रदर्शन हूँ।

अब जाओ। जिस काम के लिये तुम आये हो वह करो।

**सुलतान:** ठीक अनुमान लगाया है तुमने कि मुझे तुम्हारी सनकी बातों से अपने कान बहलाने के अलावा और भी काम हैं। क्योंकि बेसार का सुलतान एक दूसरी तरह का जादूगर है; और अपने कौशल का वह अभी प्रदर्शन करेगा।

(अपने आदमियों से) अपनी जंजीरें लाओ और इस प्रभु-मनुष्य या मनुष्य-प्रभु के हाथ-पैर बाँध दो। आओ, दिखा दें इसे तथा यहाँ उपस्थित व्यक्तियों को कि हमारा जादू कैसा है।

**नरौंदा:** हिंसक पशुओं की तरह चार सिपाही मुर्शिद पर झपटे और झट उनके हाथों और पैरों को जंजीरों से बाँधने लगे। क्षण भर के लिये सातों साथी स्तब्ध बैठे रहे; उनकी समझ में नहीं आ रहा था कि उनके सामने जो हो रहा है उसे मज़ाक समझें या गम्भीर घटना। मिकेयन तथा ज़मोरा ने उस अप्रिय स्थिति की गम्भीरता को बाक़ी साथियों से पहले समझ लिया। दो क्रोधित सिंहों की तरह वे सिपाहियों पर टूट पड़े; और यदि मुर्शिद की रोकती और धैर्य बँधाती आवाज़ उन्हें सुनाई न देती तो उन्होंने सिपाहियों को पछाड़ दिया होता।

**मीरदाद:** इन्हें अपने कौशल का प्रयोग कर लेने दो, उतावले मिकेयन। इन्हें अपनी इच्छा पूरी कर लेने दो, भले ज़मोरा। काले खड्ग से अधिक भयानक नहीं हैं इनकी जंजीरें मीरदाद के लिये। शमदाम को अपनी सत्ता पर बेसार के सुलतान की सत्ता का पैबन्द लगाने की खुशियाँ मना लेने दो। यह पैबन्द ही इन दोनों को चीर डालेगा।

**मिकेयन:** जब हमारे मुर्शिद को एक अपराधी की तरह जंजीरों से बाँधा जा रहा है तो हम एक ओर कैसे खड़े रह सकते हैं ?

**मीरदाद:** मेरे लिये तनिक भी चिन्ता न करो। शान्त रहो। ऐसा ही व्यवहार ये लोग किसी दिन तुम्हारे साथ करेंगे; परन्तु ये अपने आपको हानि पहुँचायेंगे, तुम्हें नहीं।

**सुलतान:** ऐसा ही व्यवहार किया जायेगा हर उस दुष्ट और पाखण्डी के साथ जो वैध अधिकार और सत्ता का विरोध करने का दुःसाहस करेगा।

यह धर्मात्मा (शमदाम की ओर संकेत करते हुए) इस मठ का वैध मुखिया है, और इसका वचन हर किसी के लिये क़ानून होना चाहिये। यह पवित्र नौका जिसकी उदारता का तुम लाभ उठा रहे हो मेरे संरक्षण में है। मेरी चौकस दृष्टि इसकी नियति का निरीक्षण करती है; मेरी शक्तिशाली भुजा इसकी छत और सम्पत्ति के ऊपर फैली हुई है; काट देगी मेरी तलवार



उस हाथ को जो इसे नुकसान पहुँचाने की कोशिश करेगा। यह सब समझ लें और सावधान रहें।

(अपने आदमियों से) बाहर ले चलो इस दुष्ट को। इसके खतरनाक सिद्धान्त ने नौका को बरबादी के कगार पर पहुँचा दिया है। यदि इसे अपने विनाशकारी रास्ते पर चलने दिया गया तो शीघ्र ही यह हमारे राज्य और इस धरती दोनों को नष्ट कर देगा। अब से मीरदाद को अपना उपदेश बेसार की कालकोठरी की निष्ठुर दीवारों को ही देने दो। ले जाओ इसे यहाँ से।

नरौंदा: सिपाही मुर्शिद को बाहर ले गये, और सुलतान तथा शमदाम खुशी से अकड़ते हुए उनके पीछे चल पड़े। सातों साथी इस अमंगल-सूचक जुलूस के पीछे-पीछे चल रहे थे; उनकी आँखें मुर्शिद का पीछा कर रही थीं, वेदना ने उनके ओंठ सी दिये थे, उनके हृदय आँसुओं से फट रहे थे।

मुर्शिद के कदम स्थिर और दृढ़ थे, और उनका मस्तक ऊँचा उठा हुआ था। थोड़ी दूर चलकर उन्होंने मुड़कर हमारी ओर देखा और कहा:

**मीरदाद:** मीरदाद में अपना विश्वास अडिग रखना। जब तक मैं अपनी नौका को जल में न उतार दूँ और उसका नेतृत्व तुम्हें न सौंप दूँ, तुम्हें छोड़कर नहीं जाऊँगा।

नरौंदा: और उसके बाद मुर्शिद के शब्द देर तक ऊँचे स्वर में हमारे कानों में गूँजते रहे और जंजीरों की बोझिल झनझनाहट उनकी संगत करती रही।

शमदाम साथियों को मनाकर  
अपने साथ मिलाने का  
असफल यत्न करता है  
मीरदाद चमत्कारपूर्ण ढंग से लौटता है और  
शमदाम के अतिरिक्त सब साथियों को  
विश्वास का चुम्बन प्रदान करता है

नरौंदा: जाड़े ने हमें आ दबोचा था, बहुत सख्त, बर्फीले, कँपा देनेवाले जाड़े ने।

खामोश, साँस रोके खड़े थे बर्फ में लिपटे पहाड़। केवल नीचे वादियों में दिखाई देते थे मुरझाई हरियाली के खण्ड और, कहीं-कहीं, बल खाती सागर की ओर बही जा रही तरल चाँदी की कोई रेखा।

सातों साथी कभी आशा की तो कभी सन्देह की लहरों के थपेड़े खा रहे थे। मिकेयन, मिकास्तर तथा ज़मोरा इस आशा का दामन थामे हुए थे कि मुर्शिद अपने वचन के अनुसार लौट आयेंगे। बैनून, हिम्बल तथा अबिमार मुर्शिद के लौटने के बारे में अपने सन्देह को पकड़े बैठे थे। किन्तु सब एक भयानक खालीपन तथा वेदनापूर्ण निरर्थकता का अनुभव कर रहे थे।

नौका शीत-ग्रस्त थी; निष्ठुर और स्नेहहीन। उसकी दीवारों पर एक बर्फीली खामोशी छाई हुई थी, यद्यपि शमदाम उसमें जीवन तथा उत्साह का संचार करने का भरपूर प्रयास कर रहा था। क्योंकि जब मीरदाद को ले जाया गया तब से शमदाम दया के द्वारा हमें वश में करने की कोशिश कर रहा था। उसने हमारे आगे बढ़िया से बढ़िया भोजन परोसा तथा मदिरा

रखी, परन्तु न उस भोजन से हमें शक्ति प्राप्त हुई, न उस मदिरा से स्फूर्ति। उसने ढेरों लकड़ी और कोयला जलाया; लेकिन वह आग हमें गरमाहट नहीं दे सकी। शमदाम बहुत नम्रता के साथ पेश आ रहा था और उसका व्यवहार स्नेहपूर्ण लगता था; पर उसकी नम्रता और स्नेह ने हमें उससे और अधिक दूर कर दिया।

बहुत समय तक उसने मुर्शिद की कोई चर्चा नहीं की। लेकिन आखिर उसने अपने हृदय की बात बताते हुए कहा।

शमदाम: मेरे साथियो, यदि तुम समझते हो कि मैं मीरदाद से घृणा करता हूँ तो तुम मेरे साथ अन्याय कर रहे हो। मुझे तो सच्चे दिल से उस पर दया आती है।

मीरदाद एक बुरा व्यक्ति भले ही न हो लेकिन वह एक खतरनाक आदर्शवादी है, और जिस सिद्धान्त का वह इस ठोस वास्तविकता और व्यावहारिकता के जगत् में प्रचार कर रहा है, वह सर्वथा अव्यावहारिक और झूठा है। निष्ठुर यथार्थ के साथ अपने प्रथम साक्षात्कार में ही उसका तथा उसके अनुयायियों का दुःखद अन्त निश्चित है। इसका मुझे पूरा विश्वास है। और मैं अपने साथियों को ऐसे अनर्थ से बचाना चाहता हूँ।

यौवन के उतावलेपन से प्रेरित मीरदाद बातचीत में चतुर हो सकता है; किन्तु उसका हृदय अन्धा, हठी और धर्महीन है। जब कि मेरे हृदय में सच्चे प्रभु का भय है, और मेरे पास बरसों का अनुभव है जो मेरे निर्णय को महत्त्व तथा मान्यता प्रदान करता है।

गत कई वर्षों में नौका का प्रबन्ध कौन मुझसे अधिक लाभदायक ढंग से चला सकता था? क्या मैंने इतना समय तुम्हारे साथ नहीं बिताया और तुम्हारे लिये भाई और पिता दोनों नहीं बना रहा? क्या हमारे हृदय को शान्ति का और हमारे हाथों को प्रचुर समृद्धि का वरदान नहीं मिला? जिसका हम इतने समय से निर्माण करते आ रहे हैं वह सब एक अजनबी को क्यों नष्ट करने दिया जाये? और जहाँ विश्वास का प्रभुत्व था वहाँ उसे अविश्वास का, तथा जहाँ शान्ति का राज्य था वहाँ उसे कलह का बीज क्यों बोने दिया जाये?



हाथ आये एक पक्षी को वृक्ष पर बैठे दस पक्षियों की आशा में छोड़ देना निरा पागलपन है, मेरे साथियो। मीरदाद तुमसे इस नौका को छुड़वा देना चाहता है जिसने तुम्हें बरसों शरण दी है, परमात्मा के निकट रखा है, तुम्हें वह सबकुछ दिया है जिसकी मनुष्य कामना कर सकते हैं, और जिसने संसार की अशान्ति तथा व्यथाओं से तुम्हें बचाये रखा है। बदले में वह तुम्हें क्या देने का वादा करता है? मनोवेदना, निराशा तथा निर्धनता, और ऊपर से सदा के लड़ाई-झगड़े। ये सब और कई इनसे भी बुरी चीजें तुम्हें देने का वादा करता है वह।

वह हवा में, अपार शून्य में एक नौका जुटाने का वादा करता है—एक पागल का सपना, एक बचकानी कल्पना, एक मधुर असम्भावना। क्या वह माँ-नौका के संस्थापक पिता नूह से भी अधिक समझदार है? उसकी बेसिर-पैर की बातों पर विचार करने के लिये तुमसे कहते हुए मुझे बहुत दुःख हो रहा है।

मीरदाद के विरुद्ध अपने मित्र बेसार के सुलतान से उसकी सशक्त भुजाओं की सहायता माँग कर मैंने नौका तथा इसकी पवित्र परम्पराओं के प्रति अपराध भले ही किया हो, किन्तु मैं तुम्हारी भलाई चाहता था, और इसी एक बात से सिद्ध हो जाना चाहिये कि मेरा अपराध उचित था। इससे पहले कि बहुत देर हो जाती, मैं तुम्हें और इस नौका को बचा लेना चाहता था। प्रभु ने मेरा साथ दिया और मैंने तुम्हें बचा लिया।

मेरे साथ खुशी मनाओ, साथियो, और प्रभु को धन्यवाद दो कि उसने हमें अपनी पापी आँखों से अपनी नौका की बरबादी देखने के बहुत बड़े कलंक से बचा दिया। कम से कम मैं तो इस कलंक के साथ जीवित नहीं रह सकता था।

किन्तु अब, मेरे प्यारे साथियो, मैं अपने आपको नये सिरे से हज़रत नूह के प्रभु तथा उनकी नौका की, और तुम्हारी सेवा में समर्पित करता हूँ। पहले की तरह प्रसन्न रहो, ताकि तुम्हारी प्रसन्नता से मेरी प्रसन्नता पूर्ण हो जाये।

नरौंदा: यह कहते-कहते शमदाम रो पड़ा। बहुत दयनीय थे उसके आँसू क्योंकि आँसू बहानेवाला वह अकेला था; उसके आँसुओं को हमारे हृदय और आँखों में कोई साथी नहीं मिल रहा था।

एक दिन प्रातःकाल, जब धुँधले मौसम की लम्बी घेराबन्दी के बाद सूर्य ने पहाड़ियों पर अपनी किरणें बिखेरी, ज़मोरा ने अपना रबाब उठाया और गाने लगा:

ज़मोरा:

अब जम गया है गाना

शीताहत होंठों पर

मेरे रबाब के।

घिर गया बर्फ़ में सपना

बर्फ़ से घिरे हृदय में

मेरे रबाब के।

है श्वास कहाँ वह तेरे

गाने को जो पिघला दे

ऐ रबाब मेरे?

है हाथ कहाँ वह तेरे

सपने को जो छुड़वा दे,

ऐ रबाब मेरे?

बेसार के तहख़ाने में।

जाओ, ऐ भिखारिन वायु,

माँग लो मेरी खातिर

इक गाना जंजीरों से

बेसार के तहख़ाने की।

जाओ, ऐ चतुर रवि-किरणो,

चुरा लाओ मेरी खातिर

इक सपना जंजीरों से

बेसार के तहख़ाने की।

पंख गरुड़ का मेरे  
छाया था पूरे नभ पर,  
उसके नीचे मैं राजा।  
अब हूँ अनाथ इक केवल  
और परित्यक्त इक बालक,  
है नभ पर राज उलूक का,  
क्योंकि उड़ गया गरुड़ है  
बहुत दूर एक नीड़ को—  
बेसार के तहखाने को।

नरौंदा: ज़मोरा के हाथ शिथिल हो गये, सिर रबाब पर झुक गया और उसकी आँख से एक आँसू टपक पड़ा। उस आँसू ने हमारी दबी हुई वेदना के बाँध को तोड़ दिया और हमारी आँखों से आँसुओं की धारा बह चली।

मिकेयन सहसा उठकर खड़ा हो गया, और ऊँचे स्वर में यह कहते हुए कि मेरा दम घुट रहा है वह तेज़ी से बाहर खुली हवा में चला गया। ज़मोरा, मिकास्तर तथा मैं उसके पीछे-पीछे आँगन में से होते हुए बाहर की बड़ी चारदीवारी के द्वार तक पहुँच गये जिससे आगे बढ़ने का साहस करने की अनुमति साथियों को नहीं थी। मिकेयन ने एक जोरदार झटके के साथ भारी अर्गला को खींच लिया, धक्का देकर द्वार खोल दिया, और पिंजरे से भागे बाघ की तरह बाहर निकल गया। अन्य तीनों भी मिकेयन के पीछे-पीछे बाहर चले आये।

सूर्य में सुहावनी गर्मी और चमक थी, और उसकी किरणें जमी हुई बर्फ से टकराते हुए मुड़कर अपनी चमक से हमारी आँखों को चकाचौंध कर रही थीं। जहाँ तक दृष्टि पहुँचती थी, बर्फ से ढकी ऊँची-नीची वृक्ष-रहित पहाड़ियाँ हमारे सामने फैली हुई थीं। लगता था मानो सबकुछ प्रकाश के विलक्षण रंगों से प्रदीप्त है। चारों ओर गहरी खामोशी छाई हुई थी जो कानों में चुभ रही थी, केवल हमारे पैरों के नीचे चरमरा रही बर्फ उस खामोशी के जादू को तोड़ रही थी। हवा यद्यपि शरीर को बेध रही थी,



फिर भी हमारे फेफड़ों को इस तरह दुलार रही थी कि हमें लग रहा था हम अपनी ओर से कोई यत्न किये बिना ही उड़े जा रहे हैं।

और तो और, मिकेयन की मनोदशा भी बदल गई। वह रुक कर ऊँची आवाज़ में बोला, “कितना अच्छा लगता है साँस ले सकना। आह, केवल साँस ले सकना!” और सचमुच ऐसा लगा कि हमने पहली बार स्वतन्त्रता से साँस लेने का आनन्द पाया है और साँस के अर्थ को जाना है।

हम थोड़ी दूर चले थे कि मिकास्तर को दूर ऊँचे टीले पर एक काली छाया-सी दिखाई दी। हममें से कुछ ने सोचा कि यह कोई अकेला भेड़िया है; कुछ को लगा कि यह एक चट्टान है जिसे ऊपर पड़ी बर्फ को उड़ाकर हवा ने नंगा कर दिया है। पर वह छाया हमारी ओर आती लग रही थी; हमने उसकी दिशा में चलने का निश्चय किया। वह हमारे निकट, और निकट, आती गई और धीरे-धीरे उसने मानवीय आकार धारण कर लिया। अचानक मिकेयन ने आगे की ओर एक लम्बी छलाँग लगाते हुए जोर से कहा, “ये तो वही हैं। ये तो वही हैं!”

और वे थे भी वही—उन्हीं की मनमोहक चाल, उन्हीं की गौरवशाली मुद्रा, उन्हीं का गरिमामय उन्नत मस्तक। इठलाती वायु उनके लहराते वस्त्रों से आँख-मिचौली खेल रही थी और अल्हड़पन के साथ उनकी लम्बी, काली लटों को छेड़ रही थी। धूप ने उनके चेहरे के कोमल पुखराज-से उज्ज्वल बादामी रंग को कुछ अपनी रंगत दे दी थी; परन्तु उनके काले, स्वप्नदर्शी, सदा की तरह ज्योतिर्मय नेत्रों से गम्भीर शान्ति और विजयी प्रेम की लहरें प्रवाहित हो रही थीं। उनके खड़ाऊँ पहने सुकोमल चरणों को पाले ने अपने चुम्बनों से गहरे गुलाबी रंग में रँग दिया था।

मिकेयन उनके पास सबसे पहले पहुँचा। सिसकते तथा हँसते हुए वह उनके चरणों में गिर पड़ा और बेसुधी की-सी दशा में बड़बड़ाया, “मेरी आत्मा मुझे वापस मिल गई।”

अन्य तीनों भी उनके चरणों में गिर पड़े। मुर्शिद ने उन्हें एक-एक करके उठाया, असीम प्यार से हरएक को गले लगाया और कहा:

**मीरदाद:** विश्वास का चुम्बन ग्रहण करो। अब से तुम विश्वास में सोओगे और विश्वास में जाओगे; सन्देह तुम्हारे तकिये में बसेरा नहीं करेगा, और न ही तुम्हारे क्रदमों को अनिश्चय के द्वारा जकड़ेगा।

**नरौंदा:** जो चार साथी नौका में रह गये थे, उन्होंने जब मुर्शिद को द्वार पर देखा तो पहले तो समझे कि कोई साया है और डर गये। पर जब मुर्शिद ने एक-एक को नाम लेकर पुकारा, और उन्होंने मुर्शिद की आवाज़ सुनी तो वे तुरन्त आगे बढ़कर उनके चरणों में गिर गये; केवल शमदाम अपने आसन से चिपका रहा। मुर्शिद उन तीनों से भी वैसे ही प्रेमपूर्वक मिले जैसे पहले चार साथियों से मिले थे और उनसे भी वही शब्द कहे।

शमदाम शून्य दृष्टि से देखता रहा। वह सिर से पैर तक काँप रहा था। उसका चेहरा मुर्दे जैसा पीला पड़ गया था, उसके ओंठ फड़क रहे थे और उसके हाथ निरुद्देश्य उसके कमरबन्द को टटोल रहे थे। अचानक वह अपने आसन से सरका और हाथों तथा पैरों के बल रेंगते हुए वहाँ जा पहुँचा जहाँ मुर्शिद खड़े थे। उसने मुर्शिद के पैरों को अपनी बाँहों में ले लिया और ज़मीन की तरफ मुँह किये व्याकुलता के साथ कहा, “मुझे भी विश्वास है।” मुर्शिद ने उसे भी उठाया, लेकिन उसे चूमे बिना कहा:

**मीरदाद:** यह भय है जो शमदाम के भारी-भरकम शरीर को कँपा रहा है और उससे कहलवा रहा है, “मुझे भी विश्वास है।”

शमदाम उस जादू के सामने काँप रहा है और सिर झुका रहा है जिसने मीरदाद को काले खड्ड तथा बेसार की कालकोठरी से बाहर निकाल दिया। और शमदाम को डर है कि उससे बदला लिया जायेगा। इस बारे में उसे निश्चिन्त रहना चाहिये और अपने हृदय को सच्चे विश्वास की दिशा में मोड़ना चाहिये।

वह विश्वास जो भय की लहरों पर उठता है, भय का झाग-मात्र होता है; वह भय के साथ उठता है और उसी के साथ बैठ जाता है। सच्चा विश्वास प्रेम की टहनी पर ही खिलता है, और कहीं नहीं। उसका फल होता है दिव्य ज्ञान। अगर तुम्हें प्रभु से डर लगता है तो प्रभु पर विश्वास मत करो।



**शमदाम:** (पीछे हटते हुए आँखें निरन्तर फ़र्श पर गड़ाये हुए) अपने ही घर में अनाथ और बहिष्कृत है शमदाम। कम से कम एक दिन के लिये तो मुझे आपका सेवक बनने और आपके लिये कुछ भोजन तथा कुछ गर्म कपड़े लाने की अनुमति दें, क्योंकि आपको बहुत भूख लगी होगी और ठण्ड सता रही होगी।

**मीरदाद:** मेरे पास वह भोजन है जिससे रसोईघर अनजान है; और वह गरमाहट है जो ऊन के धागों या आग की लपटों से उधार नहीं ली जा सकती। काश, शमदाम ने अपने भण्डार में यह भोजन और यह गरमाहट अधिक तथा अन्य खाद्य-सामग्री और ईंधन कम रखे होते।

देखो, समुद्र पर्वत-शिखरों पर शीतकाल बिताने आया है। शिखर जमे हुए समुद्र को कोट के समान पहन कर प्रसन्न हो रहे हैं, और अपने कोट में गरमाहट महसूस कर रहे हैं।

प्रसन्न है समुद्र भी कुछ समय के लिये शिखरों पर इतना शान्त, इतना मन्त्रमुग्ध हो लेटने में, लेकिन कुछ समय के लिये ही। क्योंकि बसन्त अवश्य आयेगा, और समुद्र शीतकाल में निष्क्रिय पड़े सर्प की तरह अपनी कुण्डली खोलेगा तथा अस्थायी तौर पर गिरवी रखी अपनी स्वतन्त्रता वापस ले लेगा। एक बार फिर वह एक तट से दूसरे तट की ओर लहरायेगा; एक बार फिर वह हवा पर सवार होकर आकाश की सैर करेगा, और जहाँ चाहेगा फुहार के रूप में अपने आपको बिखेर देगा।

किन्तु तुम जैसे लोग भी हैं, जिनका जीवन एक अन्तहीन शीतकाल और गहरी दीर्घ-निद्रा है। ये वे लोग हैं जिन्हें अभी तक बसन्त के आगमन का कोई संकेत नहीं मिला। देखो, मीरदाद वह संकेत है। जीवन का संकेत है मीरदाद, मृत्यु का सन्देश नहीं। तुम और कब तक गहरी नींद सोते रहोगे?

विश्वास करो, शमदाम, जो ज़िन्दगी लोग जीते हैं और जो मौत वे मरते हैं, दोनों ही दीर्घ-निद्रा हैं। और मैं लोगों को उनकी नींद से जगाने और उनकी गुफाओं और बिलों से निकालकर उन्हें अमर जीवन की स्वतन्त्रता में ले जाने के लिये आया हूँ। मुझ पर विश्वास करो, मेरी खातिर नहीं, तुम्हारी अपनी खातिर।



**नरौंदा:** शमदाम निश्चल खड़ा रहा, उसने अपना मुँह नहीं खोला। बैनून ने मेरे कान में कहा कि मुर्शिद से पूछो वे बेसार की कालकोठरी से निकल आने में कैसे सफल हुए; पर मेरी ज़बान यह प्रश्न पूछने के लिये मेरी आज्ञा मानने को तैयार न हुई। लेकिन मुर्शिद ने तुरन्त ही हमारे अनपूछे प्रश्न का उत्तर दिया।

**मीरदाद:** बेसार का बन्दीगृह अब बन्दीगृह नहीं रहा, एक पूजा-स्थल बन गया है। बेसार का सुलतान भी अब सुलतान नहीं रहा। आज वह तुम्हारी तरह सत्य का खोजी यात्री है।

किसी अँधेरी कालकोठरी को भी एक उज्ज्वल प्रकाश-स्तम्भ में बदला जा सकता है, बैनून। किसी अभिमानी सुलतान को भी सत्य के मुकुट के सामने अपना मुकुट त्यागने के लिये प्रेरित किया जा सकता है। और क्रुद्ध जंजीरों से भी दिव्य संगीत उत्पन्न किया जा सकता है। दिव्य ज्ञान के लिये कोई काम चमत्कार नहीं। चमत्कार तो दिव्य ज्ञान स्वयं है।

**नरौंदा:** बेसार के सुलतान के राज्य-त्याग के बारे में मुर्शिद के शब्द शमदाम पर बिजली बनकर गिरे; और उसे अचानक एक ऐसी विचित्र तथा जोर की ऐंठन ने जकड़ लिया कि हम उसकी जान के बारे में गम्भीर रूप से आशंकित हो उठे। ऐंठन का अन्त मूर्च्छा में हुआ और बहुत देर के परिश्रम के बाद ही हम उसे होश में ला सके।

## मुर्शिद मिकेयन का स्वप्न सुनाते हैं

नरौंदा: मुर्शिद के बेसार से लौटने से पहले और इसके बाद काफ़ी समय तक हमने मिकेयन को एक मुसीबत में पड़े व्यक्ति की तरह आचरण करते देखा। अधिकतर वह अलग रहता, न कुछ बोलता, न खाता और कम ही अपनी कोठरी से बाहर निकलता। अपना भेद वह मुझे भी नहीं बता रहा था। और हम सब चकित थे कि मुर्शिद उसे बहुत चाहते हैं, फिर भी वे सकी पीड़ा को कम करने के लिये न कुछ कह रहे हैं न कुछ कर रहे हैं।

एक दिन जब मिकेयन तथा बाक्री साथी अँगूठी के चारों ओर बैठे आग ताप रहे थे, मुर्शिद ने निज घर के लिये महाविरह के विषय में प्रवचन आरम्भ किया।

**मीरदाद:** एक बार किसी ने एक सपना देखा। और वह सपना यह था: उसने अपने आपको एक चौड़ी, गहरी खामोशी से बहती नदी के हरे-भरे तट पर खड़े देखा। तट हर आयु के और हर बोली बोलनेवाले स्त्री-पुरुषों और बच्चों के विशाल समूहों से भरा हुआ था। सबके पास अलग-अलग नाप तथा रंग के पहिये थे जिन्हें वे तट पर ऊपर और नीचे की ओर ठेल रहे थे। ये जनसमूह शोख रंगों के वस्त्र पहने हुए थे और मौज मनाने तथा खाने-पीने के लिये निकले थे। उनके कोलाहल से वातावरण गूँज रहा था। अशान्त सागर की लहरों की तरह वे ऊपर-नीचे, आगे-पीछे आ-जा रहे थे।

वही एक ऐसा व्यक्ति था जो दावत के लिये सजा-सँवरा नहीं था, क्योंकि उसे किसी दावत की जानकारी नहीं थी। और केवल उसी के पास ठेलने के लिये कोई पहिया नहीं था। उसने बड़े ध्यान से सुनने का यत्न

किया, पर उस बहुभाषी भीड़ से वह एक भी ऐसा शब्द नहीं सुन पाया जो उसकी अपनी बोली से मिलता हो। उसने बड़े ध्यान से देखने का यत्न किया, पर उसकी दृष्टि एक भी ऐसे चेहरे पर नहीं अटकी जो उसका जाना-पहचाना हो। इसके अतिरिक्त, भीड़ जो उसके चारों ओर उमड़ रही थी उसकी ओर अर्थ-भरी नज़रें डाल रही थी मानो कह रही हो, “यह विचित्र व्यक्ति कौन है?” फिर अचानक उसकी समझ में आया कि यह दावत उसके लिये नहीं है, वह तो निरा अजनबी है; और तब उसके मन में एक टीस उठी।

शीघ्र ही उसे तट के ऊपरी सिरे से आती हुई एक ऊँची गरज सुनाई दी, और उसी क्षण उसने देखा कि वे असंख्य लोग दो पंक्तियों में बँटते हुए घुटनों के बल झुक गये, उन्होंने अपने हाथों से अपनी आँखें बन्द कर लीं और अपने सिर धरती पर झुका दिये; और उन पंक्तियों के बीच तट की पूरी लम्बाई तक एक खाली, सीधा और तंग रास्ता बन गया और वह अकेला ही रास्ते के बीच में खड़ा रह गया। वह समझ नहीं पा रहा था कि वह क्या करे और किस ओर मुड़े।

जब उसने उस ओर देखा जिधर से गरज की आवाज़ आ रही थी तो उसे एक बहुत बड़ा साँड़ दिखाई दिया जो मुँह से आग की लपटें छोड़ रहा था और नथूनों से धुएँ के अम्बार, और जो उस मार्ग पर बिजली की गति से बेतहाशा दौड़ता हुआ आ रहा था। भयभीत होकर उसने उस क्रोधोन्मत्त पशु की ओर देखा तथा दाईं या बाईं तरफ़ भागकर बचना चाहा, पर बचाव का कोई रास्ता दिखाई नहीं दिया। उसे लगा मानो वह ज़मीन में गड़ गया है और अब मृत्यु निश्चित है।

ज्यों ही साँड़ उसके इतना नज़दीक पहुँचा कि उसे झुलसाती लौ और धुआँ महसूस हुआ, उसे किसी ने हवा में उठा लिया। उसके नीचे खड़ा साँड़ ऊपर की ओर आग तथा धुआँ छोड़ रहा था; किन्तु वह ऊँचा, और ऊँचा उठता गया, और यद्यपि आग तथा धुआँ उसे अब भी महसूस हो रहे थे तो भी उसे कुछ विश्वास हो गया कि अब साँड़ उसका कुछ नहीं बिगाड़ सकता। उसने नदी को पार करना शुरू कर दिया।



नीचे हरे-भरे तट पर उसने दृष्टि डाली तो देखा कि जनसमुदाय अब भी पहले की तरह घुटनों के बल झुका हुआ है, और साँड़ अब उस पर आग और धुएँ के बजाय तीर छोड़ रहा है। अपने नीचे से होकर निकल रहे तीरों की सरसराहट उसे सुनाई दे रही थी; उनमें से कुछ उसके कपड़ों में धँस गये, पर उसके शरीर को एक भी न छू सका। आखिर साँड़, भीड़ और नदी आँखों से ओझल हो गये; और वह व्यक्ति उड़ता चला गया।

उड़ते-उड़ते वह एक सुनसान, धूप से झुलसे भू-खण्ड पर से गुजरा जिस पर जीवन का कोई चिह्न न था। अन्त में वह एक ऊँचे, बीहड़ पर्वत की उजाड़ तलहटी में उतरा जहाँ घास की एक पत्ती तो क्या, एक छिपकली, एक चींटी तक न थी। उसे लगा कि पर्वत के ऊपर से होकर जाने के सिवाय उसके लिये और कोई चारा नहीं है।

बड़ी देर तक वह ऊपर चढ़ने का कोई सुरक्षित मार्ग ढूँढ़ता रहा, किन्तु उसे केवल एक पगडण्डी ही मिली जो मुश्किल से दिखाई देती थी और जिस पर सिर्फ बकरियाँ ही चल सकती थीं। उसने उसी राह पर चलने का निश्चय किया।

वह अभी कुछ सौ फुट ही ऊपर चढ़ा होगा कि उसे अपनी बाईं ओर निकट ही एक चौड़ा और समतल मार्ग दिखाई दिया। वह रुका और अपनी पगडण्डी को छोड़ने ही वाला था कि वह मार्ग एक मानवीय प्रवाह बन गया जिसका आधा भाग बड़े श्रम के साथ ऊपर चढ़ रहा था, और दूसरा आधा भाग अन्धाधुन्ध बड़ी तेज़ी के साथ पहाड़ से नीचे आ रहा था। अनगिनत स्त्री-पुरुष संघर्ष करते हुए ऊपर चढ़ते, और फिर कलाबाज़ी खाते हुए नीचे लुढ़क जाते थे, और जब वे नीचे लुढ़कते तो ऐसी चीख-पुकार करते थे कि दिल दहल जाता था।

वह व्यक्ति थोड़ी देर यह अद्भुत दृश्य देखता रहा और मन ही मन इस नतीजे पर पहुँचा कि पहाड़ के ऊपर कहीं एक बहुत बड़ा पागलखाना है, और नीचे लुढ़कनेवाले लोग उसमें से निकल भागनेवाले पागलों में से कुछ हैं। कभी गिरते तो कभी सँभलते हुए वह अपनी घुमावदार पगडण्डी पर चलता रहा, लेकिन चक्कर काटते हुए वह निरन्तर ऊपर की ओर बढ़ता गया।

कुछ ऊँचाई पर वह मानवीय प्रवाह सूख गया और उसका कोई चिह्न तक न रहा। वह व्यक्ति उस सूने पर्वत पर फिर अकेला रह गया—न रास्ता दिखाने को कोई हाथ, और न ही उसके ढहते साहस को सहारा और तेज़ी से क्षीण होती शक्ति को बल देने के लिये कोई आवाज़। उसके साथ था केवल धुँधला-सा विश्वास कि उसका मार्ग शिखर की ओर जाता है।

थके, बोझिल पैरों से मार्ग पर रक्त-चिह्न छोड़ते हुए वह आगे बढ़ता गया। कठिन जी-तोड़ परिश्रम के बाद वह एक ऐसी जगह पहुँचा जहाँ मिट्टी नरम और पत्थरों से रहित थी। उसकी खुशी का कोई ठिकाना न रहा जब उसे चारों ओर घास के कोमल अंकुर दिखाई दिये; घास इतनी नरम थी और मिट्टी इतनी मखमली, और हवा इतनी सुगन्धमय और शान्तिदायक कि उसे वैसा ही अनुभव हुआ जैसा अपनी शक्ति के अन्तिम अंश को खो देनेवाले किसी व्यक्ति को होता है। अतएव उसने हाथ-पैर ढीले छोड़ दिये और उसे नींद आ गई।

किसी हाथ के स्पर्श और एक आवाज़ ने उसे जगाया, “उठो! शिखर सामने है और बसन्त शिखर पर तुम्हारी प्रतीक्षा कर रहा है।”

वह हाथ और वह स्वर था स्वर्ग की अप्सरा-सी एक अत्यन्त रूपवती कन्या का जो अत्यन्त उज्ज्वल सफ़ेद वस्त्र पहने थी।

उस कन्या ने कोमलता-पूर्वक उस व्यक्ति का हाथ अपने हाथ में लिया और एक नई स्फूर्ति तथा उत्साह के साथ वह उठ खड़ा हुआ। उसे सचमुच शिखर दिखाई दिया। उसे सचमुच बसन्त की सुगन्ध आई। किन्तु जैसे ही उसने पहला डग भरने के लिये पैर उठाया, वह जाग पड़ा और उसका सपना टूट गया।

ऐसे सपने से जागकर मिकेयन यदि देखे कि वह चार साधारण दीवारों से घिरे एक साधारण-से बिस्तर पर पड़ा हुआ है, परन्तु उसकी पलकों की ओट में उस कन्या की छवि जगमगा रही हो और उस शिखर की सुगन्धपूर्ण कान्ति उसके हृदय में ताज़ी हो, तो वह क्या करेगा?

मिकेयन: (मानो उसे सहसा गहरी चोट लगी हो) पर वह सपना देखनेवाला तो मैं हूँ, मेरा ही है वह सपना। मैंने ही देखी है उस कन्या

और शिखर की झलक। आज तक वह सपना मुझे रह-रह कर सताता है और मुझे ज़रा भी चैन नहीं लेने देता। उसने तो मुझे मेरे लिए ही अजनबी बना दिया है। उसी के कारण मिकेयन अब मिकेयन को नहीं पहचानता।

लेकिन जब आपको बेसार ले जाया गया था, उसके कुछ ही समय बाद मैंने यह सपना देखा था। आप इसका इतना सूक्ष्म विवरण कैसे दे रहे हैं? आप कैसे व्यक्ति हैं कि लोगों के सपने भी आपके लिये खुली किताब हैं?

आह, उस शिखर की स्वतन्त्रता! आह, उस कन्या का सौन्दर्य! कितना तुच्छ है और सबकुछ उनकी तुलना में। मेरी अपनी आत्मा उनकी खातिर मुझे छोड़ गई थी। जिस दिन मैंने आपको बेसार से आते देखा, उसी दिन मेरी आत्मा मेरे पास लौटी और मैंने अपने आपको शान्त तथा सबल पाया। पर यह अहसास अब मुझे छोड़ गया है, और अनदेखे तार मुझे एक बार फिर मुझसे दूर खींच रहे हैं।

मुझे बचा लो, मेरे महान् साथी। मैं वैसे नज़ारे की एक झलक के लिये घुला जा रहा हूँ।

**मीरदाद:** तुम नहीं जानते तुम क्या माँग रहे हो, मिकेयन। क्या तुम अपने मुक्तिदाता से मुक्त होना चाहते हो?

**मिकेयन:** मैं इस संसार में, जो अपने घर में इतना सुखी है, बेघर होने की इस असह्य यातना से मुक्त होना चाहता हूँ। मैं उस शिखर पर उस कन्या के पास पहुँचना चाहता हूँ।

**मीरदाद:** खुशी मनाओ कि निज-घर के लिये महाविरह ने तुम्हारे हृदय को जकड़ लिया है। क्योंकि यह एक अटल आश्वासन है कि तुम्हें अपना देश और अपना घर अवश्य मिलेगा और तुम उस शिखर पर उस कन्या के पास अवश्य पहुँचोगे।

**अबिमार:** कृपया हमें इस 'विरह' के बारे में और बतायें। हम इसे किन चिह्नों से पहचान सकते हैं?



## निज-घर के लिये महाविरह

**मीरदादः** धुन्ध के समान है निज-घर के लिये महाविरह। जिस प्रकार समुद्र और धरती से उठी धुन्ध समुद्र तथा धरती पर ऐसे छा जाती है कि उन्हें कोई देख नहीं सकता, इसी प्रकार हृदय से उठा महाविरह हृदय पर ऐसे छा जाता है कि उसमें और कोई भावना प्रवेश नहीं कर सकती।

और जैसे धुन्ध स्पष्ट दिखाई देनेवाले यथार्थ को आँखों से ओझल करके स्वयं एकमात्र यथार्थ बन जाती है, वैसे ही यह विरह मन की अन्य भावनाओं को दबाकर स्वयं प्रमुख भावना बन जाता है। और यद्यपि विरह उतना ही आकारहीन, लक्ष्यहीन तथा अन्धा प्रतीत होता है जितनी कि धुन्ध, फिर भी धुन्ध की तरह ही इसमें अनन्त अज्ञात आकार भरे होते हैं, इसकी दृष्टि स्पष्ट होती है तथा इसका लक्ष्य सुनिश्चित।

ज्वर के समान है यह महाविरह। जैसे शरीर में सुलगा ज्वर शरीर के विष को भस्म करते हुए धीरे-धीरे उसकी प्राण-शक्ति को क्षीण कर देता है, वैसे ही अन्तर की तड़प से जन्मा यह विरह मन के मैल तथा मन में एकत्रित हर अनावश्यक विचार को नष्ट करते हुए मन को निर्बल बना देता है।

एक चोर के समान है यह महाविरह। जैसे छिप कर अन्दर घुसा चोर अपने शिकार का भार तो कुछ हलका करता है, पर उसे बहुत दुःखी कर जाता है, वैसे ही यह विरह गुप्त रूप से मन के सारे बोझ तो हर लेता है, पर ऐसा करते हुए उसे बहुत उदास कर देता है और बोझ के अभाव के ही बोझ तले दबा देता है।

चौड़ा और हरा-भरा है वह किनारा जहाँ पुरुष और स्त्रियाँ नाचते, गाते, परिश्रम करते तथा रोते हुए अपने क्षणभंगुर दिन गँवा देते हैं। किन्तु

भयानक है आग और धुआँ उगलता वह साँड़ जो उनके पैरों को बाँध देता है, उनसे घुटने टिकवा देता है, उनके गीतों को वापस उन्हीं के कण्ठ में ठूस देता है और उनकी सूजी हुई पलकों को उन्हीं के आँसुओं से चिपका देता है।

चौड़ी और गहरी भी है वह नदी जो उन्हें दूसरे किनारे से अलग रखती है। और उसे वे न तैरकर, और न ही चप्पू अथवा पाल से नौका को खेकर पार कर सकते हैं। उनमें से थोड़े, बहुत ही थोड़े लोग उस पर चिन्तन का पुल बाँधने का साहस करते हैं। किन्तु सभी, लगभग सभी, बड़े चाव से अपने किनारे से चिपके रहते हैं जहाँ हर कोई अपना समय रूपी प्यारा पहिया ठेलता रहता है।

महाविरही के पास ठेलने के लिये कोई मनपसन्द पहिया नहीं होता। तनावपूर्ण व्यस्तता और समयाभाव द्वारा सताये इस संसार में केवल उसी के पास कोई काम-धन्धा नहीं होता, उसी को कोई जल्दी नहीं होती। पहनावे, बोलचाल और आचार-व्यवहार में इतनी शालीन मनुष्य जाति के बीच वह अपने आपको वस्त्रहीन, हकलाता हुआ और अनाड़ी पाता है। हँसनेवालों के साथ वह हँस नहीं पाता, और न ही रोनेवालों के साथ वह रो पाता है। मनुष्य खाते हैं, पीते हैं, और खाने-पीने में आनन्द लेते हैं; पर वह स्वाद के लिये खाना नहीं खाता, और जो वह पीता है वह उसके लिये नीरस ही होता है।

औरों के जीवन-साथी हैं, या वे जीवन-साथी खोजने में व्यस्त हैं; पर वह अकेला चलता है, अकेला सोता है, अकेला ही अपने सपने देखता है। लोग सांसारिक बुद्धि तथा समझदारी की दृष्टि से बड़े अमीर हैं; एक वही मूढ़ और बेसमझ है। औरों के पास सुखद स्थान हैं जिन्हें वे घर कहते हैं, एक वही बेघर है औरों के पास कोई विशेष भू-खण्ड हैं जिन्हें वे अपना देश कहते हैं तथा जिनका गौरवगान वे बहुत ऊँचे स्वर में करते हैं; अकेला वही है जिसके पास ऐसा कोई भू-खण्ड नहीं जिसका वह गौरवगान करे और जिसे वह अपना देश कहे। यह सब इसलिये कि उसकी आन्तरिक दृष्टि दूसरे किनारे की ओर है।



निद्राचारी होता है महाविरही इस पूर्णतया जागरूक दिखनेवाले संसार के बीच। वह एक ऐसे स्वप्न से प्रेरित होता है जिसे उसके आस-पास के लोग न देख सकते हैं, न महसूस कर सकते हैं। और इसलिये वे उसका निरादर करते हैं और दबी आवाज़ में उसकी खिल्ली उड़ाते हैं। किन्तु जब भय का देवता—आग और धुआँ उगलता वह साँड़—प्रकट होता है तो उन्हें धूल चाटनी पड़ती है, जब कि निद्राचारी, जिसका वे निरादर करते और खिल्ली उड़ाते थे, विश्वास के पंखों पर उनसे और उनके साँड़ से ऊपर उठ जाता है, और दूर, दूसरे किनारे के पार, बीहड़ पर्वत की तलहटी में पहुँच जाता है।

बंजर, और उजाड़, और सुनसान है वह भूमि जिस पर से निद्राचारी उड़ता है। किन्तु विश्वास के पंखों में बल है; और वह व्यक्ति उड़ता चला जाता है।

उदास, और वनस्पतिहीन और अत्यन्त भयानक है वह पर्वत जिसकी तलहटी में वह उतरता है। किन्तु विश्वास का हृदय अजेय है; और उस व्यक्ति का हृदय साहसपूर्वक धड़कता चला जाता है।

पथरीला, रपटीला, और कठिनाई से दिखाई देनेवाला है पहाड़ पर जाता उसका रास्ता। परन्तु रेशम-सा कोमल है विश्वास का हाथ, स्थिर है उसका पैर, और तेज़ है उसकी आँख, और वह व्यक्ति चढ़ता चला जाता है।

रास्ते में उसे एक समतल, चौड़े मार्ग से पहाड़ पर चढ़ते हुए पुरुष और स्त्रियाँ मिलते हैं। वे अल्पविरही पुरुष और स्त्रियाँ हैं जो चोटी पर पहुँचने की तीव्र इच्छा तो रखते हैं, परन्तु एक लंगड़े और दृष्टिहीन मार्गदर्शक के साथ। क्योंकि उनका मार्गदर्शक है उन वस्तुओं में विश्वास जिन्हें आँखें देख सकती हैं, और जिन्हें कान सुन सकते हैं, और जिन्हें हाथ छू सकते हैं, और जिन्हें नाक तथा जिह्वा सूँघ और चख सकते हैं। उनमें से कुछ पर्वत के टखनों से ऊपर नहीं चढ़ पाते; कुछ उसके घुटनों तक पहुँचते हैं; कुछ कूल्हे तक; और बहुत थोड़े कमर तक। किन्तु उस सुन्दर चोटी की झलक तक पाये बिना वे सब अपने मार्गदर्शक सहित फिसलकर पर्वत से नीचे लुढ़क जाते हैं।



क्या आँखें वह सब देख सकती हैं जो देखने योग्य है, और क्या कान वह सब सुन सकते हैं जो सुनने योग्य है? क्या हाथ वह सब छू सकता है जो छूने योग्य है, और क्या नाक वह सब सूँघ सकती है जो सूँघने योग्य है? क्या जिह्वा वह सब चख सकती है जो चखने योग्य है? जब दिव्य कल्पना से उत्पन्न विश्वास उनकी सहायता के लिये आगे बढ़ेगा, केवल तभी ज्ञानेन्द्रियाँ वास्तव में अनुभव करेंगी और इस प्रकार शिखर तक पहुँचने के लिये सीढ़ियाँ बनेंगी।

विश्वास से रहित ज्ञानेन्द्रियाँ अत्यन्त अविश्वसनीय मार्गदर्शक हैं। चाहे उनका मार्ग समतल और चौड़ा प्रतीत होता हो, फिर भी उसमें कई छिपे फन्दे और अनजाने खतरे होते हैं। और जो लोग स्वतन्त्रता के शिखर पर पहुँचने के लिये इस मार्ग को अपनाते हैं, वे या तो रास्ते में ही मर जाते हैं, या फिसलकर लुढ़कते हुए वापस वहीं पहुँच जाते हैं जहाँ से वे चले थे; और वहाँ वे अपनी टूटी हड्डियों को जोड़ते हैं और अपने खुले घावों को सीते हैं।

अल्पविरही वे हैं जो अपनी ज्ञानेन्द्रियों से एक संसार रच तो लेते हैं, लेकिन जल्दी ही उसे छोटा तथा घुटन-भरा पाते हैं; और इसलिये वे एक अधिक बड़े और अधिक हवादार घर की कामना करने लगते हैं। परन्तु नई निर्माण-सामग्री और नये कुशल राजगीर को ढूँढ़ने के बजाय वे पुरानी निर्माण-सामग्री ही बटोर लेते हैं और उसी राजगीर को—ज्ञानेन्द्रियों को—अपने लिए एक अधिक बड़े घर का नक्शा बनाने और उसका निर्माण करने का काम सौंप देते हैं। नये घर के बनते ही वह उन्हें पुराने घर की तरह छोटा तथा घुटन-भरा प्रतीत होने लगता है। इस प्रकार वे ढहाने-बनाने में ही लगे रहते हैं और सुख तथा स्वतन्त्रता प्रदान करनेवाले जिस घर के लिये वे तड़पते हैं उसे कभी नहीं बना पाते, क्योंकि ठगे जाने से बचने के लिये वे उन्हीं का आसरा लेते हैं जिनके द्वारा वे ठगे जा चुके हैं। और जैसे मछली कड़ाही में से उछलकर भट्ठी में जा गिरती है, वैसे ही वे जब किसी छोटी मृगतृष्णा से दूर भागते हैं तो कोई बड़ी मृगतृष्णा उन्हें अपनी ओर खींच लेती है।

महाविरही तथा अल्पविरही व्यक्तियों के बीच ऐसे मनुष्यों के विशाल समूह हैं जिन्हें कोई विरह महसूस नहीं होता। वे खरगोशों की तरह अपने लिए बिल खोदने और उन्हीं में रहने, बच्चे पैदा करने और मर जाने में सन्तुष्ट हैं। अपने बिल उन्हें काफी सुन्दर, विशाल और आरामदेह प्रतीत होते हैं जिन्हें वे किसी राजमहल के वैभव से भी बदलने को तैयार नहीं। वे निद्राचारियों का मज़ाक उड़ाते हैं, खासकर उनका जो एक ऐसी सूनी पगडण्डी पर चलते हैं जिस पर पद चिह्न विरले ही होते हैं और बड़ी मुश्किल से पहचाने जाते हैं।

अपने साथी मनुष्यों के बीच में महाविरही वैसा ही होता है जैसा वह गरुड़ जिसे मुर्गी ने सेया है और जो चूजों के साथ उनके बाड़े में बन्द है। उसके भाई-चूजे तथा माँ-मुर्गी चाहते हैं कि वह बाल-गरुड़ उन्हीं जैसा हो, उन्हीं के जैसे स्वभाव और आदतों वाला, और उन्हीं की तरह रहनेवाला। और वह चाहता है कि चूजे उसके समान हों, अधिक खुली हवा और अनन्त आकाश के स्वप्न देखनेवाले। पर शीघ्र ही वह उनके बीच अपने आपको एक अजनबी और अछूत पाता है; वे सब उसे चोंच मारते हैं, यहाँ तक कि उसकी माँ भी। किन्तु उसे अपने रक्त में शिखरों की पुकार बड़े जोर से सुनाई देती है, और बाड़े की दुर्गन्ध उसकी नाक में बुरी तरह चुभती है। फिर भी वह सबकुछ चुपचाप सहता रहता है जब तक उसके पंख पूरी तरह नहीं निकल आते। और तब वह हवा पर सवार हो जाता है, और प्यार-भरी विदा-दृष्टि डालता है अपने भूतपूर्व भाइयों और उनकी माँ पर जो दानों और कीड़ों के लिये मिट्टी कुरेदते हुए मस्ती में कुड़कुड़ाते रहते हैं।

खुशी मनाओ, मिकेयन। तुम्हारा सपना एक पैगम्बर का सपना है। महाविरह ने तुम्हारे संसार को बहुत छोटा कर दिया है, और तुम्हें उस संसार में एक अजनबी बना दिया है। उसने तुम्हारी कल्पना को निरंकुश ज्ञानेन्द्रियों की पकड़ से मुक्त कर दिया है; और मुक्त कल्पना ने तुम्हारे अन्दर विश्वास जाग्रत कर दिया है।

और विश्वास तुम्हें दुर्गन्धपूर्ण, घुटन-भरे संसार में बहुत ऊँचा उठाकर वीरान खोखलेपन के पार बीहड़ पर्वत के ऊपर ले जायेगा जहाँ हर

विश्वास को परखा जाता है और सन्देह की अन्तिम तलछट को निकालकर उसे निर्मल किया जाता है।

और इस प्रकार निर्मल हो चुका विजयी विश्वास तुम्हें सदैव हरे-भरे रहनेवाले शिखर की सीमाओं पर पहुँचा देगा और वहाँ तुम्हें दिव्य ज्ञान के हाथों में सौंप देगा। अपना कार्य पूरा करके विश्वास पीछे हट जायेगा, और दिव्य ज्ञान तुम्हारे कदमों को उस शिखर की अकथनीय स्वतन्त्रता की राह दिखायेगा जो प्रभु तथा आत्मविजयी मनुष्य का वास्तविक, सीमा-रहित आनन्दपूर्ण धाम है।

परख में खरे उतरना, मिकेयन। तुम सब खरे उतरना, मेरे साथियो। उस शिखर पर क्षण-भर भी खड़े हो सकने का सौभाग्य प्राप्त करने के लिये चाहे कोई भी पीड़ा सहनी पड़े, ज्यादा नहीं है। परन्तु उस शिखर पर स्थायी निवास प्राप्त कर सकने में यदि अनन्तकाल भी लग जाये तो कम है।

**हिम्बल:** क्या आप हमें अपने शिखर पर अभी नहीं ले जा सकते, एक झलक के लिये ही सही, चाहे वह क्षणिक ही हो?

**मीरदाद:** उतावले मत बनो, हिम्बल। अपने समय की प्रतीक्षा करो। जहाँ मैं आराम से साँस लेता हूँ, वहाँ तुम्हारा दम घुटेगा। जहाँ मैं आराम से चलता हूँ, वहाँ तुम हाँफने और ठोकरें खाने लगोगे। विश्वास का दामन थामे रखो; और विश्वास बहुत बड़ा कमाल कर दिखायेगा।

यही शिक्षा थी मेरी नूह को।

यही शिक्षा है मेरी तुम्हें।



## पाप और आवरण

**मीरदादः** पाप के विषय में तुम्हें बता दिया गया है, और यह तुम जान जाओगे कि मनुष्य पापी कैसे बना।

तुम्हारा कहना है, और वह सारहीन भी नहीं है, कि परमात्मा का प्रतिबिम्ब और प्रति-रूप मनुष्य यदि पापी है, तो स्पष्ट है कि पाप का स्रोत स्वयं परमात्मा ही है। इस तर्क में भोले-भाले लोगों के लिये एक जाल है; और तुम्हें, मेरे साथियो, मैं जाल में फँसने नहीं दूँगा। इसलिये मैं इस जाल को तुम्हारे रास्ते से हटा दूँगा, ताकि तुम इसे अन्य मनुष्यों के रास्ते से हटा सको।

परमात्मा में कोई पाप नहीं; क्या सूर्य का अपने प्रकाश में से मोमबत्ती को प्रकाश देना पाप है? न ही मनुष्य में पाप है; क्या एक मोमबत्ती के लिये धूप में जलकर अपने आपको मिटा देना और इस प्रकार सूर्य के साथ मिल जाना पाप है?

लेकिन पाप है उस मोमबत्ती में जो अपना प्रकाश बिखेरना नहीं चाहती, और जब उसे जलाया जाता है तो दियासलाई तथा दियासलाई जलानेवाले हाथ को कोसती है। पाप है उस मोमबत्ती में जिसे धूप में जलने में शर्म आती है, और जो इसी लिये अपने आपको सूर्य से छिपा लेना चाहती है।

मनुष्य ने प्रभु के विधान का उल्लंघन करके पाप नहीं किया, बल्कि पाप किया है उस विधान के प्रति अपने अज्ञान पर पर्दा डालकर।

हाँ, पाप तो अंजीर-पत्ते के आवरण से अपनी नग्नता छिपाने में था।

क्या तुमने मनुष्य के पतन की कथा नहीं पढ़ी जो शब्दों की दृष्टि से सरल और संक्षिप्त, परन्तु अर्थ की दृष्टि से गहरी और महान् है? क्या

तुमने नहीं पढ़ा कि जब मनुष्य परमात्मा में से नया-नया निकला था तो किस प्रकार वह एक शिशु-परमात्मा जैसा था—निश्चेष्ट, गतिहीन, सृजन में असमर्थ? क्योंकि परमात्मा के सभी गुणों से युक्त होते हुए भी वह सब शिशुओं की तरह अपनी अनन्त शक्तियों और योग्यताओं को प्रयोग में लाने में ही नहीं, बल्कि उन्हें जानने में भी असमर्थ था।

एक सुन्दर शीशी में बन्द अकेले बीज की तरह था मनुष्य अदन की वाटिका में। शीशी में पड़ा बीज बीज ही रहेगा, और जब तक उसे उसकी प्रकृति के अनुकूल मिट्टी में दबाया न जाये और उसका खोल फूट न जाये, उसके अन्दर बन्द चमत्कार सजीव होकर प्रकाश में नहीं आयेगा।

परन्तु मनुष्य के पास उसकी प्रकृति के अनुकूल कोई मिट्टी नहीं थी जिसमें वह अपने आपको रोपता और अंकुरित हो जाता।

उसके चेहरे को किसी अन्य समरूपी चेहरे में अपनी झलक नहीं मिलती थी। उसके मानवी कान को कोई अन्य मानव-स्वर सुनाई नहीं देता था। उसका मानव-स्वर किसी अन्य मानव-कण्ठ में गूँजकर नहीं लौटता था। उसके एकाकी हृदय के साथ एक-सुर होने के लिये कोई अन्य हृदय नहीं था।

इस संसार में, जिसे उपयुक्त जोड़ों के रूप में अपनी यात्रा पर रवाना किया गया था, मनुष्य अकेला था, बिलकुल अकेला। वह अपने लिए एक अजनबी था। उसके करने के लिये अपना कोई काम नहीं था और न ही था उसके लिये निर्धारित कोई मार्ग। अदन उसके लिये वही था जो किसी शिशु के लिये एक आरामदेह पालना होता है—निष्क्रिय आनन्द की एक अवस्था। वह उसके लिये सब प्रकार की सुख-सुविधा का स्थान था।

नेकी और बदी के ज्ञान का वृक्ष तथा जीवन का वृक्ष दोनों उसकी पहुँच में थे; फिर भी वह उनके फल तोड़ने और चखने के लिये हाथ नहीं बढ़ाता था; क्योंकि उसकी रुचि और उसकी संकल्प-शक्ति, उसके विचार तथा उसकी कामनाएँ, यहाँ तक कि उसका जीवन भी, सब उसके अन्दर बन्द पड़े थे और इस प्रतीक्षा में थे कि उन्हें कोई धीरे-धीरे खोले। उन्हें खरब खोलना उसके लिये सम्भव नहीं था। अतएव उसे अपने अन्दर से ही

अपने लिए एक साथी पैदा करने के लिये विवश किया गया—एक ऐसा हाथ जो उसके बन्धन खोलने में उसका सहायक बने।

उसे सहायता और कहाँ से मिल सकती थी सिवाय अपने अन्दर के जो दिव्यत्व से सम्पन्न होने के कारण सहायता से भरपूर था? और यह बात अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है।

किसी नई मिट्टी और साँस से नहीं बनी थी हौवा; बल्कि आदम की अपनी ही मिट्टी और साँस थी—उसकी हड्डी में से एक हड्डी, उसके मांस में से मांस का एक टुकड़ा। कोई अन्य जीव रंगमंच पर प्रकट नहीं हुआ था; बल्कि स्वयं उसी एक आदम को युगल बना दिया गया था—एक पुरुष आदम और एक स्त्री आदम।

इस प्रकार उस अकेले, दर्पण-रहित चेहरे को एक साथी और एक दर्पण मिल जाता है; और वह नाम जो पहले किसी मानव-स्वर में नहीं गूँजा था अदन की वीथिकाओं में ऊपर, नीचे, सर्वत्र मधुर स्वरों में गूँजने लगता है; और वह हृदय जिसकी उदास धड़कन एक सूने वक्ष में दबी पड़ी थी एक साथी वक्ष में एक साथी हृदय के अन्दर अपनी गति महसूस करने और धड़कन सुनने लगता है।

इस प्रकार चिनगारी-रहित फ़ौलाद का उस चकमक पत्थर से मेल हो जाता है जो उसमें से बहुत-सी चिनगारियाँ पैदा कर देता है। इस प्रकार अनजली मोमबत्ती दोनों सिरों से जला दी जाती है।

मोमबत्ती एक है, बत्ती एक है, और रोशनी भी एक है, यद्यपि वह देखने में दो अलग-अलग सिरों से पैदा हो रही है। और इस प्रकार शीशी में पड़े बीज को वह मिट्टी मिल जाती है जिसमें अंकुरित होकर वह अपने रहस्य प्रकट कर सकता है।

इस प्रकार अपने आपसे अनजान एकत्व द्वैत को जन्म देता है, ताकि द्वैत में निहित संघर्ष और विरोध के द्वारा उसे अपने एकत्व का ज्ञान कराया जा सके। इस प्रक्रिया में भी मनुष्य अपने परमात्मा का सही प्रतिबिम्ब है, उसका प्रतिरूप है। क्योंकि परमात्मा—आदि चेतना—अपने आपमें से शब्द को प्रकट करता है; और शब्द तथा चेतना दोनों दिव्य ज्ञान में एक हो जाते हैं।



द्वैत कोई दण्ड नहीं है, बल्कि एकत्व की प्रकृति में निहित एक प्रक्रिया है, उसकी दिव्यता के प्रकट होने का एक आवश्यक साधन। कैसा बचपना है और किसी तरह सोचना! कैसा बचपना है यह विश्वास करना कि इतनी बड़ी प्रक्रिया से उसका मार्ग तीन बीसी और दस सालों या तीन बीसी दस-लाख सालों में भी तय करवाया जा सकता है।

आत्मा का परमात्मा बनना क्या कोई मामूली बात है?

क्या परमात्मा इतना कठोर और कंजूस मालिक है कि देने के लिये उसके पास पूरा अनन्तकाल होते हुए भी वह मनुष्य को फिर से एक होकर, अपने ईश्वरत्व तथा परमात्मा के साथ अपनी एकता का पूरी तरह ज्ञान प्राप्त करके वापस अपने मूलधाम अदन में पहुँचने के लिये केवल सत्तर वर्ष का इतना कम समय प्रदान करे?

लम्बा है द्वैत का मार्ग; और मूर्ख हैं वे लोग जो उसे तिथि-पत्रों से नापते हैं। अनन्तकाल सितारों के चक्कर नहीं गिनता।

जब निष्क्रिय, गतिहीन, सृजन में असमर्थ आदम को एक से दो कर दिया गया तो वह तुरन्त क्रियाशील, गतिमान तथा सृजन और सन्तानोत्पादन में समर्थ हो गया।

दो कर दिये जाने पर आदम का पहला काम क्या था? वह था नेकी और बदी के ज्ञान के वृक्ष का फल खाना और इस प्रकार अपने सारे संसार को अपने जैसा ही दो कर देना। अब कुछ भी वैसा न रहा था जैसा पहले था—निष्पाप तथा निश्चिन्त। बल्कि सब कुछ अच्छा या बुरा, लाभकारी या हानिकारक, सुखकर या कष्टकर हो गया था, दो विरोधी दलों में बँट गया था जब कि पहले एक था।

और जिस साँप ने हौवा को नेकी और बदी का स्वाद चखने के लिये फुसलाया था, क्या वह उस सक्रिय किन्तु अनुभवहीन द्वैत की ही गहरी आवाज़ नहीं थी जो कुछ करने तथा अनुभव प्राप्त करने के लिये अपने आपको प्रेरित कर रहा था?

यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि इस आवाज़ को पहले हौवा ने सुना और उसका कहा माना। क्योंकि हौवा मानो सान का पत्थर थी—अपने साथी में छिपी शक्तियों को प्रकट करने के लिये बनाया गया उपकरण।

इस प्रथम मानव-कथा में चोरी से अदन के पेड़ों में से अपना मार्ग बना रही इस प्रथम स्त्री की सजीव कल्पना के लिये क्या तुम अक्सर रुक नहीं गये—ऐसी स्त्री की कल्पना जो घबराई हुई थी, जिसका हृदय पिंजरे में बन्द पक्षी की तरह फड़फड़ा रहा था, जिसकी आँखें चारों ओर देख रही थीं कि कहीं कोई ताक तो नहीं रहा है, और जिसके मुँह में पानी भर आया था जब उसने अपना काँपता हुआ हाथ उस लुभावने फल की ओर बढ़ाया था? क्या तुमने उस समय अपनी साँस रोक नहीं ली जब उसने वह फल तोड़ा और उसके कोमल गूदे में अपने दाँत गड़ा दिये, ऐसी क्षणिक मिठास का स्वाद लेने के लिये जो स्वयं उसके और उसकी सन्तान के लिये स्थायी कड़वाहट में बदलने वाली थी?

क्या तुमने जी-जान से नहीं चाहा कि जब हौवा अपना विवेक-शून्य कार्य करने ही वाली थी, परमात्मा उसी समय प्रकट होकर उसकी उन्मत्त धृष्टता को रोक देता, बजाय बाद में प्रकट होने के जैसा कि कहानी में होता है? और जब हौवा ने वह गुनाह कर ही लिया, तो क्या तुमने नहीं चाहा कि आदम के पास इतना विवेक और साहस होता कि वह अपने आपको हौवा का सह-अपराधी बनने से रोक लेता?

परन्तु न तो परमात्मा ने हस्तक्षेप किया, न आदम ने अपने आपको रोका, क्योंकि परमात्मा नहीं चाहता था कि उसका प्रतिरूप उससे भिन्न हो। यह उसकी इच्छा और योजना थी कि मनुष्य अपनी खुद की इच्छा और योजना को सँजोये और दिव्य ज्ञान द्वारा अपने आपको एक करने के लिये द्वैत का लम्बा रास्ता तय करे। जहाँ तक आदम का सवाल है, वह चाहता भी तो अपनी पत्नी के दिये फल को खाने से अपने आपको रोक नहीं सकता था। वह फल खाने के लिये बाध्य था, केवल इसलिये कि उसकी पत्नी उस फल का कुछ अंश खा चुकी थी; क्योंकि दोनों एक शरीर थे, और दोनों एक-दूसरे के कर्मों के लिये उत्तरदायी थे।

क्या परमात्मा मनुष्य के नेकी और बदी का फल खाने पर अप्रसन्न और क्रुद्ध हुआ? यह सम्भव नहीं था, क्योंकि परमात्मा जानता था कि मनुष्य फल खाये बिना रह नहीं सकेगा, और वह चाहता था कि मनुष्य



फल खाये; किन्तु वह यह भी चाहता था कि मनुष्य पहले ही जान ले कि खाने का परिणाम क्या होगा और उसमें परिणाम का सामना करने की शक्ति हो। और मनुष्य में वह शक्ति थी। और मनुष्य ने फल खाया। और मनुष्य ने परिणाम का सामना किया।

और वह परिणाम था मृत्यु। क्योंकि प्रभु की इच्छा से क्रियाशील दो बनने में मनुष्य की क्रिया-रहित एकता समाप्त हो गई थी। अतएव मृत्यु कोई दण्ड नहीं है, बल्कि जीवन का एक पक्ष है, द्वैत का ही एक अंश है। क्योंकि द्वैत की प्रकृति है सब वस्तुओं को एक से दो का रूप दे देना, प्रत्येक वस्तु को एक परछाई प्रदान कर देना।

इसलिये आदम ने अपनी परछाई पैदा कर ली हौवा के रूप में; और अपने जीवन के लिये दोनों ने एक परछाई पैदा कर ली जिसका नाम है मृत्यु। परन्तु आदम और हौवा मृत्यु की छाया में रहते हुए भी प्रभु के जीवन में परछाई-रहित जीवन जी रहे हैं।

द्वैत एक निरन्तर संघर्ष है; और संघर्ष यह भ्रम पैदा करता है कि दो विरोधी पक्ष अपने आपको मिटा देने पर तुले हैं। विरोधी दिखनेवाले पक्ष वास्तव में एक-दूसरे के पूरक हैं, एक-दूसरे के साधक हैं और कन्धे से कन्धा मिलाकर एक ही उद्देश्य के लिये, सम्पूर्ण शान्ति, एकता और दिव्य ज्ञान से उत्पन्न होनेवाले सन्तुलन के लिये कार्य-रत हैं। परन्तु भ्रम की जड़ ज्ञानेन्द्रियों में जमी हुई है, और वह तब तक बना रहेगा जब तक ज्ञानेन्द्रियाँ हैं।

इसलिये आदम की आँखें खुलने के बाद प्रभु ने जब उसे बुलाया तो उसने उत्तर दिया, “मैंने बाग़ में तेरी आवाज़ सुनी, और ‘मैं’ डर गया क्योंकि ‘मैं’ नंगा था; और ‘मैंने’ अपने आपको छिपा लिया।” आदम ने यह भी कहा, “जो स्त्री तूने ‘मुझे’ साथी के रूप में दी थी, उसने ‘मुझे’ वृक्ष का फल दिया, और ‘मैंने’ खाया।”

हौवा और कोई नहीं थी, आदम का अपना ही हाड़-मांस थी। फिर भी आदम के इस नवजात ‘मैं’ पर विचार करो जो आँख खुलने के बाद अपने आपको हौवा से, परमात्मा से और परमात्मा की समूची रचना से भिन्न, पृथक् और स्वतन्त्र समझने लगा।



एक भ्रम था यह 'मैं'। उस अभी-अभी खुली आँख का एक भ्रम था परमात्मा से पृथक् हुआ यह व्यक्तित्व। इसमें न सार था, न यथार्थ। इसका जन्म इसलिये हुआ था कि इसकी मृत्यु के माध्यम से मनुष्य अपने वास्तविक अहं को पहचान ले जो परमात्मा का अहं है। यह भ्रम तब लुप्त होगा जब बाहर की आँख के सामने अँधेरा छा जायेगा और अन्दर की आँख के सामने प्रकाश हो जायेगा। और इसने यद्यपि आदम को चकरा दिया, फिर भी इसने उसके मन में एक प्रबल जिज्ञासा उत्पन्न कर दी और उसकी कल्पना को लुभा लिया। मनुष्य के लिये, जिसे किसी भी अहं का अनुभव न हुआ हो, एक ऐसा अहं पा लेना जिसे वह पूरी तरह अपना कह सके सचमुच एक बहुत बड़ा प्रलोभन था, और उसके मिथ्याभिमान के लिये बहुत बड़ा प्रोत्साहन भी।

और आदम अपने इस भ्रामक अहं के प्रलोभन और बहकावे में आ गया। यद्यपि वह इसके लिये लज्जित था, क्योंकि यह अवास्तविक था, नग्न था, फिर भी वह इसे त्यागने को तैयार नहीं था; वह तो इसे अपने पूरे हृदय से और अपने नये मिले समूचे कौशल से पकड़े बैठा था। उसने अंजीर के पत्ते सीकर जोड़ लिये तथा अपने लिए एक आवरण तैयार कर लिया जिससे वह अपने नग्न व्यक्तित्व को ढक ले और उसे परमात्मा की सर्व-वेधी दृष्टि से बचाकर अपने ही पास रखे।

इस प्रकार अदन, आनन्दपूर्ण भोलेपन की अवस्था, अपने आपसे बेखबर एकता, पत्तों का आवरण पहने एक से दो बने मनुष्य के हाथ से निकल गई; और मनुष्य तथा दिव्य जीवन के वृक्ष के बीच ज्वाला की तलवारें खड़ी हो गई।

मनुष्य नेकी और बदी के दोहरे द्वार में से अदन से बाहर आया था; वह दिव्य ज्ञान के इकहरे द्वार में से अदन के अन्दर जायेगा। वह दिव्य जीवन के वृक्ष की ओर पीठ किये निकला था; उस वृक्ष की ओर मुँह किये प्रवेश करेगा। जब वह अपने लम्बे और कठिन सफ़र पर रवाना हुआ था तो अपनी नग्नता पर लज्जित था और अपनी लज्जा को छिपाये रखने के लिये आतुर; जब वह अपनी यात्रा के अन्त में पहुँचेगा तो उसकी पवित्रता आवरण-मुक्त होगी और उसे अपनी नग्नता पर गर्व होगा।

परन्तु ऐसा तब तक नहीं होगा जब तक कि पाप मनुष्य को पाप से मुक्त न कर दे। क्योंकि पाप स्वयं अपने विनाश का कारण सिद्ध होगा। और पाप आवरण के सिवाय और कहाँ है ?

हाँ, पाप और कुछ नहीं है सिवाय उस दीवार के जो मनुष्य ने अपने और परमात्मा के बीच में खड़ी कर ली है—अपने क्षणभंगुर अहं और अपने स्थायी अहं के बीच।

वह ओट जो शुरू में अंजीर के मुट्ठी भर पत्ते थी अब एक विशाल परकोटा बन गई है। क्योंकि जब मनुष्य ने अदन के भोलेपन को उतार फेंका तब से वह अधिकाधिक पत्ते जमा करने और आवरण पर आवरण सीने में जी-जान से जुटा हुआ है।

आलसी लोग अपने मेहनती पड़ोसियों द्वारा फेंके गये चीथड़ों से अपने आवरणों के छेदों पर पैबन्द लगा-लगा कर सन्तोष कर लेते हैं। पाप की पोशाक पर लगाया जानेवाला हर पैबन्द पाप ही होता है, क्योंकि वह उस लज्जा को स्थायी बनाने का साधन होता है जिसे परमात्मा से अलग होने पर मनुष्य ने पहली बार और बड़ी तीव्रता के साथ महसूस किया था।

क्या मनुष्य अपनी लज्जा पर विजय पाने के लिये कुछ कर रहा है ? अफ़सोस, उसके सब उद्यम लज्जा पर लादे गये लज्जा के ढेर हैं, आवरणों पर चढ़े और आवरण हैं।

मनुष्य की कलाएँ और विद्याएँ आवरणों के सिवाय और क्या हैं ?

उसके साम्राज्य, राष्ट्र, जातीय अलगाव, और युद्ध के मार्ग पर चल रहे धर्म—क्या ये आवरण की पूजा के सम्प्रदाय नहीं हैं ?

उसके उचित और अनुचित, मान और अपमान, न्याय और अन्याय के नियम; उसके असंख्य सामाजिक सिद्धान्त और रूढ़ियाँ—क्या ये आवरण नहीं हैं ?

उसके द्वारा अमूल्य का मूल्यांकन और उसका अमित को नापना, असीम को सीमांकित करना—क्या यह सब उस लुंगी पर और पैबन्द लगाना नहीं है जिस पर पहले ही कई पैबन्द लगे हुए हैं !

पीड़ा से भरे सुखों के लिये उसकी अमिट भूख; निर्धन बना देनेवाले धन के लिये उसका लोभ; दास बना देनेवाले प्रभुत्व के लिये उसकी प्यास, और तुच्छ बना देनेवाली शान के लिये उसकी लालसा—क्या ये सब आवरण नहीं हैं ?

नग्नता को ढकने के लिये अपनी दयनीय आतुरता में मनुष्य ने बहुत अधिक आवरण पहन लिये हैं जो समय के साथ उसकी त्वचा से इतने कस कर चिपक गये हैं कि अब वह उनमें और अपनी त्वचा में भेद नहीं कर पाता। और मनुष्य साँस लेने के लिये तड़पता है; वह अपनी अनेक त्वचाओं से छुटकारा पाने के लिये प्रार्थना करता है। अपने बोझ से छुटकारा पाने के लिये मनुष्य अपने उन्माद में सबकुछ करता है, लेकिन वही एक काम नहीं करता जो वास्तव में उसे उसके बोझ से छुटकारा दिला सकता है, और वह है उस बोझ को फेंक देना। वह अपनी अतिरिक्त त्वचाओं से मुक्त होना चाहता है, पर अपनी पूरी शक्ति से उनसे चिपका हुआ है। वह आवरण-रहित होना चाहता है, पर साथ ही चाहता है कि पूरी तरह कपड़े पहने रहे।

निरावरण होने का समय समीप है। और मैं अतिरिक्त त्वचाओं को—आवरणों को—उतार फेंकने में तुम्हारी सहायता करने के लिये आया हूँ ताकि अपनी त्वचाओं को उतार फेंकने में तुम भी संसार के उन सब लोगों की सहायता कर सको जिनमें तड़प है। मैं तो केवल विधि बताता हूँ; किन्तु अपनी त्वचा को उतार फेंकने का काम हरएक को स्वयं ही करना होगा, चाहे वह कितना ही कष्टदायी क्यों न हो।

अपने आपसे अपने बचाव के लिये किसी चमत्कार की प्रतीक्षा न करो, न ही पीड़ा से डरो; क्योंकि आवरण-रहित ज्ञान तुम्हारी पीड़ा को स्थायी आनन्द में बदल देगा।

फिर यदि दिव्य ज्ञान की नग्नता में तुम्हारा अपने आपसे सामना हो और यदि परमात्मा तुम्हें बुलाकर पूछे, “तुम कहाँ हो?” तो तुम शर्म महसूस नहीं करोगे, न तुम डरोगे, न ही तुम परमात्मा से छिपोगे। बल्कि तुम अडोल, बन्धन-मुक्त, दिव्य शान्ति से युक्त खड़े रहोगे, और परमात्मा को उत्तर देंगे:



“हमारे प्रभु, हमारी आत्मा, हमारे अस्तित्व, हमारे एकमात्र अहं, हमें देखिये। लज्जा, भय और पीड़ा में हम नेकी और बदी के लम्बे, विषम, और टेढ़े-मेढ़े उस रास्ते पर चलते रहे हैं जिसे आपने हमारे लिए समय के आरम्भ में निर्धारित किया था। निज-घर के लिये महाविरह ने हमारे पैरों को प्रेरणा दी और विश्वास ने हमारे हृदय को थामे रखा, और अब दिव्य ज्ञान ने हमारे बोझ उतार दिये हैं, हमारे घाव भर दिये हैं, और हमें वापस आपकी पावन उपस्थिति में ला खड़ा किया है—नेकी और बदी से मुक्त, जीवन और मृत्यु के आवरणों से मुक्त; द्वैत के सभी भ्रमों से मुक्त; आपके सर्वग्राही अहं के सिवाय और हर अहं से मुक्त। अपनी नग्नता को छिपाने के लिये कोई आवरण पहने बिना हम लज्जामुक्त, प्रकाशमान, भय-रहित होकर आपके सम्मुख खड़े हैं। देखिये, हम एक हो गये हैं। देखिये, हमने आत्म-विजय प्राप्त कर ली है।”

और परमात्मा तुम्हें अनन्त प्रेम से गले लगा लेगा, और तुम्हें सीधे अपने दिव्य जीवन-वृक्ष तक ले जायेगा।

यही शिक्षा थी मेरी नूह को।

यही शिक्षा है मेरी तुम्हें।

नरौंदा: यह बात भी मुर्शिद ने तब कही थी जब हम अँगीठी के पास बैठे थे।

## रात्रि—अनुपम गायिका

नरौंदा: पर्वतीय नीड़ के लिये, जिसे बर्फ़ीली हवाओं और बर्फ़ के भारी अम्बारों ने पूरे शीतकाल में हमारी पहुँच से परे रखा था, हम सब इस प्रकार तरस रहे थे जिस प्रकार कोई निर्वासित व्यक्ति अपने घर के लिये तरसता है।

हमें नीड़ में ले जाने के लिये मुर्शिद ने बसन्त की एक ऐसी रात चुनी जिसके नेत्र कोमल और उज्ज्वल थे, उसकी साँस उष्ण और सुगन्धित थी, जिसका हृदय सजीव और सजग था।

वे आठ सपाट पत्थर, जो हमारे बैठने के काम आते थे, अभी तक वैसे ही अर्ध-चक्र के आकार में रखे थे जैसे हम उन्हें उस दिन छोड़ गये थे जब मुर्शिद को बेसार ले जाया गया था। स्पष्ट था कि उस दिन से कोई भी नीड़ में नहीं गया था।

हममें से प्रत्येक अपने-अपने स्थान पर बैठ गया और मुर्शिद के बोलने की प्रतीक्षा करने लगा। परन्तु वे खामोश थे। पूर्णिमा का चन्द्र भी, जिसकी किरणें मानो हमारा स्वागत कर रही थीं, आशा के साथ मुर्शिद के ओंठों की ओर टकटकी लगाये हुए था।

एक शिला से दूसरी शिला पर गिर रहे पहाड़ी झरनों ने रात्रि को अपने तुमुल संगीत से भर दिया था। बीच-बीच में किसी उल्लू की घू-घू या किसी झींगुर के गीत के खण्डित स्वर सुनाई देते थे।

गहरी खामोशी में प्रतीक्षा करते हमें काफ़ी देर हो चुकी थी जब मुर्शिद ने अपना सिर उठाया, और अपनी अधमुँदी आँखें खोलते हुए हमसे बोले:

**मीरदाद:** इस रात की शान्ति में मीरदाद चाहता है कि तुम रात्रि के गीत सुनो। रात्रि के गायक-वृन्द को सुनो। क्योंकि सचमुच ही रात्रि एक अनुपम गायिका है।

अतीत की सबसे अँधेरी दरारों में से; भविष्य के उज्ज्वलतम दुर्गों में से; आकाश के शिखरों तथा धरती की गहराइयों में से निकल रहे हैं रात्रि के स्वर, और तेज़ी से पहुँच रहे हैं विश्व के दूरतम कोनों तक। विशाल तरंगों के रूप में ये तुम्हारे कानों के चारों ओर लहरा रहे हैं। अपने कानों को अन्य सब स्वरों से मुक्त कर दो ताकि इन्हें सुन सको।

उतावली-भरा दिन जिसे आसानी से मिटा देता है, उतावली से मुक्त रात्रि उसे अपने क्षण भर के जादू से पुनः बना देती है। क्या चाँद और तारे दिन की तेज़ रोशनी में छिप नहीं जाते ? दिन जिसे कल्पना और असत्य के मिश्रण में डुबा देता है, रात्रि उसे नपे-तुले उल्लास के साथ दूर-दूर तक गाती है। जड़ी-बूटियों के सपने भी रात्रि के गायक-वृन्द में शामिल होकर उनके गीत में योग देते हैं।

सुनो आकाशपिण्डों को:

गगन में वे झूलते

सुनाते हैं लोरियाँ

दलदली बालू के

पालने में सो रहे भीमकाय शिशु को,

चीथड़े कंगाल के पहने हुए राजा को,

बेड़ियों-जंजीरों में जकड़ी हुई दामिनी को—

पोतड़ों में लिपटे हुए स्वयं परमात्मा को।

सुनो तुम धरती को,

एक ही समय पर जो

प्रसव में कराहती है, दूध भी पिलाती है,

पालती है, ब्याहती है, क़ब्र में सुलाती है।

सुनो वन-पशुओं को:



घूमते हैं जंगल में टोह में शिकार की,  
 चीखते, गुराते हैं, चीरते, चिर जाते हैं;  
 सुनो अपनी राहों पर रेंगते जन्तुओं को,  
 रहस्यमय गीत अपने गुनगुनाते कीड़ों को;  
 क्रिस्से चरागाहों के, गीत जल-प्रवाहों के  
 सुनो अपने सपनों में दोहराते विहंगों को;  
 वृक्षों को, झाड़ियों को, हर एक जीव को  
 मृत्यु के प्यालों में गट-गट पीते जीवन को।

शिखर से और वादी से,  
 मरुस्थल और सागर से,  
 तृणावृत भूमि के नीचे से और वायु से  
 आ रही चुनौती है समय में छिपे प्रभु को।

सुनो सभी माताओं को,  
 कैसे वे रोती हैं, कैसे बिलखती हैं;  
 और सभी पिताओं को,  
 कैसे वे कराहते हैं, कैसे आहें भरते हैं।  
 सुनो उनके बेटों को और उनकी बेटियों को  
 बन्दूक लेने भागते, बन्दूक से डर भागते,  
 प्रभु को फटकारते, और भाग्य को धिक्कारते।  
 स्वाँग रचते प्यार का और घृणा फुसफुसाते हैं,  
 पीते हैं जोश और पसीना छूटे डर से,  
 बोते हैं मुसकानें और काटते आँसू हैं,  
 अपने लाल खून से  
 उमड़ रही बाढ़ के प्रकोप को पैनाते हैं।

सुनो उनके क्षुधा-ग्रस्त पेटों को पिचकते,  
 सूजी हुई उनकी पलकों को झपकते,

कुम्हलाई अँगुलियों को  
उनकी आशा की लाश को ढूँढ़ते,  
और उनके हृदयों को  
फूलत-फूलते ढेरों में फूटते।

सुनो क्रूर मशीनों को तुम गड़गड़ाते हुए,  
दर्प-भरे नगरों को खण्डहर बन जाते हुए,  
शक्तिशाली दुर्गों को  
अपने ही अवसान की घण्टियाँ बजाते हुए,  
पुरातन कीर्ति-स्तम्भों को  
पंकिल रक्त-ताल में गिर छींटे उड़ाते हुए।

सुनो न्यायी लोगों की तुम प्रार्थनाओं को  
लोभ की चीखों के संग सुर मिलाते हुए,  
बच्चों की भोली-भाली तोतली बातों को  
दुष्टों की बकबक के साथ तुक मिलाते हुए।  
और किसी कन्या की लज्जारुण मुसकान को  
वेश्या की धूर्तता के संग चहचहाते हुए,  
और एक वीर के हर्षोन्माद को  
किसी मायावी के विचार गुनगुनाते हुए।

हर जनजाति और हर एक गोत्र के  
हर खेमे, हर कुटिया में रात्रि सुनाती है  
ऊँचे स्वर में तुरही पर  
युद्ध-गीत मनुष्य के।

पर जादूगरनी रात्रि  
लोरियाँ, चुनौतियाँ, युद्ध-गीत, सब कुछ  
ढाल देती एक ही मधुरतम गीत में।  
गीत इतना सूक्ष्म जो कान सुन पाये न—

गीत इतना भव्य, और अनन्त फैलाव में,  
स्वर में गहराई और टेक में मिठास इतनी,  
तुलना में फ़रिश्तों के तराने और वृन्दगान  
लगते मात्र कोलाहल और बड़बड़ाहट हैं।

आत्म-विजेता का  
यही विजय-गान है।

पर्वत जो रात्रि की गोद में हैं ऊँघते,  
यादों में डूबे मरु लिये टीले रेत के,  
भ्रमणशील तारे, सागर नींद में जो घूमते,  
निवासी प्रेत-पुरियों के,  
पावन-त्रयी और हरि-इच्छा,  
करते आत्म-विजेता का  
स्वागत हैं, जयघोष हैं।  
भाग्यवान् हैं वे जो सुनते हैं और बूझते।

भाग्यवान् हैं लोग जिनको  
रात्रि संग अकेले में होती अनुभूति है  
रात्रि जैसी शान्ति की, गहराई की, विस्तार की;  
लोग वे, अँधेरे में  
चेहरों पर जिनके अँधेरे में किये गये  
अपने कुकर्मों की पड़ती नहीं मार है;  
लोग वे, आँसू जिनकी  
ररकते नहीं पलकों में  
साथियों की आँखों से जो उन्होंने बहाये थे;  
हाथों में न जिनके  
लोभ से, द्वेष से, होती कभी खाज है;  
कानों को न जिनके  
अपनी तृष्णाओं की घेरती फूत्कार है;



विवेक को न जिनके  
 डंक कभी मारते उनके विचार हैं  
 भाग्यवान् हैं, हृदय जिनके  
 समय के हर कोने से घिरकर आती हुई  
 विविध चिन्ताओं के बैठने के छत्ते नहीं;  
 बुद्धि में जिनकी भय सुरंग खोद लेते नहीं;  
 साहस के साथ जो  
 कह सकते हैं रात्रि से, “दिखा दो हमें दिन को”  
 कह सकते हैं दिन को, “दिखा दो हमें रात्रि को”।  
 हाँ, बहुत भाग्यवान् हैं जिनको  
 रात्रि संग अकेले में होती अनुभूति है  
 रात्रि जैसी समस्वरता, नीरवता, अनन्तता की।  
 उनके लिए ही केवल  
 गाती है रात्रि यह गीत आत्म-विजेता का।

यदि तुम दिन के झूठे लाँछनों का सामना सिर ऊँचा रखकर विश्वास से चमकती आँखों से करना चाहते हो, तो शीघ्र ही रात्रि की मित्रता प्राप्त करो।

रात्रि के साथ मैत्री करो। अपने हृदय को अपने ही जीवन-रक्त से अच्छी तरह धोकर उसे रात्रि के हृदय में रख दो। अपनी आवरणहीन कामनाएँ रात्रि के वक्ष को सौंप दो, और दिव्य ज्ञान के द्वारा स्वतन्त्र होने की महत्वाकाँक्षा के अतिरिक्त अन्य सभी महत्वाकाँक्षाओं की उसके चरणों में बलि दे दो। तब दिन का कोई भी तीर तुम्हें बेध नहीं सकेगा, और तब रात्रि तुम्हारी ओर से लोगों के सामने गवाही देगी कि तुम सचमुच आत्म-विजेता हो।

बेचैन दिन भले ही पटकें तुम्हें इधर-उधर,  
 तारक-हीन रातें चाहे  
 अँधेरे में अपने लपेट लें तुम को,

फेंक दिया जाये तुम्हें विश्व के चौराहों पर,  
 चिह्न पदचिह्न न हों राह तुम्हें दिखाने को  
 फिर भी न डरोगे तुम  
 किसी भी मनुष्य से और न किसी स्थिति से,  
 न ही होगा शक तुम्हें लेशमात्र इसका  
 कि दिन और रातें, और मनुष्य और चीजें भी  
 जल्दी ही या देर से आयेंगे तुम्हारे पास,  
 और विनयपूर्वक प्रार्थना वे करेंगे  
 आदेश उन्हें देने को।  
 विश्वास क्योंकि रात्रि का प्राप्त होगा तुमको।  
 और विश्वास रात्रि का प्राप्त जो कर लेता है  
 सहज ही आदेश वह अगले दिन को देता है।

रात्रि के हृदय को ध्यान से सुनो, क्योंकि उसी के अन्दर आत्म-विजेता का हृदय धड़कता है।

यदि मेरे पास आँसू होते तो आज रात मैं उन्हें भेंट कर देता हर टिमटिमाते सितारे और रज-कण को; हर कल-कल करते नाले और गीत गाते टिड्डे को; वायु में अपनी सुगन्धित आत्मा को बिखेरते हर नील-पुष्प को; हर सरसराते समीर को; हर पर्वत और वादी को; हर पेड़ और घास की हर कोंपल को—इस रात्रि की सम्पूर्ण अस्थायी शान्ति और सुन्दरता को। मैं अपने आँसू मनुष्य की कृतघ्नता तथा बर्बर अज्ञान के लिये क्षमायाचना के रूप में इनके सामने उँडेल देता।

क्योंकि मनुष्य, घृणित पैसे के गुलाम, अपने स्वामी की सेवा में व्यस्त हैं, इतने व्यस्त कि स्वामी की आवाज़ और इच्छा के अतिरिक्त और किसी आवाज़ और इच्छा की ओर ध्यान नहीं दे सकते।

और भयंकर है मनुष्यों के स्वामी का कारोबार—मनुष्य के संसार को एक ऐसे क़साईख़ाने में बदल देना जहाँ वे ही गला काटनेवाले हैं और वे ही गला कटवानेवाले। और इसलिये, लहू के नशे में चूर मनुष्य मनुष्यों को

इस विश्वास में मारते चले जाते हैं कि जिन मनुष्यों का कोई खून करता है, धरती के सब प्रसादों और आकाश की समस्त उदारता में उन मनुष्यों का सभी हिस्सा उसे विरासत में मिल जाता है।

अभागे मूर्ख! क्या कभी भेड़िया किसी दूसरे भेड़िये का पेट चीरकर मेमना बना है? क्या कभी कोई साँप अपने साथी साँपों को कुचल और निगल कर कपोत बना है? क्या कभी किसी मनुष्य ने अन्य मनुष्यों की हत्या करके उनके दुःखों को छोड़ उनकी खुशियाँ विरासत में पाई हैं? क्या कभी कोई कान दूसरे कानों में डाट लगाकर जीवन की स्वर-तरंगों का अधिक आनन्द ले सका है? या कभी कोई आँख अन्य आँखों को नोचकर सुन्दरता के विविध रूपों के प्रति अधिक सजग हुई है?

क्या ऐसा कोई मनुष्य या मनुष्यों का समुदाय है जो केवल एक घण्टे के वरदानों का भी पूरी तरह उपयोग कर सके, वरदान चाहे खाने-पीने के पदार्थों के हों, चाहे प्रकाश और शान्ति के? धरती जितने जीवों को पाल सकती है उससे अधिक जीवों को जन्म नहीं देती। आकाश अपने बच्चों के पालन के लिये न भीख माँगता है, न चोरी करता है।

वे झूठ बोलते हैं जो मनुष्य से कहते हैं, “यदि तुम तृप्त होना चाहते हो तो मारो और जिन्हें मारते हो उनकी विरासत प्राप्त करो।”

जो मनुष्य का प्यार, धरती का दूध और मधु, तथा आकाश का गहरा स्नेह पाकर नहीं फला-फूला, वह मनुष्य के आँसू, रक्त और पीड़ा के आधार पर कैसे फले-फूलेगा?

वे झूठ बोलते हैं जो मनुष्य से कहते हैं, “हर राष्ट्र अपने लिये है।”

कनखजूरा कभी एक इंच भी आगे कैसे बढ़ सकता है यदि उसका हर पैर दूसरे पैरों के विरुद्ध दिशा में चले, या दूसरे पैरों के आगे बढ़ने में रुकावट डाले, या दूसरे पैरों के विनाश के लिये षड्यन्त्र रचे? मनुष्य भी क्या एक दैत्याकार कनखजूरा नहीं है, राष्ट्र जिसके अनेक पैर हैं?

वे झूठ बोलते हैं जो मनुष्य से कहते हैं, “शासन करना सम्मान की बात है, शासित होना लज्जा की।”



क्या गधे को हाँकनेवाला उसकी दुम के पीछे-पीछे नहीं चलता? क्या जेलर कैदियों से बँधा नहीं होता?

वास्तव में गधा अपने हाँकनेवाले को हाँकता है; कैदी अपने जेलर को जेल में बन्द रखता है।

वे झूठ बोलते हैं जो मनुष्य से कहते हैं, “दौड़ उसी की जो तेज़ दौड़े, सच्चा वही जो समर्थ हो।”

क्योंकि जीवन मांसपेशियों और बाहुबल की दौड़ नहीं है। लूले-लँगड़े भी बहुधा स्वस्थ लोगों से बहुत पहले मंज़िल पर पहुँच जाते हैं। और कभी-कभी तो एक तुच्छ मच्छर भी कुशल योद्धा को पछाड़ देता है।

वे झूठ बोलते हैं जो मनुष्य से कहते हैं कि अन्याय का उपचार केवल अन्याय से ही किया जा सकता है। अन्याय के बदले में थोपा गया अन्याय कभी न्याय नहीं बन सकता। अन्याय को अकेला छोड़ दो, वह स्वयं ही अपने आपको मिटा देगा।

परन्तु भोले लोग अपने स्वामी पैसे के सिद्धान्तों को आसानी से सच मान लेते हैं। पैसे और उसके जमाखोरों में वे भक्तिपूर्ण विश्वास रखते हैं और उनकी हर मनमानी सनक के आगे सर झुकाते हैं। रात्रि का न वे विश्वास करते हैं न परवाह। जब कि रात्रि मुक्ति के गीत गाती है, और मुक्ति तथा प्रभु-प्राप्ति की प्रेरणा देती है। तुम्हें तो, मेरे साथियो, वे या तो पागल करार देंगे या पाखण्डी।

मनुष्यों की कृतघ्नता और तीखे उपहास का बुरा मत मानना; बल्कि प्रेम और असीम धैर्य के साथ स्वयं उनसे तथा आग और खून की बाढ़ से, जो शीघ्र ही उन पर टूट पड़ेगी, उनके बचाव के लिये उद्यम करना।

समय आ गया है कि मनुष्य मनुष्य की हत्या करना बन्द कर दे।

सूर्य, चन्द्र और तारे अनादिकाल से प्रतीक्षा कर रहे हैं कि उन्हें देखा, सुना और समझा जाये; धरती की लिपि प्रतीक्षा कर रही है कि उसे पढ़ा जाये; आकाश के राजपथ, कि उन पर यात्रा की जाये; समय का उलझा हुआ धागा, कि उसमें पड़ी गाँठों को खोला जाये; ब्रह्माण्ड की सुगन्ध, कि उसे सूँघा जाये; पीड़ा के कब्रिस्तान, कि उन्हें मिटा दिया जाये; मौत

की गुफा, कि उसे ध्वस्त किया जाये; ज्ञान की रोटी, कि उसे चखा जाये; और मनुष्य, पर्दों में छिपा परमात्मा, प्रतीक्षा कर रहा है कि उसे अनावृत किया जाये।

समय आ गया है कि मनुष्य मनुष्यों को लूटना बन्द कर दें और सर्वहित के काम को पूरा करने के लिये एक हो जायें। बहुत बड़ी है यह चुनौती, पर मधुर होगी विजय भी। तुलना में और सब तुच्छ तथा खोखला है।

हाँ, समय आ गया है। पर ऐसे बहुत कम हैं जो ध्यान देंगे। बाक़ी को एक और पुकार की प्रतीक्षा करनी होगी—एक और भोर की।

## माँ-अण्डाणु

**मीरदादः** मीरदाद चाहता है कि इस रात के सन्नाटे में तुम एकाग्रचित्त होकर माँ-अण्डाणु के विषय में विचार करो।

स्थान और जो कुछ उसके अन्दर है एक अण्डाणु है जिसका खोल समय है। यही माँ-अण्डाणु है।

जैसे धरती को वायु लपेटे हुए है, वैसे ही इस अण्डाणु को लपेटे हुए है विकसित परमात्मा, विराट् परमात्मा—जीवन जो कि अमूर्त, अनन्त और अकथ है।

इस अण्डाणु में लिपटा हुआ है कुण्डलित परमात्मा, लघु-परमात्मा—जीवन जो मूर्त है, किन्तु उसी तरह अनन्त और अकथ।

भले ही प्रचलित मानवीय मानदण्ड के अनुसार माँ-अण्डाणु अमित है, फिर भी इसकी सीमाएँ हैं। यद्यपि यह स्वयं अनन्त नहीं है, फिर भी इसकी सीमाएँ हर ओर अनन्तता को छूती हैं।

ब्रह्माण्ड में जो भी पदार्थ और जीव हैं, वे सब उसी लघु-परमात्मा को लपेटे हुए समय-स्थान के अण्डाणुओं से अधिक और कुछ नहीं, परन्तु सबमें लघु-परमात्मा प्रसार की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में है। पशु के अन्दर के लघु-परमात्मा की अपेक्षा मनुष्य के अन्दर के लघु-परमात्मा का और वनस्पति के अन्दर के लघु-परमात्मा की अपेक्षा पशु के अन्दर के लघु-परमात्मा का समय-स्थान में प्रसार अधिक है। और सृष्टि में नीचे-नीचे की श्रेणियों में क्रमानुसार ऐसा ही है।

दृश्य तथा अदृश्य सब पदार्थों और जीवों का प्रतिनिधित्व करते अनगिनत अण्डाणुओं को माँ-अण्डाणु के अन्दर इस क्रम में रखा गया है



कि प्रसार में बड़े अण्डाणु के अन्दर उसके निकटतम छोटा अण्डाणु है, और यही क्रम सबसे छोटे अण्डाणु तक चलता है। अण्डाणुओं के बीच में जगह है और सबसे छोटा अण्डाणु केन्द्रीय नाभिक है जो अत्यन्त अल्प समय तथा स्थान के अन्दर बन्द है।

अण्डाणु के अन्दर अण्डाणु, फिर उस अण्डाणु के अन्दर अण्डाणु, मानवीय गणना से परे और सब प्रभु द्वारा अनुप्राणित—यही ब्रह्माण्ड है, मेरे साथियो।

फिर भी मैं महसूस करता हूँ कि मेरे शब्द कठिन हैं, वे तुम्हारी बुद्धि की पकड़ में नहीं आ सकते। और यदि कभी शब्द पूर्ण ज्ञान तक ले जानेवाली सीढ़ी के सुरक्षित तथा स्थिर डण्डे बनाये गये होते तो मुझे भी अपने शब्दों को सुरक्षित तथा स्थिर डण्डे बनाने में प्रसन्नता होती। इसलिये यदि तुम उन ऊँचाइयों, गहराइयों और चौड़ाइयों तक पहुँचना चाहते हो जिन तक मीरदाद तुम्हें पहुँचाना चाहता है, तो बुद्धि से बड़ी किसी शक्ति के द्वारा शब्दों से बड़ी किसी वस्तु का सहारा लो।

शब्द, अधिक से अधिक, बिजली की कौंध हैं जो क्षितिजों की झलक दिखाती हैं; ये उन क्षितिजों तक पहुँचने का मार्ग नहीं हैं; स्वयं क्षितिज तो बिलकुल ही नहीं। इसलिये जब मैं तुम्हारे सम्मुख माँ-अण्डाणु और अण्डाणुओं की, तथा विराट्-परमात्मा और लघु-परमात्मा की बात करता हूँ तो मेरे शब्दों को पकड़कर न बैठ जाओ, बल्कि कौंध की दिशा में चलो। तब तुम देखोगे कि मेरे शब्द तुम्हारी कमजोर बुद्धि के लिये बलशाली पंख हैं।

अपने चारों ओर की प्रकृति पर ध्यान दो। क्या तुम उसे अण्डाणु के नियम पर रची गई नहीं पाते हो? हाँ, अण्डाणु में तुम्हें सम्पूर्ण सृष्टि की कुंजी मिल जायेगी।

तुम्हारा सिर, तुम्हारा हृदय, तुम्हारी आँख अण्डाणु हैं। अण्डाणु है हर फूल और उसका हर बीज। अण्डाणु है पानी की एक बूँद तथा प्रत्येक प्राणी का प्रत्येक वीर्याणु। और आकाश में अपने रहस्यमय मार्गों पर चल रहे अनगिनत नक्षत्र क्या अण्डाणु नहीं हैं जिनके अन्दर प्रसार की भिन्न-भिन्न अवस्थाओं में पहुँचा हुआ जीवन का सार—लघु-परमात्मा—निहित

है? क्या जीवन निरन्तर अण्डाणु में से ही नहीं निकल रहा है और वापस अण्डाणु में ही नहीं जा रहा है?

निःसन्देह, चमत्कारपूर्ण और निरन्तर है सृष्टि की प्रक्रिया। जीवन का प्रवाह माँ-अण्डाणु की सतह से उसके केन्द्र तक, तथा केन्द्र से वापस सतह तक बिना रुके जारी रहता है। केन्द्र-स्थित लघु-परमात्मा जैसे-जैसे समय तथा स्थान में फैलता जाता है, जीवन के निम्नतम वर्ग से जीवन के उच्चतम वर्ग तक एक अण्डाणु से दूसरे अण्डाणु में प्रवेश करता चला जाता है। सबसे नीचे का वर्ग समय तथा स्थान में सबसे कम फैला हुआ है और सबसे ऊँचा वर्ग सबसे अधिक। एक अण्डाणु से दूसरे अण्डाणु में जाने में लगनेवाला समय भिन्न-भिन्न होता है—कुछ स्थितियों में पलक की एक झपक होता है तो कुछ में पूरा युग। और इस प्रकार चलती रहती है सृष्टि की प्रक्रिया जब तक माँ-अण्डाणु का खोल टूट नहीं जाता, और लघु-परमात्मा विराट्-परमात्मा होकर बाहर नहीं निकल आता।

इस प्रकार जीवन एक प्रसार, एक वृद्धि और एक प्रगति है, लेकिन उस अर्थ में नहीं जिस अर्थ में लोग वृद्धि और प्रगति का उल्लेख प्रायः करते हैं; क्योंकि उनके लिये वृद्धि है आकार में बढ़ना, और प्रगति आगे बढ़ना। जब कि वास्तव में वृद्धि का तात्पर्य है समय और स्थान में सब तरफ फैलना; और प्रगति का तात्पर्य है सब दिशाओं में समान गति; पीछे भी और आगे भी, और नीचे तथा दायें-बायें और ऊपर भी। अतएव चरम वृद्धि है स्थान से परे फैल जाना और चरम प्रगति है समय की सीमा से आगे निकल जाना, और इस प्रकार विराट्-परमात्मा में लीन हो जाना और समय तथा स्थान के बन्धनों में से निकलकर परमात्मा की स्वतन्त्रता तक जा पहुँचना जो स्वतन्त्रता कहलाने योग्य एकमात्र अवस्था है। और यही है वह नियति जो मनुष्य के लिये निर्धारित है।

इन शब्दों पर ध्यान दो, साधुओ। यदि तुम्हारा रक्त तक इन्हें प्रसन्नतापूर्ण ग्रहण न कर ले, तो सम्भव है कि अपने आपको और दूसरों को स्वतन्त्र कराने के तुम्हारे प्रयत्न तुम्हारी और उनकी जंजीरों में और अधिक कड़ियाँ जोड़ दें। मीरदाद चाहता है कि तुम इन शब्दों को समझ



लो ताकि इन्हें समझने में तुम सब तड़पने वालों की सहायता कर सको। मीरदाद चाहता है कि तुम स्वतन्त्र हो जाओ ताकि उन सब लोगों को जो आत्म-विजयी और स्वतन्त्र होने के लिये तड़प रहे हैं तुम स्वतन्त्रता तक पहुँचा सको। इसलिये मीरदाद अण्डाणु के इस नियम को और अधिक स्पष्ट करना चाहेगा, खासकर जहाँ तक इसका सम्बन्ध मनुष्य से है।

मनुष्य से नीचे जीवों के सब वर्ग सामूहिक अण्डाणुओं में बन्द हैं। इस तरह पौधों के लिये उतने ही अण्डाणु हैं जितने पौधों के प्रकार हैं, जो अधिक विकसित हैं उनके अन्दर सभी कम विकसित बन्द हैं। और यही स्थिति कीड़ों, मछलियों और स्तनपायी जीवों की है; सदा ही जीवन के एक अधिक विकसित वर्ग के अन्दर उससे नीचे के सभी वर्ग बन्द होते हैं।

जैसे साधारण अण्डे के भीतर की जर्दी और सफ़ेदी उसके अन्दर के चूजे के भ्रूण का पोषण और विकास करती है, वैसे ही किसी भी अण्डाणु में बन्द सभी अण्डाणु उसके अन्दर के लघु-परमात्मा का पोषण और विकास करते हैं।

प्रत्येक अण्डाणु में समय-स्थान का जो अंश लघु-परमात्मा को मिलता है, वह पिछले अण्डाणु में मिलनेवाले अंश से थोड़ा भिन्न होता है। इसलिये समय-स्थान में लघु-परमात्मा के प्रसार में अन्तर होता है। गैस में वह बिखरा हुआ और आकारहीन होता है, पर तरल पदार्थ में अधिक घना हो जाता है और आकार धारण करने की स्थिति में आ जाता है; जब कि खनिज में वह एक निश्चित आकार और स्थिरता धारण कर लेता है। परन्तु इन सब स्थितियों में वह जीवन के गुणों से रहित होता है जो उच्चतर श्रेणियों में प्रकट होते हैं। वनस्पति में वह ऐसा रूप अपनाता है जिसमें बढ़ने, अपनी संख्या-वृद्धि करने और महसूस करने की क्षमता होती है। पशु में वह महसूस करता है, चलता है और सन्तान पैदा करता है; उसमें स्मरण-शक्ति होती है और सोच-विचार के मूलतत्त्व भी। लेकिन मनुष्य में, इन सब गुणों के अतिरिक्त, वह एक व्यक्तित्व और सोच-विचार करने, अपने आपको अभिव्यक्त करने तथा सृजन करने की क्षमता भी प्राप्त कर लेता है। निःसन्देह परमात्मा के सृजन की तुलना में मनुष्य का सृजन ऐसा



ही है जैसा किसी महान् वास्तुकार द्वारा निर्मित एक भव्य मन्दिर या सुन्दर दुर्ग की तुलना में एक बच्चे द्वारा बनाया गया ताश के पत्तों का घर। किन्तु है तो वह फिर भी सृजन ही।

प्रत्येक मनुष्य एक अलग अण्डाणु बन जाता है, अधिक विकसित मनुष्य में कम विकसित मानव-अण्डाणुओं के साथ सब पशु, वनस्पति तथा उनसे निचले स्तर के अण्डाणु, केन्द्रीय नाभिक तक, बन्द होते हैं। जब कि सबसे अधिक विकसित मनुष्य में—आत्म-विजेता में—सभी मानव अण्डाणु और उनसे निचले स्तर के सभी अण्डाणु भी बन्द होते हैं।

किसी मनुष्य को अपने अन्दर बन्द रखनेवाले अण्डाणु का विस्तार उस मनुष्य के समय-स्थान के क्षितिजों के विस्तार से नापा जाता है। जहाँ एक मनुष्य की समय की चेतना में उसके शैशव से लेकर वर्तमान घड़ी तक की अल्प अवधि से अधिक और कुछ नहीं समा सकता, और उसके स्थान के क्षितिजों के घेरे में उसकी दृष्टि की पहुँच से परे का कोई पदार्थ नहीं आता, वहाँ दूसरे व्यक्ति के क्षितिज स्मरणातीत भूत और सुदूर भविष्य को, तथा स्थान की लम्बी दूरियों को जिन पर अभी उसकी दृष्टि नहीं पड़ी है अपने घेरे में ले आते हैं।

प्रसार के लिये सब मनुष्यों को समान भोजन मिलता है, पर उनका खाने और पचाने का सामर्थ्य समान नहीं होता; क्योंकि वे एक ही अण्डाणु में से एक ही समय और एक ही स्थान पर नहीं निकले हैं। इसलिये समय-स्थान में उनके प्रसार में अन्तर होता है; और इसी लिये कोई दो मनुष्य ऐसे नहीं मिलते जो हूबहू एक जैसे हों।

सब लोगों के सामने प्रचुर मात्रा में और खुले हाथों परोसे गये भोजन में से एक व्यक्ति स्वर्ण की शुद्धता और सुन्दरता को देखने का आनन्द लेता है और तृप्त हो जाता है, जब कि दूसरा स्वर्ण का स्वामी होने का रस लेता है और सदा भूखा रहता है। एक शिकारी एक सुन्दर हिरनी को देखकर उसे मारने और खाने के लिये प्रेरित होता है; एक कवि उसी हिरनी को देखकर मानो पंखों पर उड़ान भरता हुआ उस समय और स्थान में जा पहुँचता है जिसका शिकारी कभी सपना भी नहीं देखता। मिकेयन, शमदाम

के साथ एक ही नौका में रहते हुए, परम स्वतन्त्रता और समय तथा स्थान की सीमाओं से पूर्ण मुक्ति के सपने देखता है; जब कि शमदाम सदा अपने आपको समय तथा स्थान के और अधिक लम्बे तथा और अधिक दृढ़ रस्सों से बाँधने में व्यस्त रहता है। वास्तव में मिकेयन और शमदाम पास-पास रहते हुए भी एक-दूसरे से बहुत दूर हैं। मिकेयन के अन्दर शमदाम है; परन्तु शमदाम के अन्दर मिकेयन नहीं है। इसलिये मिकेयन शमदाम को समझ सकता है, परन्तु शमदाम मिकेयन को नहीं समझ सकता।

एक आत्म-विजेता का जीवन हर व्यक्ति के जीवन को हर ओर से छूता है, क्योंकि सब व्यक्तियों के जीवन उसमें समाये हुए हैं। परन्तु आत्म-विजेता के जीवन को किसी भी व्यक्ति का जीवन हर ओर से नहीं छूता। अत्यन्त सरल व्यक्ति को आत्म-विजेता अत्यन्त सरल प्रतीत होता है। अत्यन्त विकसित व्यक्ति को वह अत्यन्त विकसित दिखाई देता है। किन्तु आत्म-विजेता के सदा कुछ ऐसे पक्ष होते हैं जिन्हें आत्म-विजेता के सिवाय और कोई न कभी समझ सकता है, न महसूस कर सकता है। यही कारण है कि वह सबके बीच में रहते हुए भी अकेला है; वह संसार में है फिर भी संसार का नहीं है।

लघु-परमात्मा बन्दी नहीं रहना चाहता। वह मनुष्य की बुद्धि से कहीं ऊँची बुद्धि का प्रयोग करते हुए समय तथा स्थान के कारावास से अपनी मुक्ति के लिये सदैव कार्य-रत रहता है। निम्न स्तर के जीवों में इस बुद्धि को लोग सहज-बुद्धि कहते हैं। साधारण मनुष्यों में वे इसे तर्क और उच्च कोटि के मनुष्यों में इसे दिव्य बुद्धि कहते हैं। यह सब तो वह है ही, पर इससे अधिक भी बहुत कुछ है। यह वह अनाम शक्ति है जिसे कुछ लोगों ने ठीक ही पवित्र शक्ति का नाम दिया है, और जिसे मीरदाद दिव्य ज्ञान कहता है।

समय के खोल को बेधनेवाला और स्थान की सीमा को लाँघनेवाला प्रथम मानव-पुत्र ठीक ही प्रभु का पुत्र कहलाता है। उसका अपने ईश्वरत्व का ज्ञान ठीक ही पवित्र शक्ति कहलाता है। किन्तु विश्वास रखो कि तुम भी प्रभु के पुत्र हो, और तुम्हारे अन्दर भी वह पवित्र शक्ति अपना कार्य कर रही है। उसके साथ कार्य करो, उसके विरुद्ध नहीं।

परन्तु जब तक तुम समय के खोल को बेध नहीं देते और स्थान की सीमा को लाँघ नहीं जाते, तब तक कोई यह न कहे, “मैं प्रभु हूँ”। बल्कि सब कहो, “प्रभु ही मैं है।” इस बात को अच्छी तरह ध्यान में रखो, कहीं ऐसा न हो कि अहंकार तथा खोखली कल्पनाएँ तुम्हारे हृदय को भ्रष्ट कर दें और तुम्हारे अन्दर हो रहे पवित्र शक्ति के कार्य का विरोध करें। क्योंकि अधिकांश लोग पवित्र शक्ति के कार्य के विरुद्ध काम करते हैं, और इस प्रकार अपनी अन्तिम मुक्ति को स्थगित कर देते हैं।

समय को जीतने के लिये यह आवश्यक है कि तुम समय द्वारा ही समय के विरुद्ध लड़ो। स्थान को पराजित करने के लिये यह आवश्यक है कि तुम स्थान को ही स्थान का आहार बनने दो। दोनों में से एक का भी स्नेहपूर्ण स्वागत करना दोनों का बन्द होना तथा नेकी और बदी की अन्तहीन हास्य-जनक चेष्टाओं का बन्धक बने रहना है।

जिन लोगों ने अपनी नियति को पहचान लिया है और उस तक पहुँचने के लिये तड़पते हैं, वे समय के साथ लाड़ करने में समय नहीं गँवाते और न ही स्थान में भटकने में अपने क़दम नष्ट करते हैं। सम्भव है कि वे एक ही लघु जीवन-काल में युगों को समेट लें तथा अपार दूरियों को मिटा दें। वे इस बात की प्रतीक्षा नहीं करते कि मृत्यु उन्हें उनके इस अण्डाणु से अगले अण्डाणु में ले जाये; वे जीवन पर विश्वास रखते हैं कि बहुत-से अण्डाणुओं के खोलों को एक साथ तोड़ डालने में वह उनकी सहायता करेगा।

इसके लिये तुम्हें हर वस्तु के मोह का त्याग करना होगा, ताकि समय तथा स्थान की तुम्हारे हृदय पर कोई पकड़ न रहे। जितना अधिक तुम्हारा परिग्रह होगा, उतने ही अधिक होंगे तुम्हारे बन्धन। जितना कम तुम्हारा परिग्रह होगा, उतने ही कम होंगे तुम्हारे बन्धन।

हाँ, अपने विश्वास, अपने प्रेम तथा दिव्य ज्ञान के द्वारा मुक्ति के लिये अपनी तड़प के अतिरिक्त हर वस्तु की लालसा को त्याग दो।



## परमात्मा की राह पर प्रकाश-कण

**मीरदाद:** इस रात के सन्नाटे में मीरदाद परमात्मा की ओर जानेवाली तुम्हारी राह पर कुछ प्रकाश-कण बिखेरना चाहता है।

विवाद से बचो। सत्य स्वयं प्रमाणित है; उसे किसी प्रमाण की आवश्यकता नहीं। जिसे तर्क और प्रमाण के सहारे की आवश्यकता होती है, उसे देर-सवेर तर्क और प्रमाण के द्वारा ही गिरा दिया जाता है।

किसी बात को सिद्ध करना उसके प्रतिपक्ष का खण्डन करना है। उसके प्रतिपक्ष को सिद्ध करना उसका खण्डन करना है। परमात्मा का कोई प्रतिपक्ष है ही नहीं। फिर तुम कैसे उसे सिद्ध करोगे या कैसे उसका खण्डन करोगे ?

यदि जिह्वा को सत्य का वाहक बनाना हो तो उसे कभी मूसल, विषदन्त, वातसूचक, कलाबाज़ या सफ़ाई करनेवाला नहीं बनाना चाहिये।

बेज़बानों को राहत देने के लिये बोलो। अपने आपको राहत देने के लिये मौन रहो।

शब्द जहाज़ हैं जो स्थान के समुद्रों में चलते हैं और अनेक बन्दरगाहों पर रुकते हैं। सावधान रहो कि तुम उनमें क्या लादते हो; क्योंकि अपनी यात्रा समाप्त करने के बाद वे अपना माल आखिर तुम्हारे ही द्वार पर उतारेंगे।

घर के लिये जो महत्त्व झाड़ू का है, वही महत्त्व हृदय के लिये आत्म-परीक्षण का है। अपने हृदय को अच्छी तरह बुहारो।

अच्छी तरह बुहारा गया हृदय एक अजेय दुर्ग है।

जैसे तुम लोगों और पदार्थों को अपना आहार बनाते हो, वैसे ही वे तुम्हें अपना आहार बनाते हैं। यदि तुम चाहते हो कि तुम्हें विष न मिले, तो दूसरों के लिये स्वास्थ्यप्रद भोजन बनो।

जब तुम्हें अगले कदम के विषय में सन्देह हो, निश्चल खड़े रहो।

जिसे तुम नापसन्द करते हो, वह तुम्हें नापसन्द करता है; उसे पसन्द करो और ज्यों का त्यों रहने दो। इस प्रकार तुम अपने रास्ते से एक बाधा हटा दोगे।

सबसे अधिक असह्य परेशानी है किसी बात को परेशानी समझना।

अपनी पसन्द का चुनाव कर लो: हर वस्तु का स्वामी बनना या किसी का भी नहीं। बीच का कोई मार्ग सम्भव नहीं।

रास्ते का हर रोड़ा एक चेतावनी है। चेतावनी को अच्छी तरह पढ़ लो, और रास्ते का रोड़ा प्रकाश-स्तम्भ बन जायेगा।

सीधा टेढ़े का भाई है। एक छोटा रास्ता है, दूसरा घुमावदार। टेढ़े के प्रति धैर्य रखो।

विश्वास-युक्त धैर्य स्वास्थ्य है। विश्वास-रहित धैर्य अर्धांग है।

होना, महसूस करना, सोचना, कल्पना करना, जानना—यह है मनुष्य के जीवन-चक्र के मुख्य पड़ावों का क्रम।

प्रशंसा करने और पाने से बचो; जब प्रशंसा सर्वथा निश्छल और उचित हो तब भी। जहाँ तक चापलूसी का सम्बन्ध है, उसकी कपटपूर्ण क्रसमों के प्रति गूँगे और बहरे बन जाओ।

देने का अहसास रखते हुए कुछ भी देना उधार लेना ही है।

वास्तव में तुम ऐसा कुछ भी नहीं दे सकते जो तुम्हारा है। तुम लोगों को केवल वही देते हो जो तुम्हारे पास उनकी अमानत है। जो तुम्हारा है, केवल तुम्हारा ही, वह तुम दे नहीं सकते, चाहो भी तो नहीं।

अपना सन्तुलन बनाये रखो, और तुम मनुष्यों के लिये अपने आपको नापने का मानदण्ड और तोलने का तराजू बन जाओगे।

गरीबी या अमीरी नाम की कोई चीज़ नहीं है। बात वस्तुओं का उपयोग करने के कौशल की है।

असल में गरीब वह है जो उन वस्तुओं का जो उसके पास हैं ग़लत उपयोग करता है। अमीर वह है जो अपनी वस्तुओं का सही उपयोग करता है।

बासी रोटी की सूखी पपड़ी भी ऐसी दौलत हो सकती है जिसे आँका न जा सके। सोने से भरा तहख़ाना भी ऐसी ग़रीबी हो सकता है जिससे छुटकारा न मिल सके।

जहाँ बहुत-से रास्ते एक केन्द्र में मिलते हों वहाँ इस अनिश्चय में मत पड़ो कि किस रास्ते पर चला जाये। प्रभु की खोज में लगे हृदय को सभी रास्ते प्रभु की ओर ले जाते हैं।

जीवन के सब रूपों के प्रति आदर-भाव रखो। सबसे तुच्छ रूप में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण रूप की कुंजी छिपी रहती है।

जीवन की सब कृतियाँ महत्त्वपूर्ण हैं—हाँ, अद्भुत, श्रेष्ठ और अद्वितीय। जीवन अपने आपको निरर्थक, तुच्छ कामों में नहीं लगाता।

प्रकृति के कारख़ाने में कोई वस्तु तभी बनती है जब वह प्रकृति की प्रेमपूर्ण देखभाल और श्रमपूर्ण कौशल की अधिकारी हो। तो क्या वह कम से कम तुम्हारे आदर की अधिकारी नहीं होनी चाहिये?

यदि मच्छर और चींटियाँ आदर के योग्य हों, तो तुम्हारे साथी मनुष्य उससे कितने अधिक आदर के योग्य होने चाहियें?

किसी मनुष्य से घृणा न करो। एक भी मनुष्य से घृणा करने की अपेक्षा प्रत्येक मनुष्य से घृणा पाना कहीं अच्छा है।

क्योंकि किसी मनुष्य से घृणा करना उसके अन्दर के लघु-परमात्मा से घृणा करना है। किसी भी मनुष्य के अन्दर लघु-परमात्मा से घृणा करना अपने अन्दर के लघु-परमात्मा से घृणा करना है। वह व्यक्ति भला कभी अपने बन्दरगाह तक कैसे पहुँचेगा जो बन्दरगाह को ले जानेवाले अपने एकमात्र मल्लाह का अनादर करता हो?

नीचे क्या है, यह जानने के लिये ऊपर दृष्टि डालो। ऊपर क्या है, यह जानने के लिये नीचे दृष्टि डालो।

जितना ऊपर चढ़ते हो, उतना ही नीचे उतरो; नहीं तो तुम अपना सन्तुलन खो बैठोगे।



आज तुम शिष्य हो। कल तुम शिक्षक बन जाओगे। अच्छे शिक्षक बनने के लिये अच्छे शिष्य बने रहना आवश्यक है।

संसार में से बदी के घास-पात को उखाड़ फेंकने का यत्न न करो; क्योंकि घास-पात की भी अच्छी खाद बनती है।

उत्साह का अनुचित प्रयोग बहुधा उत्साही को ही मार डालता है।

केवल ऊँचे और शानदार वृक्षों से ही जंगल नहीं बन जाता; झाड़ियों और लिपटती लताओं की भी आवश्यकता होती है।

पाखण्ड पर पर्दा डाला जा सकता है, लेकिन कुछ समय के लिये ही; उसे सदा पर्दे में नहीं रखा जा सकता, न ही उसे हटाया या नष्ट किया जा सकता है।

दूषित वासनाएँ अन्धकार में जन्म लेती हैं और वहीं फलती-फूलती हैं। यदि तुम उन्हें नियन्त्रण में रखना चाहते हो तो उन्हें प्रकाश में आने की स्वतन्त्रता दो।

यदि तुम हजार पाखण्डियों में से एक को भी सहज ईमानदारी की राह पर वापस लाने में सफल हो जाते हो तो सचमुच महान् है तुम्हारी सफलता।

मशाल को ऊँचे स्थान पर रखो, और उसे देखने के लिये लोगों को बुलाते न फिरो। जिन्हें प्रकाश की आवश्यकता है उन्हें किसी निमन्त्रण की आवश्यकता नहीं होती।

बुद्धिमत्ता अधूरी बुद्धि वाले के लिये बोझ है, जैसे मूर्खता मूर्ख के लिये बोझ है। बोझ उठाने में अधूरी बुद्धि वाले की सहायता करो और मूर्ख को अकेला छोड़ दो; अधूरी बुद्धि वाला मूर्ख को तुमसे अधिक सिखा सकता है।

कई बार तुम्हें अपना मार्ग दुर्गम, अन्धकारपूर्ण और एकाकी लगेगा। अपना इरादा पक्का रखो और हिम्मत के साथ कदम बढ़ाते जाओ; और हर मोड़ पर तुम्हें एक नया साथी मिल जायेगा।

पथ-विहीन स्थान में ऐसा कोई पथ नहीं जिस पर अभी तक कोई न चला हो। जिस पथ पर पद-चिह्न बहुत कम और दूर-दूर हैं, वह सीधा और सुरक्षित है, चाहे कहीं-कहीं ऊबड़-खाबड़ और सुनसान है।

जो मार्गदर्शन चाहते हैं उन्हें मार्गदर्शक मार्ग दिखा सकते हैं, उस पर चलने के लिये विवश नहीं कर सकते। याद रखो, तुम मार्गदर्शक हो।

अच्छा मार्गदर्शक बनने के लिये आवश्यक है कि स्वयं अच्छा मार्गदर्शन पाया हो। अपने मार्गदर्शक पर विश्वास रखो।

कई लोग तुमसे कहेंगे, “हमें रास्ता दिखाओ।” किन्तु थोड़े ही, बहुत ही थोड़े कहेंगे, “हम तुमसे विनती करते हैं कि रास्ते में हमारी रहनुमाई करो”।

आत्म-विजय के मार्ग पर वे थोड़े-से लोग उन कई लोगों से अधिक महत्त्व रखते हैं।

तुम जहाँ चल न सको, रेंगो। जहाँ दौड़ न सको, चलो; जहाँ उड़ न सको, दौड़ो; जहाँ समूचे विश्व को अपने अन्दर रोककर खड़ा न कर सको, उड़ो।

जो व्यक्ति तुम्हारी अगुआई में चलने का प्रयास करते हुए ठोकर खाता है उसे केवल एक बार, दो बार, या सौ बार ही नहीं उठाओ। याद रखो कि तुम भी कभी बच्चे थे, और उसे तब तक उठाते रहो जब तक वह ठोकर खाना बन्द न कर दे।

अपने हृदय और मन को क्षमा से पवित्र कर लो ताकि जो भी सपने तुम्हें आयें वे पवित्र हों।

जीवन एक ज्वर है जो हर मनुष्य की प्रवृत्ति या धुन के अनुसार भिन्न-भिन्न प्रकार का और भिन्न-भिन्न मात्रा में होता है; और इसमें मनुष्य सदा प्रलाप की अवस्था में रहता है। भाग्यशाली हैं वे मनुष्य जो दिव्य ज्ञान से प्राप्त होनेवाली पवित्र स्वतन्त्रता के नशे में उन्मत्त रहते हैं।

मनुष्य के ज्वर का रूप-परिवर्तन किया जा सकता है; युद्ध के ज्वर को शान्ति के ज्वर में बदला जा सकता है और धन-संचय के ज्वर को प्रेम का संचय करने के ज्वर में। ऐसी है दिव्य ज्ञान की वह रसायन-विद्या जिसे तुम्हें उपयोग में लाना है और जिसकी तुम्हें शिक्षा देनी है।

जो मर रहे हैं उन्हें जीवन का उपदेश दो, जो जी रहे हैं उन्हें मृत्यु का। किन्तु जो आत्म-विजय के लिये तड़प रहे हैं, उन्हें दोनों से मुक्ति का उपदेश दो।

वश में रखने और वश में होने में बड़ा अन्तर है। तुम उसी को वश में रखते हो जिससे तुम प्यार करते हो। जिससे तुम घृणा करते हो, उसके तुम वश में होते हो। वश में होने से बचो।

समय और स्थान के विस्तार में एक से अधिक पृथ्वियाँ अपने पथ पर घूम रही हैं। तुम्हारी पृथ्वी इस परिवार में सबसे छोटी है, और यह बड़ी हृष्ट-पुष्ट बालिका है।

एक निश्चल गति—कैसा विरोधाभास है! किन्तु परमात्मा में संसारों की गति ऐसी ही है।

यदि तुम जानना चाहते हो कि छोटी-बड़ी वस्तुएँ बराबर कैसे हो सकती हैं तो अपने हाथों की अँगुलियों पर दृष्टि डालो।

संयोग बुद्धिमानों के हाथ में एक खिलौना है; मूर्ख संयोग के हाथ में खिलौना होते हैं।

कभी किसी चीज़ की शिकायत न करो। किसी चीज़ की शिकायत करना उसे अपने लिये अभिशाप बना लेना है। उसे भली प्रकार सहन कर लेना उसे उचित दण्ड देना है। किन्तु उसे समझ लेना उसे एक सच्चा सेवक बना लेना है।

प्रायः ऐसा होता है कि शिकारी लक्ष्य किसी हिरनी को बनाता है परन्तु लक्ष्य चूकने से मारा जाता है कोई खरगोश जिसकी उपस्थिति का उसे बिलकुल ज्ञान न था। ऐसी स्थिति में एक समझदार शिकारी कहेगा, “मैंने वास्तव में खरगोश को ही लक्ष्य बनाया था, हिरनी को नहीं। और मैंने अपना शिकार मार लिया।”

लक्ष्य अच्छी तरह से साधो। परिणाम जो भी हो अच्छा ही होगा।

जो तुम्हारे पास आ जाता है, वह तुम्हारा है। जो आने में विलम्ब करता है, वह इस योग्य नहीं कि उसकी प्रतीक्षा की जाये। प्रतीक्षा उसे करने दो।

जिसका निशाना तुम साधते हो यदि वह तुम्हें निशाना बना ले तो तुम निशाना कभी नहीं चूकोगे। चूका हुआ निशाना सफल निशाना होता है। अपने हृदय को निराशा के प्रहार के सामने अभेद्य बना लो।



निराशा वह चील है जिसे दुर्बल हृदय जन्म देते हैं और विफल आशाओं के सड़े-गले मांस पर पालते हैं।

एक पूर्ण हुई आशा कई मृत-जात आशाओं को जन्म देती है। यदि तुम अपने हृदय को कब्रिस्तान नहीं बनाना चाहते तो सावधान रहो, आशा के साथ उसका विवाह न करो।

हो सकता है किसी मछली के दिये सौ अण्डों में से केवल एक ही में से बच्चा निकले। तो भी बाक़ी निन्यानवे व्यर्थ नहीं जाते। प्रकृति बहुत उदार है, और बहुत विवेक है उसकी विवेकहीनता में। तुम भी लोगों के हृदय और बुद्धि में अपने हृदय और बुद्धि को बोने में उसी प्रकार उदार और विवेकपूर्वक विवेकहीन बनो।

किसी भी परिश्रम के लिये पुरस्कार मत माँगो। जो अपने परिश्रम से प्यार करता है, उसका परिश्रम स्वयं पर्याप्त पुरस्कार है।

सिरजनहार शब्द तथा पूर्ण सन्तुलन को याद रखो। जब तुम दिव्य ज्ञान के द्वारा यह सन्तुलन प्राप्त कर लोगे तभी तुम आत्म-विजेता बनोगे, और तभी तुम्हारे हाथ प्रभु के हाथों के साथ मिलकर कार्य करेंगे।

परमात्मा करे इस रात्रि की नीरवता और शान्ति का स्पन्दन तुम्हारे अन्दर तब तक होता रहे जब तक तुम उन्हें दिव्य ज्ञान की नीरवता और शान्ति में डुबा न दो।

यही शिक्षा थी मेरी नूह को।

यही शिक्षा है मेरी तुम्हें।

## नौका-दिवस तथा उसके धार्मिक अनुष्ठान

### जीवित दीपक के बारे में बेसार के सुलतान का सन्देश

नरौंदा: जब मुर्शिद बेसार से लौटे तब से शमदाम उदास और अलग-अलग सा रहता था। किन्तु जब नौका-दिवस निकट आ गया तो वह उल्लास तथा उत्साह से भर गया और सभी जटिल तैयारियों का छोटी से छोटी बातों तक का, नियन्त्रण उसने स्वयं सँभाल लिया।

अंगूर-बेल के दिवस की तरह नौका-दिवस को भी एक दिन से बढ़ाकर उल्लास-भरे आमोद-प्रमोद का पूरा सप्ताह बना लिया गया था जिसमें सब प्रकार की वस्तुओं तथा सामान का तेज़ी के साथ व्यापार होता था।

इस दिन के अनेक विशेष धार्मिक अनुष्ठानों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण हैं: बलि चढ़ाये जानेवाले बैल का वध, बलि-कुण्ड की अग्नि को प्रज्वलित करना, और उस अग्नि से वेदी पर पुराने दीपक का स्थान लेनेवाले नये दीपक को जलाना। यह पूरा कार्य मुखिया स्वयं बड़ी औपचारिकता के साथ करता है, जनसमूह उसका हाथ बटाता है और अन्त में हर व्यक्ति नये दीपक से एक मोमबत्ती जलाता है; ये मोमबत्तियाँ बाद में बुझा दी जाती हैं और दुष्ट आत्माओं के विरुद्ध तावीजों के रूप में सावधानी के साथ रख ली जाती हैं। धर्मक्रियाओं की समाप्ति पर मुखिया का भाषण देना एक प्रथा है।

अंगूर-बेल के दिवस पर आनेवाले यात्रियों की तरह नौका-दिवस के यात्री भी कोई न कोई उपहार और भेंट साथ लिये बिना कम ही आते हैं। अधिकांश यात्री बैल, मेढ़े और बकरे लाते हैं जो प्रकट रूप से तो नौका द्वारा भेंट किये गए बैल के साथ बलि चढ़ाने के लिये होते हैं, पर वास्तव में नौका के पशुधन में वृद्धि करने के लिये जाते हैं न कि मारे जाने के लिये।

नया दीपक आम तौर पर दूधिया पर्वत-माला के किसी राजा या धनी-मानी व्यक्ति के द्वारा भेंट किया जाता है। और क्योंकि यह भेंट प्रस्तुत करना बड़े सम्मान और सौभाग्य की बात माना जाता है और क्योंकि इसके दावेदार भी बहुत होते हैं, यह प्रथा बना दी गई है कि हर आगामी वर्ष के लिये भेंटकर्ता का चुनाव उत्सव की समाप्ति पर परची डालकर कर लिया जाये। राजाओं तथा धनवानों में उत्साह और श्रद्धा की होड़ लग जाती है; प्रत्येक प्रयत्न करता है कि उसका दीपक मूल्य तथा बनावट और कारीगरी की सुन्दरता में पहले के सब दीपकों को मात कर दे।

इस वर्ष दीपक भेंट करने के लिये बेसार के सुलतान को चुना गया था। सब लोग नये बहुमूल्य दीपक को देखने की प्रतीक्षा में थे, क्योंकि सुलतान अपने धन को खुले हाथों बाँटने के लिये और साथ ही नौका के प्रति अपने उत्साह के लिये प्रसिद्ध था।

उत्सव के एक दिन पहले शमदाम ने हमें और मुर्शिद को अपने कक्ष में बुलाया और हमसे अधिक मुर्शिद को सम्बोधित करते हुए उसने ये शब्द कहे:

*शमदाम:* कल एक पवित्र दिवस है; और हम सबको यही शोभा देता है कि उसकी पवित्रता को बनाये रखें।

पिछले झगड़े कुछ भी रहे हों, आओ उन्हें हम यहीं और अभी दफ़ना दें। यह नहीं होना चाहिये कि नौका की प्रगति धीमी पड़ जाये, या हमारे उत्साह में कोई कमी आ जाये। और परमात्मा न करे कि नौका रुक ही जाये।

मैं इस नौका का मुखिया हूँ। इसके संचालन का कठिन दायित्व मुझ पर है। इसका मार्ग निश्चित करने का अधिकार मुझे प्राप्त है। ये कर्तव्य और अधिकार मुझे विरासत में मिले हैं; इसी प्रकार मेरी मृत्यु के बाद वे



निश्चय ही तुममें से किसी को मिलेंगे। जैसे मैंने अपने अवसर की प्रतीक्षा की थी, तुम भी अपने अवसर की प्रतीक्षा करो।

यदि मैंने मीरदाद के साथ अन्याय किया है तो वह मेरे अन्याय को क्षमा कर दे।

**मीरदाद:** मीरदाद के साथ तुमने कोई अन्याय नहीं किया; लेकिन शमदाम के साथ तुमने घोर अन्याय किया है।

**शमदाम:** क्या शमदाम को शमदाम के साथ अन्याय करने की स्वतन्त्रता नहीं है?

**मीरदाद:** अन्याय करने की स्वतन्त्रता? कितने बेमेल हैं ये शब्द! क्योंकि अपने साथ अन्याय करना भी अपने अन्याय का दास बनना है; जब कि दूसरों के प्रति अन्याय करना एक दास का दास बन जाना है। ओह, भारी होता है अन्याय का बोझ।

**शमदाम:** यदि मैं अपने अन्याय का बोझ उठाने को तैयार हूँ तो इसमें तुम्हारा क्या बिगड़ता है?

**मीरदाद:** क्या कोई बीमार दाँत मुँह से कहेगा कि यदि मैं अपनी पीड़ा सहने को तैयार हूँ तो इसमें तुम्हारा क्या बिगड़ता है?

**शमदाम:** ओह, मुझे ऐसा ही रहने दो, बस ऐसा ही रहने दो। अपना भारी हाथ मुझसे दूर हटा लो, और मत मारो मुझे चाबुक अपनी चतुर जिह्वा से। मुझे अपने बाक़ी दिन वैसे ही जी लेने दो जैसे मैं अब तक परिश्रम करते हुए जीता आया हूँ। जाओ, अपनी नौका कहीं और बना लो, पर इस नौका में हस्तक्षेप न करो। तुम्हारे और मेरे लिए, तथा तुम्हारी और मेरी नौकाओं के लिये यह संसार काफ़ी बड़ा है। कल मेरा दिन है। तुम सब एक ओर खड़े रहो और मुझे अपना कार्य करने दो—क्योंकि मैं तुममें से किसी का भी हस्तक्षेप सहन नहीं करूँगा।

ध्यान रहे। शमदाम का प्रतिशोध उतना ही भयानक है जितना परमात्मा का। सावधान! सावधान!

**नरौंदा:** जब हम मुखिया के कक्ष से बाहर निकले तो मुर्शिद ने धीरे से सिर हिलाया और कहा:

**मीरदाद:** शमदाम का हृदय अभी तक शमदाम का ही हृदय है।

**नरौंदा:** अगले दिन प्रातः शमदाम बहुत प्रसन्न हुआ जब सब धार्मिक रीतियाँ अत्यन्त औपचारिकता के साथ निर्विघ्न पूरी कर ली गई; और वह क्षण आ गया जब नया दीपक भेंट किया और जलाया जाना था।

उस क्षण एक लम्बा और प्रभावशाली व्यक्ति, जो सफ़ेद वस्त्र पहने था, धक्कम धक्का करते कठिनाई से अपना रास्ता बनाते हुए वेदी की ओर आता दिखाई दिया। तत्काल दबी आवाज़ में कानों कान बात फैल गई कि यह बेसार के सुलतान का निजी दूत है जो नया दीपक लेकर आया है; और सब लोग उस बहुमूल्य निधि की झलक पाने के लिये उत्सुक हो उठे।

औरों की तरह यह मानते हुए कि वह नये वर्ष की बहुमूल्य भेंट लेकर आया है शमदाम ने बहुत नीचे तक झुककर उस दूत को प्रणाम किया। किन्तु उस व्यक्ति ने शमदाम को दबी आवाज़ से कुछ कहकर अपनी जेब से एक चर्म-पत्र निकाला और, यह स्पष्ट कर देने के बाद कि इसमें बेसार के सुलतान का सन्देश है जिसे लोगों तक खुद पहुँचाने का उसे आदेश दिया गया है, वह पत्र पढ़ने लगा:

“बेसार के भूतपूर्व सुलतान की ओर से आज के दिन नौका में एकत्रित दूधिया पर्वत-माला के अपने सब साथी मनुष्यों के लिये शान्ति-कामना और प्यार।

“नौका के प्रति गहरी श्रद्धा के आप सब प्रत्यक्ष साक्षी हैं। इस वर्ष का दीपक भेंट करने का सम्मान मुझे प्राप्त हुआ था, इसलिये मैंने बुद्धि या धन का उपयोग करने में कोई संकोच नहीं किया ताकि मेरा उपहार नौका के योग्य हो। और मेरे प्रयास पूर्णतया सफल रहे; क्योंकि मेरे वैभव और मेरे शिल्पकारों के कौशल से जो दीपक तैयार हुआ, वह सचमुच एक देखने योग्य चमत्कार था।

“लेकिन प्रभु मेरे प्रति क्षमाशील और कृपालु था, वह मेरी दरिद्रता का भेद नहीं खोलना चाहता था। क्योंकि उसने मुझे एक ऐसे दीपक के पास पहुँचा दिया जिसका प्रकाश चकाचौंध कर देता है और जिसे बुझाया नहीं जा सकता, जिसकी सुन्दरता अनुपम और निष्कलंक है। उस दीपक

को देखकर मैं इस विचार से लज्जा में डूब गया कि मैंने अपने दीपक की कभी कोई कीमत समझी थी। सो मैंने उसे कूड़े के ढेर पर फेंक दिया।

“यह वह जीवित दीपक है जिसे किसी के हाथों ने नहीं बनाया है। मैं तुम सबको हार्दिक सुझाव देता हूँ कि उसके दर्शन से अपने नेत्रों को तृप्त करो, उसी की ज्योति से अपनी मोमबत्तियों को जलाओ। देखो, वह तुम्हारी पहुँच में है। उसका नाम है **मीरदाद**।

“प्रभु करे कि तुम उसके प्रकाश के योग्य बनो।”

सन्देशवाहक ने अभी अन्तिम शब्द पढ़े ही थे कि शमदाम, जो अब तक उसके पास ही खड़ा था, अचानक ऐसे गायब हो गया जैसे कोई भूत हो। मुर्शिद का नाम उस विशाल जनसमूह में ऐसे घूम गया जैसे तेज़ हवा का झोंका किसी कुँआरे जंगल में से गुज़र जाता है। सभी उस जीवित दीपक को देखने के लिये उत्सुक हो उठे जिसका उल्लेख बेसार के सुलतान ने अपने सन्देश में इतने सम्मोहक ढंग से किया था।

शीघ्र ही मुर्शिद वेदी की सीढ़ियाँ चढ़ते और भीड़ के सामने आते दिखाई दिये। और उसी क्षण वह लहराता जनसमूह ऐसे शान्त हो गया मानो वह एक अकेला मनुष्य हो—एकाग्र, उत्सुक और सचेत। तब निस्तब्धता को भंग करते हुए मुर्शिद बोले, और उन्होंने ये शब्द कहे:



**मुर्शिद लोगों को  
आग और खून की बाढ़ से  
सावधान करते हैं,  
बचने का मार्ग बताते हैं, और  
अपनी नौका को जल में उतारते हैं**

**मीरदाद:** क्या चाहते हो तुम मीरदाद से? वेदी को सजाने के लिये सोने का रत्न-जटित दीपक? परन्तु मीरदाद न सुनार है, न जौहरी, आलोक-स्तम्भ और आश्रय वह भले ही हो।

या तुम तावीज़ चाहते हो बुरी नज़र से बचने के लिये? हाँ, तावीज़ मीरदाद के पास बहुत हैं, परन्तु किसी और ही प्रकार के।

या फिर तुम प्रकाश चाहते हो ताकि अपने-अपने पूर्व-निश्चित मार्ग पर सुरक्षित चल सको? कितनी विचित्र बात है! सूर्य है तुम्हारे पास, चन्द्र है, तारे हैं, फिर भी तुम्हें ठोकर खाने का और गिरने का डर है? तो फिर तुम्हारी आँखें तुम्हारा मार्गदर्शक बनने के योग्य नहीं हैं; या तुम्हारी आँखों के लिये प्रकाश बहुत कम है। और तुममें से ऐसा कौन है जो अपनी आँखों के बिना काम चला सके? कौन है जो सूर्य पर कृपणता का दोष लगा सके?

वह आँख किस काम की जो पैर को तो अपने मार्ग पर ठोकर खाने से बचा ले, लेकिन जब हृदय राह टटोलने का व्यर्थ प्रयास कर रहा हो तो उसे ठोकरें खाने के लिये और अपना रक्त बहाने के लिये छोड़ दे?

वह प्रकाश किस काम का जो आँख को तो ज़्यादा भर दे, लेकिन आत्मा को खाली और प्रकाशहीन छोड़ दे?

क्या चाहते हो तुम मीरदाद से ? यदि देखने की क्षमता रखनेवाला हृदय और प्रकाश में नहाई आत्मा चाहते हो और उनके लिये व्याकुल हो रहे हो, तो तुम्हारी व्याकुलता व्यर्थ नहीं है। क्योंकि मेरा सम्बन्ध मनुष्य की आत्मा और हृदय से है।

इस दिन के लिये जो गौरवपूर्ण आत्म-विजय का दिन है, तुम उपहार-स्वरूप क्या लाये हो ? बकरे, मेढ़े और बैल ? कितनी तुच्छ क्रीमत चुकाना चाहते हो तुम मुक्ति के लिये ! कितनी सस्ती होगी वह मुक्ति जिसे तुम खरीदना चाहते हो !

किसी बकरे पर विजय पा लेना मनुष्य के लिये कोई गौरव की बात नहीं। और गरीब बकरे के प्राण अपनी प्राण-रक्षा के लिये भेंट करना तो वास्तव में मनुष्य के लिये अत्यन्त लज्जा की बात है।

क्या किया है तुमने इस दिन की पवित्र भावना में योग देने के लिये, जो प्रकट विश्वास का और हर परख में सफल प्रेम का दिन है ?

हाँ, निश्चय ही तुमने तरह-तरह की रस्में निभाई हैं, और अनेक प्रार्थनाएँ दोहराई हैं। किन्तु सन्देह तुम्हारी हर क्रिया में साथ रहा है, और घृणा तुम्हारी हर प्रार्थना पर "तथास्तु" कहती रही है।

क्या तुम जल-प्रलय पर विजय का उत्सव मनाने के लिये नहीं आये हो ? पर तुम एक ऐसी विजय का उत्सव क्यों मनाते हो जिसमें तुम पराजित हो गये ? क्योंकि नूह ने अपने समुद्रों को पराजित करते समय तुम्हारे समुद्रों को पराजित नहीं किया था, केवल उन पर विजय प्राप्त करने का मार्ग बताया था। और देखो, तुम्हारे समुद्र उफ़न रहे हैं और तुम्हारे जहाज़ को डुबाने पर तुले हुए हैं। जब तक तुम अपने तूफ़ान पर विजय नहीं पा लेते, तुम आज का दिन मनाने के योग्य नहीं हो सकते।

तुममें से हरएक जल-प्रलय भी है, नौका भी और केवट भी। और जब तक वह दिन नहीं आ जाता जब तुम किसी नहाई-सँवरी कुँआरी धरती पर लंगर डाल लो, अपनी विजय का उत्सव मनाने की जल्दी न करना।

तुम जानना चाहोगे कि मनुष्य अपने ही लिये बाढ़ कैसे बन गया।

जब पवित्र प्रभु-इच्छा ने आदम को चीरकर दो कर दिया ताकि वह अपने आपको पहचाने और उस एक के साथ अपनी एकता का अनुभव कर सके, तब वह एक पुरुष और एक स्त्री बन गया—एक नर-आदम और एक मादा-आदम। तभी डूब गया वह कामनाओं की बाढ़ में जो द्वैत से उत्पन्न होती हैं—कामनाएँ इतनी बहुसंख्य, इतनी रंगबिरंगी, इतनी विशाल, इतनी कलुषित और इतनी उर्वर कि मनुष्य आज तक उनकी लहरों में बेसहारा बह रहा है। लहरें कभी उसे ऊँचाई के शिखर तक उठा देती हैं तो कभी गहराइयों तक खींच ले जाती हैं। क्योंकि जिस प्रकार उसका जोड़ा बना हुआ है, उसकी कामनाओं के भी जोड़े बने हुए हैं। और यद्यपि दो परस्पर विरोधी चीज़ें वास्तव में एक-दूसरे की पूरक होती हैं, फिर भी अज्ञानी लोगों को वे आपस में लड़ती-झगड़ती प्रतीत होती हैं और क्षण भर के युद्ध-विराम की घोषणा करने के लिये तैयार नहीं जान पड़तीं।

यही है वह बाढ़ जिससे मनुष्य को अपने अत्यन्त लम्बे, कठिन द्वैतपूर्ण जीवन में प्रतिक्षण, प्रतिदिन संघर्ष करना पड़ता है।

यही है वह बाढ़ जिसकी जोरदार बौछार हृदय से फूट निकलती है और तुम्हें अपनी प्रबल धारा में बहा ले जाती है।

यही है वह बाढ़ जिसका इन्द्रधनुष तब तक तुम्हारे आकाश को शोभित नहीं करेगा जब तक तुम्हारा आकाश तुम्हारी धरती के साथ न जुड़ जाये और दोनों एक न हो जायें।

जब से आदम ने अपने आपको हौवा में बोया है, मनुष्य बवण्डरों और बाढ़ों की फ़सलें काटते चले आ रहे हैं। जब एक प्रकार के मनोवेगों का प्रभाव अधिक हो जाता है, तब मनुष्यों के जीवन का सन्तुलन बिगड़ जाता है, और तब मनुष्य एक या दूसरी बाढ़ की लपेट में आ जाते हैं ताकि सन्तुलन पुनः स्थापित हो सके। और सन्तुलन तब तक स्थापित नहीं होगा जब तक मनुष्य अपनी सब कामनाओं को प्रेम की परात में गूँधकर उनसे दिव्य ज्ञान की रोटी पकाना नहीं सीख लेता।

नूह के समय धरती जिस बाढ़ की लपेट में आई थी, वह मानव-जाति द्वारा झेली गई पहली बाढ़ नहीं थी, और न ही अन्तिम। उसने तो



विध्वंसकारी बाढ़ों के लम्बे सिलसिले में मात्र एक ऊँचा चिह्न अंकित किया था। अग्नि और रक्त की जो बाढ़ धरती पर आनेवाली है वह निश्चय ही उस चिह्न को नीचे छोड़ देगी।

अफसोस! तुम व्यस्त हो बोझ लादने में; व्यस्त हो अपने रक्त में दुःखों से भरपूर भोगों का नशा घोलने में; व्यस्त हो कहीं न ले जानेवाले मार्गों के मान-चित्र बनाने में; व्यस्त हो अन्दर झाँकने का कष्ट किये बिना जीवन के गोदामों के पिछले अहातों से बीज चुनने में। तुम डूबोगे क्यों नहीं, मेरे लावारिस बच्चो?

तुम पैदा हुए थे ऊँची उड़ाने भरने के लिये, असीम आकाश में विचरने के लिये, ब्रह्माण्ड को अपने डैनों में समेट लेने के लिये। परन्तु तुमने अपने आपको उन परम्पराओं और विश्वासों के दरबों में बन्द कर लिया है जो तुम्हारे परो को काटते हैं, तुम्हारी दृष्टि को क्षीण करते हैं और तुम्हारी नसों को निर्जीव कर देते हैं। तुम आनेवाली बाढ़ पर विजय कैसे पाओगे, मेरे लावारिस बच्चो?

तुम प्रभु के प्रतिबिम्ब और समरूप थे, किन्तु तुमने उस समानता और समरूपता को लगभग मिटा दिया है। अपने ईश्वरीय आकार को तुमने इतना बौना कर दिया है कि अब तुम खुद उसे नहीं पहचानते। अपने दिव्य मुख-मण्डल पर तुमने कीचड़ पोत लिया है, और उस पर कितने ही मसखरे मुखौटे लगा लिये हैं।

जिस बाढ़ के द्वार तुमने स्वयं खोले हैं उसका सामना तुम कैसे करोगे, मेरे लावारिस बच्चो?

यदि तुम मीरदाद की बात पर ध्यान नहीं दोगे तो धरती तुम्हारे लिए कभी भी एक क्रब्र से अधिक कुछ नहीं होगी, न ही आकाश एक कफन से अधिक कुछ होगा। जब कि एक का निर्माण तुम्हारा पालना बनने के लिये किया गया था, दूसरे का तुम्हारा सिंहासन बनने के लिये।

मैं तुमसे फिर कहता हूँ कि तुम ही बाढ़ हो, नौका हो और केवट भी। तुम्हारे मनोवेग बाढ़ हैं। तुम्हारा शरीर नौका है। तुम्हारा विश्वास केवट है। पर सबमें व्याप्त है तुम्हारी संकल्प-शक्ति और उनके ऊपर है तुम्हारे दिव्य ज्ञान की छत्र-छाया।

यह निश्चित कर लो कि तुम्हारी नौका में पानी न रिस सके और वह समुद्र-यात्रा के योग्य हो; किन्तु इसी में अपना जीवन न गँवा देना; अन्यथा यात्रा आरम्भ करने का समय कभी नहीं आयेगा, और अन्त में तुम वहीं पड़े-पड़े अपनी नौका समेत सड़-गल कर डूब जाओगे। यह भी निश्चित कर लेना कि तुम्हारा केवट योग्य और धैर्यवान हो। पर सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण यह है कि तुम बाढ़ से स्रोतों का पता लगाना सीख लो, और उन्हें एक-एक करके सुखा देने के लिये अपनी संकल्प-शक्ति को साध लो। तब निश्चय ही बाढ़ थमेगी और अन्त में अपने आप समाप्त हो जायेगी।

जला दो हर मनोवेग को, इससे पहले कि वह तुम्हें जला दे।

किसी मनोवेग के मुख में यह देखने के लिये मत झाँको कि उसके दाँत ज़हर से भरे हैं या शहद से। मधु-मक्खी जो फूलों का अमृत इकट्ठा करती है उनका विष भी जमा कर लेती है।

न ही किसी मनोवेग के चेहरे को यह पता लगाने के लिये जाँचो कि वह सुन्दर है या कुरूप। साँप का चेहरा हौवा को परमात्मा के चेहरे से अधिक सुन्दर दिखाई दिया था।

न ही किसी मनोवेग के भार का ठीक पता लगाने के लिये उसे तराजू पर रखो। भार में मुकुट की तुलना पहाड़ से कौन करेगा? परन्तु वास्तव में मुकुट पहाड़ से कहीं अधिक भारी होता है।

और ऐसे मनोवेग भी हैं जो दिन में तो दिव्य गीत गाते हैं, परन्तु रात के काले पर्दे के पीछे क्रोध से दाँत पीसते हैं, काटते हैं और डंक मारते हैं। खुशी से फूले तथा उसके बोझ के नीचे दबे ऐसे मनोवेग भी हैं जो तेज़ी से शोक के कंकालों में बदल जाते हैं। कोमल दृष्टि तथा विनीत आचरण वाले ऐसे मनोवेग भी हैं जो अचानक भेड़ियों से भी अधिक भूखे, लकड़बग्घों से भी अधिक मक्कार बन जाते हैं। ऐसे मनोवेग भी हैं जो गुलाब से भी अधिक सुगन्ध देते हैं जब तक उन्हें छेड़ा न जाये, लेकिन उन्हें छूते और तोड़ते ही उनसे सड़े-गले मांस तथा कबरबिज्जू से भी अधिक घिनौनी दुर्गन्ध आने लगती है।



अपने मनोवेगों को अच्छे और बुरे में मत बाँटो, क्योंकि यह एक व्यर्थ का परिश्रम होगा। अच्छाई बुराई के बिना टिक नहीं सकती; और बुराई अच्छाई के अन्दर ही जड़ पकड़ सकती है।

एक ही है नेकी और बदी का वृक्ष। एक ही है उसका फल भी। तुम नेकी का स्वाद नहीं ले सकते जब तक साथ ही बदी को भी न चख लो।

जिस चूची से तुम जीवन का दूध पीते हो उसी से मृत्यु का दूध भी निकलता है। जो हाथ तुम्हें पालने में झुलाता है वही हाथ तुम्हारी क्रब्र भी खोदता है।

द्वैत की यही प्रकृति है, मेरे लावारिस बच्चो। इतने हठी और अहंकारी न हो जाना कि इसे बदलने का प्रयत्न करो। न ही ऐसी मूर्खता करना कि इसे दो आधे-आधे भागों में बाँटने का प्रयत्न करो ताकि अपनी पसन्द के आधे भाग को रख लो और दूसरे भाग को फेंक दो।

क्या तुम द्वैत के स्वामी बनना चाहते हो? तो इसे न अच्छा समझो न बुरा।

क्या जीवन और मृत्यु का दूध तुम्हारे मुँह में खट्टा नहीं हो गया है? क्या समय नहीं आ गया है कि तुम एक ऐसी चीज़ से आचमन करो जो न अच्छी है न बुरी, क्योंकि वह दोनों से श्रेष्ठ है? क्या समय नहीं आ गया है कि तुम ऐसे फल की कामना करो जो न मीठा है न कड़वा, क्योंकि वह नेकी और बदी के वृक्ष पर नहीं लगा है?

क्या तुम द्वैत के चंगुल से मुक्त होना चाहते हो? तो उसके वृक्ष को—नेकी और बदी के वृक्ष को—अपने हृदय में से उखाड़ फेंको। हाँ, उसे जड़ और शाखाओं सहित उखाड़ फेंको ताकि दिव्य जीवन का बीज, पवित्र ज्ञान का बीज जो समस्त नेकी और बदी से परे है, इसकी जगह अंकुरित और पल्लवित हो सके।

तुम कहते हो मीरदाद का सन्देश निरानन्द है। यह हमें आनेवाले कल की प्रतीक्षा के आनन्द से वंचित रखता है। यह हमें जीवन में गूँगे, उदासीन दर्शक बना देता है, जब कि हम जोशीले प्रतियोगी बनना चाहते हैं। क्योंकि बड़ी मिठास है प्रतियोगिता में, दाँव पर चाहे कुछ भी लगा हो। और मधुर है शिकार का जोखिम, शिकार चाहे एक छलावे से अधिक कुछ न हो।



जब तुम मन में इस प्रकार सोचते हो तब भूल जाते हो कि तुम्हारा मन तुम्हारा नहीं है जब तक उसकी बागडोर अच्छे और बुरे मनोवेगों के हाथ में है।

अपने मन का स्वामी बनने के लिये अपने अच्छे-बुरे सब मनोवेगों को प्रेम की एकमात्र परात में गूँध लो ताकि तुम उन्हें दिव्य ज्ञान के तन्दूर में पका सको जहाँ द्वैत प्रभु में विलीन होकर एक हो जाता है।

संसार को जो पहले ही अति दुःखी है और दुःख देना अब बन्द कर दो।

तुम उस कुँए से निर्मल जल निकालने की आशा कैसे करते हो जिसमें तुम निरन्तर हर प्रकार का कूड़ा-करकट और कीचड़ फेंकते रहते हो? किसी तालाब का जल स्वच्छ और निश्चल कैसे रहेगा यदि तुम हर क्षण उसे हलोरते रहोगे?

दुःख में डूबे संसार से शान्ति की रकम मत माँगो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हें अदायगी दुःख के रूप में हो।

घृणा में डूबे संसार से प्रेम की रकम मत माँगो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हें अदायगी घृणा के रूप में हो।

दम तोड़ रहे संसार से जीवन की रकम मत माँगो, कहीं ऐसा न हो कि तुम्हें अदायगी मृत्यु के रूप में हो। संसार अपनी मुद्रा के सिवाय और किसी मुद्रा में तुम्हें अदायगी नहीं कर सकता, और उसकी मुद्रा के दो पहलू हैं।

जो कुछ माँगना है अपने ईश्वरीय अहं से माँगो जो शान्तिपूर्ण ज्ञान से इतना समृद्ध है।

संसार से कोई ऐसी माँग मत करो जो तुम अपने आपसे नहीं करते। न ही किसी मनुष्य से कोई ऐसी माँग करो जो तुम नहीं चाहते कि वह तुमसे करे।

और वह कौन-सी वस्तु है जो यदि सम्पूर्ण संसार द्वारा तुम्हें प्रदान कर दी जाये तो तुम्हारी अपनी बाढ़ पर विजय पाने और ऐसी धरती पर पहुँचने में तुम्हारी सहायता कर सके जो दुःख और मृत्यु से नाता तोड़ चुकी है और आकाश से जुड़कर स्थायी प्रेम और ज्ञान की शान्ति प्राप्त कर चुकी

है? क्या वह वस्तु सम्पत्ति है, सत्ता है, प्रसिद्धि है? क्या वह अधिकार है, प्रतिष्ठा है, सम्मान है? क्या वह सफल हुई महत्त्वाकांक्षा है, पूर्ण हुई आशा है? किन्तु इनमें से तो हरएक केवल जल का एक स्रोत है जो तुम्हारी बाढ़ का पोषण करता है। दूर कर दो इन्हें, मेरे लावारिस बच्चो, दूर, बहुत दूर।

स्थिर रहो ताकि तुम उलझनों से मुक्त रह सको। उलझनों से मुक्त रहो ताकि तुम संसार को स्पष्ट देख सको।

जब तुम संसार के रूप को स्पष्ट देख लोगे, तब तुम्हें पता चलेगा कि जो स्वतन्त्रता, शान्ति तथा जीवन तुम उससे चाहते हो, वह सब तुम्हें देने में वह कितना असहाय और असमर्थ है।

संसार तुम्हें दे सकता है केवल एक शरीर—द्वैतपूर्ण जीवन के सागर में यात्रा के लिये एक नौका। और शरीर तुम्हें संसार के किसी व्यक्ति से नहीं मिला है। तुम्हें शरीर देना और उसे जीवित रखना ब्रह्माण्ड का कर्तव्य है। उसे तूफानों का सामना करने के लिये अच्छी हालत में, लहरों के प्रहार सहने के योग्य रखना, उतना ही सुदृढ़ और सुरक्षित रखना जितनी नूह की नौका थी; उसकी पाशविक वृत्तियों को बाँधकर नियन्त्रण में रखना, जैसे नूह ने अपनी नौका में जानवरों को बाँधकर पूर्ण नियन्त्रण में रखा था—यह तुम्हारा कर्तव्य है, केवल तुम्हारा।

आशा से दीप्त तथा पूर्णतया सजग विश्वास रखना जिसको पतवार थमाई जा सके, प्रभु-इच्छा में अटल विश्वास रखना जो अदन के आनन्दपूर्ण प्रवेश-द्वार पर पहुँचने के लिये तुम्हारा मार्गदर्शक हो—यह भी तुम्हारा काम है, केवल तुम्हारा।

निर्भय संकल्प हो, आत्म-विजय प्राप्त करने तथा दिव्य-ज्ञान के जीवन-वृक्ष का फल चखने के संकल्प को अपना केवट बनाना—यह भी तुम्हारा काम है, केवल तुम्हारा।

मनुष्य की मंजिल परमात्मा है। उससे नीचे की कोई मंजिल इस योग्य नहीं कि मनुष्य उसके लिये कष्ट उठाये। क्या हुआ यदि रास्ता लम्बा है और उस पर झंझा और झक्कड़ का राज है? क्या पवित्र हृदय तथा पैनी

दृष्टि से युक्त विश्वास झंझा को परास्त नहीं कर देगा और झक्कड़ पर विजय नहीं पा लेगा ?

जल्दी करो, क्योंकि आवारगी में बिताया समय पीड़ा-ग्रस्त समय होता है। और मनुष्य, सबसे अधिक व्यस्त मनुष्य भी, वास्तव में आवारा ही होते हैं।

नौका के निर्माता हो तुम सब, और साथ ही नाविक भी हो। यही कार्य सौंपा गया है तुम्हें अनादि काल से ताकि तुम उस असीम सागर की यात्रा करो जो तुम स्वयं हो, और उसमें खोज लो अस्तित्व के उस मूक संगीत को जिसका नाम परमात्मा है।

सभी वस्तुओं का एक केन्द्र होना ज़रूरी है जहाँ से वे फैल सकें और जिसके चारों ओर वे घूम सकें।

यदि जीवन—मनुष्य का जीवन—एक वृत्त है और परमात्मा की खोज उसका केन्द्र, तो तुम्हारे हर कार्य का केन्द्र परमात्मा की खोज ही होना चाहिये; नहीं तो तुम्हारा हर कार्य व्यर्थ होगा, चाहे वह गहरे लाल पसीने से तर-बतर ही क्यों न हो।

पर क्योंकि मनुष्य को उसकी मंज़िल तक ले जाना मीरदाद का काम है, देखो! मीरदाद ने तुम्हारे लिये एक अलौकिक नौका तैयार की है, जिसका निर्माण उत्तम है और जिसका संचालन अत्यन्त कौशलपूर्ण। यह दयार से बनी और तारकोल से पुती नहीं है; और न ही यह कौओं, छिपकलियों और लकड़बग्घों के लिये बनी है। इसका निर्माण दिव्य ज्ञान से हुआ है जो निश्चय ही उन सबके लिये आलोक-स्तम्भ होगा जो आत्म-विजय के लिये तड़पते हैं। इसका सन्तुलन-भार शराब के मटके और कोल्हू नहीं, बल्कि हर पदार्थ और हर प्राणी के प्रति प्रेम से भरपूर हृदय होंगे। न ही इसमें चल या अचल सम्पत्ति, चाँदी, सोना, रत्न आदि लदे होंगे, बल्कि इसमें होंगी अपनी परछाइयों से मुक्त हुई तथा दिव्य ज्ञान के प्रकाश और स्वतन्त्रता से सुशोभित आत्माएँ।

जो धरती के साथ अपना नाता तोड़ना चाहते हैं, जो एकत्व प्राप्त करना चाहते हैं, जो आत्म-विजय के लिये तड़प रहे हैं, वे आयें और नौका पर सवार हो जायें।



नौका तैयार है।

वायु अनुकूल है।

सागर शान्त है।

यही शिक्षा थी मेरी नूह को।

यही शिक्षा है मेरी तुम्हें।

नरौंदा: जब मुर्शिद चुप हो गये तो एकत्रित लोगों में, जो अब तक खामोश बैठे थे, एक सरसराहट फैल गई मानो जब तक मुर्शिद बोल रहे थे सब अपनी साँस रोके हुए थे।

वेदी की सीढ़ियों से उतरने से पहले मुर्शिद ने सातों साथियों को बुलाया, रबाब मँगवाया, और उनके साथ नई नौका का गीत गाने लगे। जनसमूह ने भी धुन को पकड़ लिया, और एक विशाल तरंग की तरह उसकी मधुर टेक आकाश को छूने लगी:

तैर, तैर, री नौका मेरी,

प्रभु तेरा कप्तान।

यहाँ समाप्त होता है पुस्तक का वह अंश  
जिसे संसार के लिये प्रकाशित करने की  
मुझे अनुमति है।

जहाँ तक शेष अंश का सम्बन्ध है,  
उसका समय अभी  
नहीं आया है।

मि. न.

## अन्य प्रकाशन

स्वामी जी महाराज

1. सारबचन संग्रह

2. सारबचन वार्तिक

बाबा जैमल सिंह जी महाराज

1. परमार्थी पत्र, भाग 1

महाराज सावन सिंह जी

1. परमार्थी पत्र, भाग 2

2. शब्द की महिमा के शब्द

3. प्रभात का प्रकाश

4. गुरुमत सिद्धान्त, भाग 1, 2

5. सन्तमत सिद्धान्त

6. सन्तमत प्रकाश, भाग 1 से 5

7. परमार्थी साखियाँ

8. गुरुमत सार

महाराज जगत सिंह जी

1. आत्म-ज्ञान

2. रूहानी फूल

महाराज चरन सिंह जी

1. सन्तों की बानी

2. सन्तमत दर्शन

3. सन्तमत दर्शन, भाग 2 (दिव्य प्रकाश)

4. सन्तमत दर्शन, भाग 3 (प्रकाश की खोज)

5. सन्त-संवाद

6. सन्त-वचन (सन्त-संवाद, भाग 2)

7. सन्त-मार्ग

8. जीवत मरिए भवजल तरिए

9. पारस से पारस

10. सत्संग संग्रह, भाग 1 से 6

‘पूर्व के सन्त-महात्मा’ पुस्तक-माला के अन्तर्गत

1. सन्त नामदेव

2. सन्त कबीर

3. परम पारस गुरु रविदास

4. गुरु नानक का रूहानी उपदेश

5. गुरु अर्जुन देव

6. भाई गुरदास

7. सन्त तुकाराम

8. नाम-भक्ति : गोस्वामी तुलसीदास

जनक पुरी, वीरेन्द्र कुमार सेठी

शान्ति सेठी

के. एन. उपाध्याय

जनक पुरी

महिन्दर सिंह जोशी

महिन्दर सिंह जोशी

चन्द्रावती राजवाडे

के. एन. उपाध्याय, पंचानन उपाध्याय



9. मीरा: प्रेम-दीवानी
10. सन्त दादू दयाल
11. सन्त पलटू
12. सन्त चरनदास
13. सन्त दरिया (बिहार वाले)
14. तुलसी साहिब
15. उपदेश राधास्वामी (स्वामी जी महाराज)
16. साई बुल्लेशाह
17. हजरत सुलतान बाहू
18. सरमद शहीद
19. बोलै शेख फ़रीद

### सतगुरुओं के विषय में

1. रूहानी डायरी, भाग 1 से 3
2. धरती पर स्वर्ग
3. अनमोल खज़ाना
4. मेरा सतगुरु

### सन्तमत के सम्बन्ध में

1. नाम-सिद्धान्त
2. सन्तमत विचार
3. सन्त-सन्देश
4. सन्त-समागम
5. अमृत नाम
6. अन्तर की आवाज़
7. मार्ग की खोज में
8. रामचरितमानस का सन्देश
9. हंसा हीरा मोती चुगना
10. जपुजी साहिब
11. हउ जीवा नाम धिआए
12. हक्र-हलाल की कमाई
13. जिज्ञासुओं के लिए
14. विनती और प्रार्थना के शब्द
15. अमृत वचन

वीरेन्द्र कुमार सेठी  
 के. एन. उपाध्याय  
 राजेन्द्र कुमार सेठी  
 टी. आर. शंगारी  
 के. एन. उपाध्याय  
 जनक पुरी, वीरेन्द्र कुमार सेठी  
 सहगल, शंगारी, 'खाक', भण्डारी  
 जनक पुरी, टी. आर. शंगारी  
 कृपाल सिंह 'खाक'  
 टी. आर. शंगारी, पी. एस. 'आलम'  
 टी. आर. शंगारी

राय साहिब मुंशीराम  
 दरियाईलाल कपूर  
 शान्ति सेठी  
 जूलियन पी. जॉनसन

शंगारी, 'खाक', भण्डारी, सहगल  
 टी. आर. शंगारी, कृपाल सिंह 'खाक'  
 शान्ति सेठी  
 दरियाईलाल कपूर  
 महिन्दर सिंह जोशी  
 सी. डब्ल्यू. सेंडर्स  
 फ़्लोरा ई. वुड  
 एस. एम. प्रसाद  
 टी. आर. शंगारी  
 टी. आर. शंगारी  
 हेक्टर एस्पॉण्डा डबिन  
 टी. आर. शंगारी  
 टी. आर. शंगारी  
 संकलित  
 संकलित